हिन्दी समिति ग्रन्थमाला—२२

शक्ति, वर्तमान और भविष्य

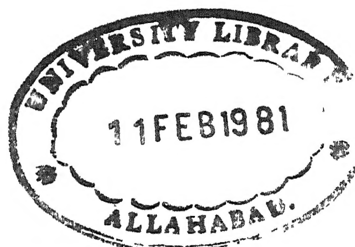
[मानवीय आवश्यकताओं के लिए ऊर्जा का उपयोग]

लेखक

फ्रैंक शेरउड टेलर एम० ए०, पी-एच० डी०

अनुवादक

सत्य प्रकाश गोयल एम० एस-सी०, जे० डी०, प्रभाकर



प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग

उत्तर प्रदेश

प्रथम संस्करण
१९५९

मूल्य
चार रुपया

मुद्रक
पं० पृथ्वीनाथ भार्गव,
भार्गव भूषण प्रेस, गायघाट, वाराणसी

प्रकाशकीय

राष्ट्रभाषा हिन्दी के साहित्य की उन्नति और उसके विविध अंगों की सम्पूर्ति में योग प्रदान करने के लिए उत्तर प्रदेश की सरकार ने जो योजना बनायी थी, उसके अनुसार हिन्दी के लेखकों की चुनी हुई उत्तमोत्तम पुस्तकों पर प्रतिवर्ष कोई ५०–६० हजार रुपये पुरस्कार स्वरूप दिये जाते हैं । इसके अतिरिक्त विविध विषयों के विद्वानो का सहयोग प्राप्त कर हिन्दी समिति के तत्त्वावधान में अनेक मौलिक तथा अनूदित ग्रन्थों का प्रणयन कराया जा चुका है और पचासों अन्य ग्रन्थों की रचना शीघ्र समाप्त हो जाने की आशा है । इस योजना के अनुसार अभी तक २६ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है तथा अन्य कितनी ही पुस्तकों के अल्पावधि में ही प्रकाशित हो जाने की संभावना है ।

"शक्ति, वर्त्तमान तथा भविष्य" हिन्दी समिति ग्रन्थमाला की बाईसवीं पुस्तक है । इसके मूल लेखक डा० शेरवुड टेलर है, जिन्होने अंग्रेजी में अनेक पुस्तकें लिखी हैं । विज्ञान के गहन तत्त्वों का भी विवेचन सरल से सरल भाषा में करना, जिससे वे सामान्य पाठकों की भी समझ में आसानी से आ जावें, यही आपकी शैली की विशेषता है । हिन्दी का यह अनुवाद सागर विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग के प्राध्यापक श्री एस० पी० गोयल का है जो स्वयं भी इस विषय के विद्वान् हैं । इन्होंने भी यथासंभव सरल और सुबोध भाषा में मूल का भाव प्रकट करने का प्रयत्न किया है । यद्यपि कतिपय पारिभाषिक शब्दों के कारण पाठकों को आरम्भ में कुछ कठिनाई का अनुभव हो सकता है किन्तु बाद में यह दूर हो जाती है और भावार्थ स्पष्ट होता जाता है ।

जैसा कि लेखक ने कहा है, उद्योगों की उन्नति के लिए शक्ति का प्राप्त होना नितान्त आवश्यक है । आदिम अवस्था में मनुष्य यह शक्ति अपने ही स्नायुओं से या घोड़े, बैल आदि के स्नायुओं से प्राप्त करता था । बाद में दासों तथा युद्ध में बन्दी बनाये गये व्यक्तियों से काम लिया जाने लगा और फिर पनचक्कियों से भी शक्ति प्राप्त की जाने लगी । आधुनिक युग में कोयला, तेल और विद्युत् के प्रयोग का प्रसार हुआ और अब नाभिकीय ऊर्जा की संभावना पर विचार होने लगा है । इस दृष्टि से

हमारे देश में कोयले की स्थिति तो उतनी असन्तोषजनक नहीं है किन्तु तेल के एवं जलविद्युत् के उत्पादन में हम अब भी बहुत पिछड़े हुए है, यद्यपि इस दिशा मे भी अब, स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद से, हमने अधिक तेजी से प्रयत्न करना आरम्भ कर दिया है ।

परमाणु शक्ति के क्षेत्र मे अन्वेषण और विविध व्यावहारिक उपयोगों के सम्बन्ध मे भी भारत बहुत पीछे नही है । संसार के पहले छः राष्ट्रों में उसका क्रम आता है । बम्बई के पास ट्राम्वे में जो परमाणु शक्ति का केन्द्र है, उसका काम काफी आगे बढ़ चुका है ।

पुस्तक में उद्योगों के लिए, और घरेलू उपयोग के लिए भी, शक्ति-प्राप्ति के विविध स्रोतों का सम्यक् विवेचन किया गया है जिससे आज की आवश्यकताओं तथा समस्याओं का दिग्दर्शन हो जाता है । लेखक ने ठीक ही कहा है कि हमारा अन्तिम प्रश्न निरन्तर यही रहना चाहिए कि "हलके परमाणुओं की नाभिकीयों से क्या किया जा सकता है ?" आपने जो यह आशा व्यक्त की है कि इसका उत्तर आनेवाले दशाब्द में अधिक स्पष्ट हो जायगा, उसके शीघ्र पूर्ण होने की सम्भावना भी दिखाई देने लगी है । जिस समय पुस्तक लिखी गयी थी, राकेट का अभियान २५० मील की ऊँचाई तक ही सफल हो सका था, पर आज उसके लगभग २॥ लाख मील अर्थात् चन्द्रमा से भी आगे बढ़ जाने का स्वप्न पूरा हो गया । आशा है, शक्ति के सम्बन्ध में वर्त्तमान तथा भावी स्थिति समझने में हमारे इस प्रकाशन से पाठकों को यथेष्ट सहायता मिलेगी ।

भगवतीशरण सिंह

सचिव, हिन्दी समिति

प्राक्कथन

यदि कोई एकमात्र सत्त्व ऐसा है जिससे सारे भौतिक संसार की रचना हुई है, तो वह सत्त्व ऊर्जा है। इसका अधिकांश द्रव्य से संयोजित रहता है और अपेक्षया अनधिगम्य है; इसका अवशष पूरे विश्व को अविरत प्रवाह में रखता है और मनुष्य के दैनिक कार्य का किया जाना सम्भव बनाता है। ईधन और शक्ति वे साधन हैं जिनके द्वारा मनुष्य अपने और अपने पशुओं के स्नायुओ से प्राप्त होनेवाली ऊर्जा से अधिक ऊर्जा पर अधिकार स्थापित करता है; अत. मनुष्य की भौतिक सफलता उसके ईधन के प्रदाय (सप्लाई) और शक्ति के दूसरे साधनो के अनुपात में होती है। इसी प्रदाय से मानवीय सभ्यता की विशेषता निर्धारित होती है और इसलिए शिक्षित मनुष्य के लिए उन साधनों के साधारण सिद्धान्तों का समझना आवश्यक है जिनसे मनुष्य ऊर्जाकी प्राप्ति और उसका उपयोग करता है। एक शिक्षित मनुष्य को, जो वैज्ञानिक नहीं है, इस विषय के बारे में जितना ज्ञान होना चाहिए, उसे प्रस्तुत करना इस पुस्तक का उद्देश्य है।

इंधन और शक्ति के आपरीक्षण में कुछ आँकड़े आवश्यक रूप से सम्मिलित रहते है। जिस सूचना की आवश्यकता होती है वह कभी अप्राप्य रहती है, कभी अनिश्चित; कभी बहुत ही संकीर्ण रूप में उपस्थित की जाती है, और जितना सम्भव हो सके इस पुस्तक को उतना सरल और स्पष्ट बनाने के लिए, इसमें दिये गये आँकड़ों की वैधता का वाद-विवाद छोड़ देना पड़ा है। लेखक का विश्वास है कि इससे कोई गलत धारणा न उत्पन्न होगी किन्तु वह यह आशा भी करता है कि इसे प्रमाण के रूप में उद्धृत भी न किया जायेगा।

मैं साउथ कैन्सिंगटन साइंस लायब्रेरी के कर्मचारियों के प्रति आभारी हूँ जिन्होने मुझे बहुत सहायता दी है। ईधन और शक्ति मंत्रालय के कर्मचारियो के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ जिन्होंने कृपापूर्वक पांडुलिपि को पढ़ा है किन्तु उसमें आये किसी भी कथन या मत के लिए वे उत्तरदायी नही ठहराये जा सकते। विज्ञान सग्रहालय के, और लोक-निकायों तथा समवायों, विशेषकर नेशनल कोयला बोर्ड, बोर्ड ना मोना, शैल पेट्रोलियम कम्पनी और आगा हीट लिमिटेड, के बहुत से कर्मचारियों की कृपापूर्वक प्रदत्त सहायता का भी मै स्वीकरण करना चाहता हूँ।

लेखक

पाठकों से

श्री फ्रैंक शेरउड टेलर की पुस्तक 'पावर टुडे एण्ड टुमारो' (Power To-day and Tomorrow) का हिन्दी में अनुवाद करते हुए मुझे एक संतोष-सा हो रहा है। जहाँ तक बन सका, प्रयत्न किया गया है कि श्री टेलर की लेखन-शैली और विचारों को ज्यों का त्यों हिन्दी में प्रस्तुत किया जाये। अनुवाद-कार्य सरल नहीं है, यह अनुवाद करने पर ही जाना जा सकता है; क्योंकि अनुवादक को, भाषा का परिवर्तन होते हुए भी, शैली और विचारों में मूल लेखक का अनुसरण करना पड़ता है। अनुवाद-कार्य में अनुवादक को अपनापन, अपनी छाया और छाप को मिटा देना पड़ता है। जब भाषा मे वैज्ञानिक शब्दों की कमी होती है तो वैज्ञानिक पुस्तकों का अनुवाद और भी कठिन हो जाता है। आज हिन्दी में हर प्रकार की पुस्तकों का अनुवाद हो रहा है तथा मूल पुस्तकें लिखी जा रही है। ऐसा होना आवश्यक भी है यदि हम हिन्दी को वास्तव में प्रत्येक प्रकार के विचार व्यक्त करने का माध्यम बनाना चाहते है। स्वतंत्रता के पश्चात् हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनने का जो गौरवपूर्ण पद मिला है, यह भाषा प्रत्येक रूप से उसकी अधिकारिणी है, यह सिद्ध करना हिन्दी के प्रत्येक लेखक का कर्त्तव्य है।

आज का युग विज्ञान का युग है। विज्ञान ने मनुष्य के रहन-सहन के ढंग को बिलकुल ही बदल दिया है। पाश्चात्य देशों का औद्योगिकीकरण और उनकी महान् प्रगति, विज्ञान के ही कारण सम्भव हो सकी है। भारतवर्ष में भी आज प्रगति करने की होड़-सी लगी है। स्पष्ट है कि यह प्रगति विज्ञान और विज्ञान से उत्पादित मशीनों का उपयोग करने से ही हो सकती हैं। किन्तु इतना ही काफी नही है। जब तक भारत के रहनेवाले अंधविश्वास, रूढ़िवाद और परम्परा इत्यादि को छोड़कर वैज्ञानिक विचारों को नही अपनाते, उस समय तक हमारा यह महान् देश आगे नहीं बढ़ सकता। भारतीय जन-साधारण तक विज्ञान को पहुँचाना एक महान् और पुण्य कार्य है। अतः आवश्यक हो जाता है कि हिन्दी और दूसरी प्रादेशिक भाषाओं में वैज्ञानिक पुस्तकें लिखी जायें तथा दूसरी भाषाओं से उनका अनुवाद किया जाये। इस पुस्तक के

अनुवादक का यह दृढ़ विश्वास है और इसी विश्वास के साथ उसने यह अनुवाद कार्य पूरा किया है। अनुवाद में त्रुटियाँ हो सकती है, भाषा भी अटपटी हो सकती है, किन्तु बराबर प्रयत्न किया गया है कि भाषा सरल रहे जिससे इस पुस्तक की पहुँच अधिक से अधिक मनुष्यो तक हो सके। जहाँ नये या कठिन शब्दो का उपयोग किया गया है, वहाँ पृष्ठ के निचले भाग में उनके तुलनात्मक अंग्रेजी शब्द दे दिये गये हैं।

उत्तर प्रदेश सरकार हिन्दी में वैज्ञानिक पुस्तके लिखवाने तथा उनका अनुवाद करवाने के लिए जो कार्य कर रही है वह बहुत ही उचित, सामयिक तथा प्रशंसनीय है और उसी के अन्तर्गत इस पुस्तक का अनुवाद किया गया है। अनुवाद-कार्य करने मे डा० रामप्रसाद त्रिपाठी, भूतपूर्व उपकुलपति, सागर विश्वविद्यालय, से जो प्रेरणा मुझे मिली है उसे सम्भवतः व्यक्त भी नहीं किया जा सकता, न ही उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए मेरे पास शब्द है। डा० निहालकरण सेठी, भूतपूर्व आचार्य आगरा कालेज आगरा, के प्रति भी मै आभारी हूँ जिन्होने यह कार्य पूरा करने में मेरा उत्साह बढ़ाया है। श्री महावीरप्रसाद श्रीवास्तव, रीडर भौतिकी विभाग सागर विश्वविद्यालय, के साथ इस पुस्तक के सम्बन्ध में मेरा जो विचार-विमर्श हुआ है और उन्होने जो सुझाव मुझे दिये हैं वे बहुत ही लाभदायक और महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए है। उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट किये बिना अनुवादक को संतोष नहीं मिल सकता।

सत्यप्रकाश गोयल

विषय-सूची

चित्रों की सूची

शक्ति, वर्तमान और भविष्य

अध्याय १

ऊर्जा[1] के स्रोत[2]

ऊर्जा की आवश्यकता

मनुष्य का अधिक समय और ध्यान घूमने-फिरने तथा अपने चारों ओर की वस्तुओं का रूप परिवर्तित करने में व्यतीत होता है। इसमें अवश्य ही ऊर्जा का रूपान्तर होता है, अतः किसी-न-किसी रूप मे इसकी पूर्ति मानवीय अस्तित्व की एक शर्त है। मनुष्य अपने संसार पर जितना अधिक प्रभाव डालने का प्रयत्न करता है, उसे उतनी ही अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। आदिम मनुष्य अपने शरीर में भोज्य पदार्थों को भस्म कर और चौथाई अश्व-शक्ति[3] का उत्पादन कर, जिससे मानवीय-इजन निरन्तर उद्योग कर सके, कदाचित् संतुष्ट हो सकते है ; किन्तु यदि वे अधिक कार्य करना चाहे, तो निश्चय ही उन्हें अधिक ऊर्जा मिलनी चाहिए। जिस ऊर्जा से प्रत्येक मनुष्य कार्य कर सकता है, उसकी वृद्धि ही आधुनिक विश्व का इतिहास है। इस ऊर्जा में आदिम मनुष्य के स्नायुओं की चौथाई अश्व-शक्ति से आज बीसवीं शताब्दी के अमेरिकन की २०० अश्व-शक्ति तक वृद्धि हुई है।

एक लारी लंदन से मानचेस्टर तक चलायी जाती है; द्रव्य[4] के भार को घर्षण[5] के विरोधी बलों के विपरीत ले जाने के लिए वायु और पेट्रोल की रासायनिक[6] ऊर्जा का उपयोग इस प्रक्रम[7] का मूल तत्त्व है। इसमें ऊर्जा का नाश नहीं होता (यह कभी हो ही नही सकता), किन्तु वायु और सड़क की थोड़ी-सी बढ़ी हुई उष्मा[8] के रूप मे यह ऊर्जा निम्न श्रेणी में परिवर्तित हो जाती है अर्थात् ऐसा रूप ग्रहण कर लेती है कि फिर कभी भी मनुष्य द्वारा इसका उपयोग नहीं किया जा सकता।

एक वात-भ्राष्ट्र[9] में लोहे का एक टन अयस्क[10] कोयले से प्रद्रावित[11] और लोहे में परिवर्तित किया जाता है। वास्तव में यहाँ रासायनिक प्रतिक्रिया[12] द्वारा

1. Energy 2. Sources 3. Horse-power 4. Matter
5. Friction 6. Chemical 7. Process 8. Warmth
9. Blast-furnace 10. Ore 11. Smelted 12. Reaction

ऊर्जा का व्यय नही, वरन् उत्पादन होता है; फिर भी कोयले और अयस्क के गर्तखनन[1] के सारे प्रक्रम–उन्हें भ्राष्ट्र तक लाने, वायु का अनुवेधन[2] करने और उत्पादित पदार्थों को वहाँ से ले जाने–मे कार्बन और लोह-आक्साइड[3] की प्रतिक्रिया से प्राप्त होने-वाली ऊर्जा की अपेक्षा बहुत अधिक ऊर्जा का उपयोग होता है। यही कारण है कि लोहा बनाने के लिए ऊर्जा का उपयोग करना पड़ता है।

वास्तव में मनुष्य के प्रत्येक उद्योग में यही होता है। यदि इसके बृहत् रूप में इस पर विचार किया जाये तो यह स्पष्ट हो जाता है कि ऊर्जा के प्रदाय[4] के बिना कोई कार्य नहीं किया जा सकता। मनुष्य के उपयोग में आनेवाली ऊर्जा के स्रोतों का निरीक्षण करना ही इस पुस्तक का उद्देश्य है।

उपयोगी ऊर्जा के स्रोत

हमारे चारों ओर के द्रव्य––भूपटल[5], वायु और महासागर––में जिनका ताप[6], ताप के परम शून्य[7] से लगभग २८५° से० ऊपर है, उष्मोर्जा[8] की संगृहीत विशाल राशि प्रायः अनुपयोगी है। वास्तव में यह परमाणुओं[9] और अणुओं[10] की तीव्र गति की ऊर्जा है और इसका उपयोग केवल तभी किया जा सकता है जब कि इन कणो[11] की गति को धीमा किया जा सके, अर्थात् हमारे विषय से संबंधित द्रव्य को ठंडा किया जा सके। परन्तु वास्तव मे इनसे ठडा हमारे पास कुछ भी नहीं है जिसमें यह ऊर्जा स्थानांतरित की जा सके और यही कारण है कि हम इसका उपयोग नहीं कर सकते। केवल उस ऊर्जा को उपयोग में लाया जा सकता है जिसमें हमें उष्मा मिल सके या निम्न-श्रेणी की बनाकर किसी इजन मे जिसका उपयोग किया जा सके। यहाँ इंजन शब्द का उपयोग इसके अधिक से अधिक विस्तृत अर्थ मे किया जा रहा है।

मनुष्य को प्राप्य ऊर्जा के प्राथमिक स्रोत केवल तीन हैं। पहिला स्रोत उन वस्तुओं की उष्मा है, जो हमारे चारों ओर की वस्तुओं से अधिक गर्म है; ये है सूर्य और पृथ्वी का भीतरी भाग। दूसरा स्रोत सूर्य, चन्द्रमा और पृथ्वी की आपेक्षिक[12] गति की यात्रिक[13] ऊर्जा है। तीसरा स्रोत द्रव्य का ऊर्जा में परिवर्तन है जो कि नाभिकीय[14] भौतिकी[15] के द्वारा सम्भव हो सका है। ये सब स्रोत परिमाण में इतने विशाल हैं

1. Winning 2. Injecting 3. Oxide of iron 4. Supply
5. Earth's crust 6. Temperature 7. Absolute zero 8. Heat energy
9. Atoms 10. Molecules 11. Particles. 12. Relative
13. Mechanical 14. Nuclear 15. Physics

कि इनकी तुलना में मनुष्य द्वारा होनेवाला ऊर्जा का वार्षिक व्यय अत्यल्प है। मनुष्य के भविष्य में दृष्टिगोचर होनेवाली किसी भी आवश्यकता के लिहाज से ये स्रोत अनंत हैं—परन्तु इनसे ऊर्जा प्राप्त करना सरल नही है। ऊर्जा की अनुपातत: अधिक मात्रा का व्यय किये बिना ही मनुष्य उसे प्राप्त करना चाहता है और यही कारण है कि वह इसकी वहाँ खोज करता है, जहाँ अधिक-से-अधिक सरलतापूर्वक इसका उपयोग किया जा सके।

फलत: वर्तमान समय तक मनुष्य ने जितनी ऊर्जा का उपयोग किया है उसकी प्राय: संपूर्ण मात्रा उसने दो प्राकृतिक प्रक्रमों[1] द्वारा प्राप्त की है जो सूर्य की विकिरण[2] ऊर्जा को पाश में बाँधकर उसे सरलतापूर्वक कार्य में परिणत होनेवाले रूप मे परिवर्तित करते है। ये प्रक्रम है —



चित्र नं० १—मनुष्य की ऊर्जा-प्राप्ति के स्रोत (१९५२)

(१) प्रकाश-संश्लेषण[1] अर्थात् हरे पौधो द्वारा कार्बन-डाइ-ऑक्साइड और पानी को शर्करा[2] तथा कार्बन के दूसरे यौगिको[3] में परिवर्तित करने के लिए सूर्य के प्रकाश की ऊर्जा का उपयोग। हमारे सब इंधनों का स्रोत यही है।

(२) सूर्य की उष्मा द्वारा जल का वाष्पण और इसी साधन द्वारा वाष्प का बहुत ऊँचाई तक उठना। इस प्रकार वाष्प को स्थितिज[4] ऊर्जा मिलती है जो इसके वर्षा में सघनित होने के पश्चात् मुक्त हो जाती है और जिसे फिर से उस समय एकत्र किया जा सकता है जब कि गुरुत्वाकर्षण[5] के कारण वर्षा का जल समुद्र को लौटता है। यह प्रक्रम हमारी पूर्ण जल-शक्ति का स्रोत है।

पहिला स्रोत ही ऊर्जा का अधिक महत्त्वपूर्ण स्रोत है।

प्रकाश-संश्लेषण द्वारा ऊर्जा को अधीन करना

हम अभी तक जीवन के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रक्रमो में से किसी की भी अच्छी जानकारी नही प्राप्त कर सके है और प्रकाश-सश्लेषण, जिस पर समस्त जीवन निर्भर करता है, बहुत गवेषणा[6] के पश्चात् भी अभी तक अस्पष्ट ही बना हुआ है। फिर भी हम किसी ऐसे कारण को नही जानते जिससे यह कहा जाये कि प्रकाश-संश्लेषण की कभी भी व्याख्या न हो सकेगी, और इस प्रक्रम की प्रक्रिया[7] के ज्ञात हो जाने से कारखानों में इसे तैयार करना कदाचित् उसी प्रकार संभव हो सकेगा जिस प्रकार यह पौधों में होती है।

कल्पना को छोड़कर, वास्तविकता पर विचार कीजिए। संसृष्टि[8] के जिस वर्ग को हम हरे पौधे कहते है उसकी कुछ कोशिकाओ[9] में कुछ छोटे तत्त्व होते है जिन्हें हरितकणक[10] कहते है। इनमें हरे यौगिक होते है जो पर्णहरित[11] के नाम से काफी प्रसिद्ध है। जल और कार्बन-डाइ-आक्साइड पर इनका अकेले कोई प्रभाव नहीं होता, किन्तु हरितकणक और उस कोशिका में, जिसका कि यह (हरितकणक) कार्य करता हुआ एक अंग है, अतरभूत अणुओं (पर्णहरित, प्रोटीन इत्यादि) की अज्ञात और निस्सन्देह बहुत ही जटिल पद्धति द्वारा वह मौलिक रासायनिक परिवर्तन सिद्ध होता है जो जीवन को संभव बनाता है। निस्सन्देह यह परिवर्तन कई अवस्थाओं में घटित होता है किन्तु अन्तिम प्रभाव यह होता है कि जल के ३६ पौण्ड और

1. Photosynthesis 2. Sugar 3. Compounds 4. Potential
5. Gravitation. 6. Research 7. Mechanism 8. Organisms
9. Cells 10. Chloroplast 11. Chlorophyll.

कार्बन-डाइ-आक्साइड के ८८ पौण्ड प्रकाश की ऊर्जा* के लगभग ८४ अश्व-शक्ति घंटे अवशोषित कर लेते हैं और आक्सिजन गैस के ६४ पौण्ड और साथ-ही-साथ द्राक्ष-शर्करा[1] के ६० पौण्ड का उत्पादन करते है। इस द्राक्ष-शर्करा में सूर्य के प्रकाश की ऊर्जा संगृहीत रहती है। पौधा द्राक्ष-शर्करा को इक्षु-शर्करा[4], स्टार्च, सेलूलोज, तैल, मोम, प्रोटीन इत्यादि में परिवर्तित कर सकता है। परन्तु यह ऊर्जा कुछ बढी या घटी हुई मात्रा में उत्पादित पदार्थ में बनी रहती है। जब द्राक्ष-शर्करा (या इससे उत्पादित पदार्थ) आक्सीकरण[5] द्वारा कार्बन-डाइ-आक्साइड और जल में पुनः परिवर्तित होती है तो प्रकाश द्वारा मिलनेवाली यह ऊर्जा, उष्मा या कार्य के रूप में या किसी और प्रकार से व्यक्त होती है।

यही ईंधन की कहानी है। पौधा इसका निर्माण करता है और इसे तोड़कर हम इसे इसकी पूर्व दशा में पहुंचा देते है और इससे निकलनेवाली ऊर्जा का उपयोग करते हैं। हम पौधे को खा सकते है जिससे द्राक्ष-शर्करा को हम अपने स्नायुओ में जला सकें और इसकी ऊर्जा को उष्मा और कार्य में परिवर्तित कर सकें; जिस लकड़ी के रूप में पौधे ने द्राक्ष-शर्करा को परिवर्तित किया था, हम उसे जला सकते हैं और उससे अपने कमरों को गर्म कर सकते है या एक इंजन चला सकते है। हम कोयला जला सकते है जो कि ६ करोड़ वर्ष पूर्व जीवित पौधों के रूप में था; हम तैल जला सकते हैं जिसका निर्माण प्राचीन काल में अणुवीक्षणीय[6] पौधों पर निर्वाह करनेवाले छोटे-छोटे समुद्री जन्तुओं द्वारा हुआ था—सिद्धान्त वही है, यद्यपि प्रक्रम की विधि और अर्थ-व्यवस्था कदाचित् भिन्न हो सकती है।

पूँजी या आय ?

संसार का अधिक भाग हरे पौधों से आच्छादित है। थल पर वे केवल वहीं नही देख पड़ते जहाँ जल की न्यूनता है या ताप बहुत ही कम है। इसी प्रकार समुद्री

*यह ऊर्जा की वह मात्रा है जो वास्तविक रासायनिक परिवतन में व्यय होती है किन्तु जिस जिस खेत में पौधे उगाये जाते है उसपर विकरित होने वाली सौर[2]--ऊर्जा का यह केवल $\frac{१}{३००}$ से $\frac{१}{५०}$ तक है। उस ऊर्जा का ९८ प्रतिशत से अधिक भाग परावर्तित[3] या उष्मा में परिवर्तित हो जाता है और पुनः विकरित होता है या नमी को वाष्प में परिवर्तित करने में व्यय होता है। अतः कृषि द्वारा सौर--ऊर्जा को उपयोग में लाने का तरीका बहुत ही निरुपयोगी है।

1. Sugar-glucose 2. Solar 3. Reflected. 4. Sucrose 5. Oxidation 6. Microscopic.

घास के अतिरिक्त, महासागर मे क्षुद्र एक-कोशीय[1] हरे पौधों का आश्चर्यजनक बाहुल्य है जो इसके निवासियो के भोजन का अतिम साधन है।

जिस इंधन को मनुष्य स्वयं अपने शरीर में जला सके और जिस पदार्थ से वह इसकी हानि की पूर्ति कर सके, वह मनुष्य की प्रथम आवश्यकता है। यह पौधो और पशुओं के कुछ ऊतकों[2] एव स्राव[3] से मिलता है; हम इसे भोजन या आहार कहते है। प्रत्येक आहार एक इंधन है, किन्तु महगा होने के कारण ऊर्जा का उत्पादन करने के लिए, मानव शरीर के अतिरिक्त, अन्यत्र इसका उपयोग नही किया जाता। पौधों के दूसरे प्रकार के ऊतक मनुष्य पशुओ को खिलाता है ताकि वह उन्हें खा सके या अपने लिए कार्य करने के हेतु मशीन की भाँति उनका उपयोग कर सके। पौधो के और दूसरे प्रकार के ऊतकों से उपयोग में आनेवाले पदार्थ बनाये जाते है—इमारती लकड़ी, वस्त्र-तन्तु[4] और रबड़ उदाहरण के रूप मे दिये जा सकते है। अत मे कोई भी वनस्पति-पदार्थ जिसका अधिक महत्त्वपूर्ण उपयोग नही हो सकता, इधन के रूप में जलाया जा सकता है।

नाना प्रकार के वनस्पति-पदार्थ इस भाँति मनुष्य के उपयोग मे लाये जा चुके है और लाये जाते है पर वास्तविक महत्त्व का ऐसा एकमात्र पदार्थ जलावन की लकड़ी है। सोलहवी शताब्दी तक यह सामान्य घरेलू और औद्योगिक ईधन था, परन्तु जैसे-जैसे जनसख्या बढ़ी और रहने का स्तर ऊँचा होता गया, धातु-शोधकों[5], काँच बनानेवालों और कुम्हारों की माँग की पूर्ति अधिक समय तक करना सभव न हो सका। अतः लकडी की कमी के कारण कोयले का प्रयोग बढ़ने लगा। लकड़ी का महत्त्व क्रमश. कम होता गया, यहाँ तक कि आज विश्व की उष्मा और शक्ति की आवश्यकता के तीसवें भाग से भी कम की पूर्ति इससे होती है। आज केवल विशेष परिस्थितियो में ही लकड़ी इंधन के रूप में कोयले या तैल से प्रतिस्पर्धा कर सकती है।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि अब इंधन के लिए मनुष्य सूर्य की ऊर्जा द्वारा उत्पादित नये वनस्पति-ऊतकों की वार्षिक आय पर निर्भर नही करता; क्योंकि उसे सौर-ऊर्जा के उस बहुत बड़े संग्रह को व्यय करना प्रारम्भ करना पड़ा है जो उसे तैल और कोयले के रूप में वसीयत में मिला है।

1. Single-celled
2. Tissues
3. Secretion
4. Textile fibre
5. Metallurgist

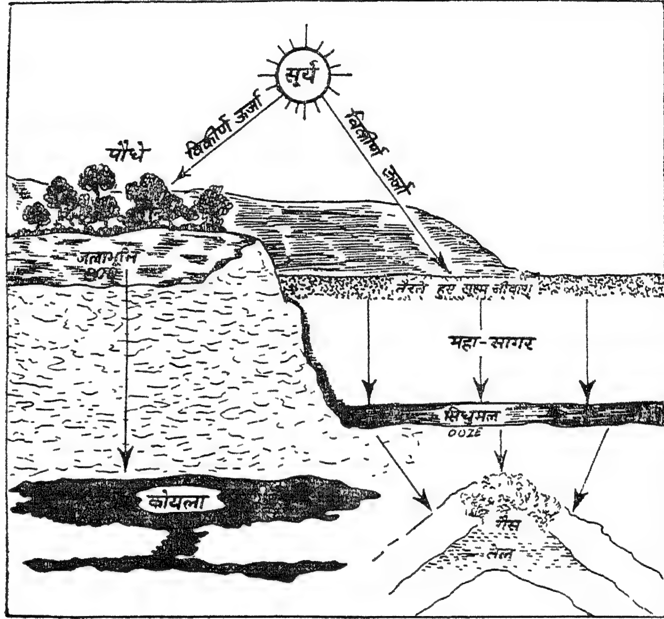
कोयले का सर्जन[1]

इसमें कोई संदेह नही कि सभी प्रकार का कोयला वनस्पति-द्रव्य में होनेवाले मन्द परिवर्तनो से बना है यद्यपि इसके उद्भव और इसका रूपान्तर करनेवाली परिस्थितियों के विषय में कुछ कम विवाद नही है। हमें वस्तुओं की ऐसी अवस्था मान लेनी पड़ती है जिसमे वनस्पति को उसके सामान्यतया पूर्ण नष्ट होने से अंशतः बचा लिया गया और इस प्रकार उसका संचय हो सका। आधुनिक पीट-जल भूमि[2] की भी ऐसी ही अवस्था है। जब तल के ऊपर की वनस्पति नष्ट होने लगती है, तो वह उस जल द्वारा अंशतः बचा ली जाती है, जिसमें विच्छेदन[3] से उत्पादित पदार्थो के **धरणिक[4]-अम्ल** मिले रहते हैं। यदि भूमि की सतह धीरे-धीरे कम होती जा रही हो, तो यह प्रक्रम निरन्तर हजारों वर्ष तक चलता रह सकता है और इसका परिणाम पीट का एक स्तर[5] होता है जो कुछ अवस्थाओ मे ३० फुट तक मोटा होता है। जैसा कि हम जानते हैं, कोयले का निर्माण पीट से नही, बल्कि ऐसी वनस्पतियों द्वारा हुआ जो पीट का निर्माण करनेवाली वनस्पतियों से भिन्न थी, यद्यपि इन्हींकी तरह वे भी जल द्वारा विनष्ट होने से बचायी गयी थीं। मान लीजिए कि वनस्पति का इस प्रकार का एक स्तर जल द्वारा लाये गये पल्लल[6] और दूसरे पदार्थो से ढका रहता है और लम्बे समय के लिए पृथ्वी की वायु-रहित गहराइयों में धीमी उष्मा और दबाव के प्रभाव में बना रहता है; तब यह क्रमशः भूरे[7] कोयले, खनिजांगार[8] में परिवर्तित होता हुआ बिटुमिनी[9] कोयले और संभवतः अंथ्रेसाइट[10] में रूपान्तरित हो जायगा।

यही कोयले का बहुमान्य इतिहास है, परन्तु यह स्पष्ट है कि कोयले के कुछ स्तरो का निर्माण जलभूमि से नहीं हुआ बल्कि वनस्पति के उस विशाल संग्रह से हुआ जो प्राचीन नदियों द्वारा बहाकर लाया गया और उनके डेल्टों में एकत्र होता गया। इसके अतिरिक्त लिग्नाइट, कोयला और अंथ्रेसाइट में पीट के कल्पित क्रमिक रूपान्तरों के विषय में भी अभी बहुत-सी बातें जानने को शेष हैं। कुछ प्रकार के लिग्नाइट कुछ प्रकार के अंथ्रेसाइट की अपेक्षा अधिक प्राचीन है, अतः यदि एक प्रक्रम पहिले को दूसरे में परिवर्तित करता है, तो यह मानना पड़ेगा कि यह प्रक्रम सदा कार्य नहीं करता।

1. Formation 2. Peat-bog 3. Decomposition 4. Humic acid. 5. Bed
6. Alluvium 7. Brown 8. Lignite 9. Bituminous 10. Anthrasite

यह सब कह चुकने के पश्चात्, यह निश्चित है कि सभी प्रकार के कोयले का निर्माण उन वनस्पतियों से हुआ जो कि पृथ्वी के इतिहास के युगों में दस लाख से दस करोड़ या इससे भी अधिक वर्षो पूर्व पैदा हुई थीं। हमारे उद्देश्य के लिए यह पुराव-



चित्र नं० २—सौर ऊर्जा का ईंधन में रूपान्तर

शेषीभूत[1] प्रकाश समझा जा सकता है जिसकी ऊर्जा को हम पुनः प्राप्त कर सकते हैं। यह संग्रह विश्व के लिए कितने समय तक विद्यमान रह सकेगा ? इसका उत्तर अत्यन्त अनिश्चित है। परन्तु यदि कोयले और लिग्नाइट की खपत नहीं बढ़ती, तो खनिक[2] की सीमा के भीतर (मान लीजिए ४५०० फुट*) जिन अवक्षेपों[3] के अस्तित्व का विश्वास किया जाता है, वे विश्व की ४००० वर्ष की आवश्यकता के लिए पर्याप्त होंगे, ऐसा माना जाता है। इन अनुमानों के सम्बन्ध में संदेह प्रकट किया गया

1. Fossilized 2. Miner

* अपेक्षया नये निमज्जनों में से कुछ ६००० फुट नीचे तक जा रहे है ; खानों की गहराई की वृद्धि निश्चय ही विश्व के संसाधनो को बढ़ाती है।

3. Deposits

है और कुछ लोग ४००० वर्षो को घटाकर १००० वर्ष करना चाहते है। यदि यह कम अनुमान ही स्वीकार किया जाये, तो भी ऐसा प्रतीत होगा कि विश्वको कोयले के समाप्त होने के सम्बन्ध में फिक्र करने की अपेक्षा अधिक आवश्यक विषयों पर ध्यान देना चाहिए। कोयले की वर्तमान कमी इसकी न्यूनता के कारण नहीं वरन् राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक कारणो से है। हम केवल कोयला ही नहीं खोजते वरन् बिक जाने योग्य कोयला खोजते है और इसीलिए इसे ऐसे साधनो द्वारा प्राप्त करने में शीघ्रता नही की जा सकती जिनमे इतने श्रम और कार्य की आवश्यकता पड़े कि इसका और दूसरी उन सब वस्तुओं और कार्यो का जिनमे इसका उपयोग होता है, व्यय अत्यधिक बढ़ जाये।

कोयला उष्मा और शक्ति का विश्व का प्रमुख साधन है जिनका आधे से अधिक अंश इसीसे मिलता है; इसलिए यह इस पुस्तक का प्रमुख विषय रहेगा। इसका एकमात्र महत्त्वपूर्ण प्रतिस्पर्धी पेट्रोलियम है।

पेट्रोलियम का निर्माण

पेट्रोलियम (भूतैल) का उद्भव कोयले की अपेक्षा अधिक अंधकार में है। इसका वर्तमान सिद्धान्त, जिसकी रूपरेखा पर विशेष आपत्ति नहीं की जाती, यह है कि यह प्राचीन समुद्रों या झीलो के स्रावो[1] और काले पंक[2] से व्युत्पन्न हुआ है। इनमें असंख्य छोटे-छोटे जीवों और पौधों से व्युत्पन्न कार्बनिक द्रव्य[3] था।

सूर्य के प्रकाश ने छोटे हरे जीवाणुओं[4] को शर्करा, स्टार्च इत्यादि का सश्लेषण करने के योग्य बना दिया; ये जीवाणु अन्य प्रकार के जीवाणुओं का आहार थे जो स्वयं भी अपनी बारी मे दूसरे जीवाणुओ का आहार बने। अन्त में पेदी के स्राव में उनके अवशेष नष्ट होने से बचे रह गये जो अन्तमें कठोर होकर चट्टान बन गये। भूपटल के संचालन द्वारा ये चट्टानें नीचे गहराई में ले जायी गयी और उन पर उष्मा और बहुत अधिक दबाव का प्रभाव पड़ा। कार्बनिक द्रव्य तैल या गैस मे विच्छेदित हुआ जो तरल होने के कारण अभेद्य चट्टानो से आच्छादित सरध्र[5] बालुकामय स्तरों में संचित होकर छिद्रकों[6] द्वारा निकाले जाने की प्रतीक्षा करने लगा। यह प्रायः अविश्वसनीय-सा लगता है कि वहाँ जीवाणुओं की इतनी अधिक संख्या रही होगी कि उससे भूमि में तैल के संग्रह प्राप्त हो सके। फिर भी हमें स्मरण रखना

1. Ooze 2. Mud 3. Organic matter 4. Organisms. 5. Porous
6. Drill.

चाहिए कि सभवत. ये संग्रह कोयले की अपेक्षा कम विस्तृत है जिसके कार्बनिक उद्भव के संबध मे कोई सन्देह नही किया जाता।

पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस और इनसे उत्पादित पदार्थो से विश्व की उष्मा और शक्ति के लगभग एक तिहाई अंश की पूर्ति होती है। विश्व को अभी भूगर्भस्थित तेल का और कितना सरक्षित भण्डार प्राप्त हो सकता है, इस सम्बन्ध मे बहुत सदेह प्रकट किया जाता है। कुछ अधिक समय नही बीता है जब एक सुयोग्य वैज्ञानिक ने भविष्यवाणी की थी कि १९४७ ई० तक तैल दुष्प्राय हो जायेगा। किन्तु वास्तव में नये तैल-क्षेत्रो की खोज इतने पैमाने पर हुई है कि वे कितने समय के लिए पर्याप्त होगे, इसका गम्भीर अनुमान हम कदाचित् ही लगा सकते है। ऐसा प्रतीत होता है कि वर्तमान शताब्दी मे तैल की कमी नही होगी, किन्तु यह सत्य है इसके ज्ञात संग्रह कोयले के ज्ञात संग्रहो से तुलना के योग्य नही है।

ऊर्जा के अन्य साधन

कोयला, तैल, लकड़ी और पीट से ऊर्जा की विश्व की आवश्यकताओं के ९८.५ प्रतिशत की पूर्ति होती है, शेष १.५ प्रतिशत ऊर्जा जल-शक्ति से प्राप्त होती है। सूर्य एक विशाल पप की भाति कार्य करता है। वह भूमि और समुद्र से जल का वाष्पण करता है; वह वायु को उष्ण बनाता है और उसे ऊपर उठाता है; जल-वाष्प और वायु को दूसरे और अधिक शीतल प्रदेशो में ले जाने के लिए वह पवनो को चलाता है। यहाँ जल-वाष्प सघनित होकर वर्षा या हिम का रूप ग्रहण करता है जिसका कुछ अश पहाडियो पर गिर जाता है और जब यह समुद्र की ओर नीचे को प्रवाहित होता है, तो उस स्थितिज ऊर्जा को मुक्त करता है जो सूर्य द्वारा इसे मिली थी। सामान्यत: यह उष्मा के रूप मे प्रकट होती है; इसीलिए किसी जलप्रपात की तली पर उसकी चोटी की अपेक्षा जल थोडा-सा अधिक गर्म होता है किन्तु यह अन्तर इतना होता है कि मापा जा सकता है। फिर भी, मनुष्य एक वरीवर्त्त-घूर्णक[1] को जल द्वारा घुमाने की युक्ति निकाल सकता है जो एक जनित्र[2] के धात्र[3] को घुमा सकता है और इस प्रकार बिजली उत्पन्न कर सकता है। विश्व की वर्षा की ऊर्जा की मात्रा बहुत विशाल है परन्तु शक्ति का उत्पादन करने के लिए इसके अल्पांश का ही उपयोग किया जा सकता है। इस उद्देश्य की पूर्ति मे जल का प्रवाह तब तक व्यर्थ है जब तक जिस

1. Turbine-rotor   2. Generator   3. Armature.

तीव्र गति से विश्व की अधिकांश नदियाँ बहती हैं उसकी अपेक्षा यह अधिक वेग से नहीं गिरता और जब तक कि यह अविरत न हो। अतः व्यावहारिक रूप से जल-शक्ति का उपयोग केवल पहाड़ी प्रदेशों में या वहाँ हो सकता है जहाँ कि एक बड़ी नदी जल-प्रपात बनाती हुई ऊपर से नीचे गिरती हो।

स्पष्ट है कि विश्व के जल-शक्ति के संसाधन[1] पूर्णरूप से विकसित नहीं हुए हैं पर ऐसा प्रतीत होता है कि यदि वे विकसित भी होते तो भी उनसे विश्व की उष्मा और शक्ति की आवश्यकता की पूर्ति न होती।

अविकसित संसाधन[1]

शक्ति के कई ऐसे साधन (स्रोत) हैं जिनका उपयोग बहुत ही कम होता है, क्योंकि कोयले या तैल से शक्ति कम व्यय पर या अधिक सरलता से प्राप्त हो सकती है। यह निश्चित है कि इनका विकास हो सकता है और होगा ही, यदि दूसरे अधिक सुविधा-जनक साधन न हों।

वायु सदैव गतिशील रहती है। इसकी ऊर्जा सूर्य की उष्मा से उत्पन्न होती है। यह उष्मा संवहन[2] धाराओ को उत्पन्न करती है जिसके कारण पवनें चलने लगती हैं। यात्रा करनेवाले जहाजों ने सभ्यता के आरम्भ से और पवन-चक्कियों[3] ने पिछले १००० वर्षो से शक्ति के इस स्रोत का उपयोग किया है। सैद्धान्तिक रूप से सुधरी हुई उत्तमतर पवन-चक्कियों से विद्युत-शक्ति का उत्पादन क्यों न किया जाये ? इसमें बहुत-सी आपत्तियाँ की जाती हैं, जिनमे कदाचित् सबसे महत्त्वपूर्ण यह है कि पवन की गति हमेशा अनियमित रहती है। कभी वह बिलकुल स्थिर सी रहती है और कभी विध्वंसकारी तूफानो तक में परिवर्तित हो जाती है। फिर, अभी शक्ति सचित करने का कोई संतोषजनक साधन भी नही है, इसलिए विद्युत्-शक्ति की[4] यह अनियमितता एक बड़ी त्रुटि है। जो हो, यदि मनुष्य को इंधन की कमी पड़े तो पवन से कार्य लिया जा सकता है।

समुद्र भी इसी प्रकार निरन्तर गतिशील रहता है। इस गति का उद्भव अंशतः संवहन धाराओ के कारण होता है और अंशतः ज्वारभाटे के कारण। सूर्य समुद्र को गर्म करता है जिससे सवहन धाराएँ उत्पन्न होती हैं। घूर्णन करती हुई पृथ्वी के जल पर सूर्य और चन्द्रमा के आकर्षण से ज्वारभाटे उत्पन्न होते हैं। बहुत बड़ी मात्रा मे ऊर्जा प्रतिदिन उष्मा के रूप में समुद्र में नष्ट हो जाती है। परन्तु समुद्र की इस

1. Resources 2. Convection 3. Wind-mills 4. Electric supply

गति का उपयोग करना बहुत ही कठिन है। इसके कुछ कारण है । समुद्र की उग्रतः मनष्य के सबसे ठोस और बहुमूल्य निर्माण-कार्यों को छोड़कर अन्य सभी का विनाश कर देती है। इसकी धाराएँ धीमी होती हैं; ज्वारभाटा रुक-रुककर आता है और उसका उतार-चढ़ाव बहुत अधिक नही होता । इसीलिये ज्वारभाटा-गतियन्त्र [1] कभी परीक्षण[2] अवस्था से आगे नहीं जा सके हैं । फिर भी हमारी सतान कदाचित् इन कठिनाइयो पर विजय पाने और अपने लिए प्रायः असीमित ऊर्जा प्राप्त करने मे समर्थ हो सकती है ।

सूर्य निरन्तर भूमि पर या इसके ऊपर मेघों पर चमका करता है और लगभग २५०×१०[१२] अश्व-शक्ति के हिसाब से ऊर्जा देता है। ससार के कुछ प्रदेशो मे दिन मे सूर्य का प्रकाश प्रायः निरन्तर रहता है और प्रति वर्ग गज पीछे एक अश्व-शक्ति की दर से यह ऊर्जा प्रदान करता है। उत्तरी-अफ्रिका में कुछ सूर्य-वाष्पित्र[3] स्थापित किये गये है । दर्पणों द्वारा बड़े क्षेत्र से एक छोटे वाष्पित्र पर सूर्य का प्रकाश परावर्तित कराया जाता है जिसमें से निकलनेवाली भाप शक्ति का उत्पादन करने में प्रयुक्त की जाती है। यह संयंत्र[4] बड़े आकार का है और मँहगा है और दर्पणों को भी प्रचुर मात्रा में उड़नेवाली धूल से बचाना पड़ता है। विश्व की शक्ति की आवश्यकता पूरी करने के लिए सारे सहारा मरुस्थल को सूर्य-वाष्पित्रो से आच्छादित करना होगा—जो कि बेमतलब सी चीज है; पर इसका अर्थ यह नही होता कि जहाँ दूसरे ईंधन दुर्लभ हों वहाँ सूर्य-वाष्पित्रो का सीमित किन्तु बहुमूल्य उपयोग नही किया जा सकता ।

पृथ्वी के अन्तस्तल मे शक्ति का विशाल सग्रह विद्यमान है। हम जानते हैं कि पृथ्वी का यह भीतरी भाग बहुत गरम है, यद्यपि जहाँ तक मनुष्य पहुँच पाया है उससे अधिक गहराइयों पर ताप किस दर से बढ़ता है इसके विषय मे तरह-तरह के अनुमान लगाये गये है। इटली के कुछ प्रदेशो मे इस उष्मा का सफलतापूर्वक उपयोग किया गया है जहाँ भाप की प्रधाराएँ[5] भूमि से निकलती है और वरीवर्त्त[6] चलाने मे उनका उपयोग किया जा सकता है। परन्तु ये परिस्थितियाँ कुछ ही स्थानों पर पायी जा सकती है। जिस गहराई पर उच्च ताप मिलता है वहाँ तक छिद्रण[7] करना इतना मँहगा होता है कि यह असंभव-सा कार्य है, सिवाय उन क्षेत्रों के जहाँ सक्रिय ज्वालामुखी विद्यमान हो। स्पष्ट है कि ऐसे स्थान बहुमूल्य संयत्र स्थापित करने के लिए उपयुक्त नही माने जा सकते ।

1. Tide-motors 2. Experimental. 3. Sun-boilers 4. Plant 5. Jets
6. Turbine. 7. Drill

नाभिकीय[1] ऊर्जा

आज विश्व परमाणुओ की नाभिकियों से उपयोगी ऊर्जा के उत्पादन की संभावना के बारे में प्रयोग कर रहा है । सर्वसाधारण को विदित है कि परमाणवीय-पुज[2] बनाये जा सकते है और इनसे उष्मोर्जा की बड़ी मात्रा का उत्पादन हो सकता है। कोयला, तैल और जल से ये होड़ ले सकते है या नही, यह अभी अज्ञात है। यूरेनियम जो वर्तमान रिऐक्टर का इंधन है, दुर्लभ है, किन्तु यह निश्चित है कि अधिक हलके और प्रचुर मात्रा में मिलनेवाले तत्त्वो[3] के परमाणुओं में सैद्धान्तिक रूप से मुक्त हो सकनेवाली ऊर्जा का इतना संग्रह है जो मनुष्य की लाखों वर्षो की आवश्यकताओं से भी बहुत अधिक है; किन्तु यह तथ्य पवन, ज्वारभाटे और सौर-विकिरण की ऊर्जा के बारे में भी सत्य है। अगली चौथाई-शताब्दी के काल में परमाणवीय ऊर्जा का भविष्य अधिक स्पष्ट हो जायगा; संभव है कि शीघ्र ही कुछ विशेष प्रकार के कार्यो के लिए इसे ही शक्ति-साधन के रूप मे चुना जाये, किन्तु २००० ई० से पूर्व विश्व की शक्ति सम्बन्धी आवश्यकता पूरी करने में इसका कोई महत्त्वपूर्ण अंशदान हो सकेगा, ऐसी आशा करना बड़ी नासमझी की चीज होगी।

1. Nuclear 2. Atomic-pile 3. Elements.

अध्याय २

कोयले का खनन[1]

कोयला सूर्य की ऊर्जा द्वारा प्रदान किया गया है जो भूमि के अभ्यंतर में परिरक्षित है। मनुष्य की शक्ति की आवश्यकता पूरी करने के लिए इसे तल पर लाया जाता है। प्रत्येक उस वस्तु से जो कोयला नही है इसे पृथक् किया जाता है और उन स्थानो में यह भेज दिया जाता है जहाँ उष्मा और ऊर्जा का उत्पादन करना होता है।

जिन देशो मे जलशक्ति बहुत थोड़ी होती है और पेट्रोलियम भी नही होता वहाँ अन्तर्दहन[2] इजनों द्वारा चलाये गये परिवहन[3] के साधनो को छोड़कर उष्मा और ऊर्जा का प्रायः एकमात्र साधन कोयला ही होता है। प्रत्येक औद्योगिक प्रक्रम को ऊर्जा की आवश्यकता होती है; वास्तव में कोयले से मिलनेवाली ऊर्जा के बिना हमारी आधुनिक औद्योगिक सभ्यता उत्पन्न ही न हो पाती और न वह कायम ही रह सकती थी—इस सीमा तक हम आज खनक के परिश्रम पर अवलम्बित हैं। वे देश भी जिनमें पेट्रोलियम या जलशक्ति प्राप्य है, अधिकतर कोयले पर निर्भर करते हैं, अतः यह स्पष्ट है कि प्रायः हर वस्तु का मूल्य कुछ सीमा तक कोयले के मूल्य पर निर्भर करता है। फलत. कोयले को कारखाने तक ले जाने के व्यय मे यदि कमी की जाती है या उतना ही कार्य करने के लिए कोयले की खपत मे कमी की जा सकती है, तो इसका आशय यह हुआ कि इससे कुछ सीमा तक हर व्यक्ति के धन में थोडी-सी बचत हो जाती है। यह विज्ञान का कार्य है कि इस कमी को सम्भव बनाये और एक टन कोयले को जमीन के ऊपर तक लाने और आगे पहुँचाने के लिए आवश्यक वस्तुओं और श्रमिकों आदि के पीछे होनेवाले व्यय में कमी करे। इस अध्याय मे हम इस कार्य के पहले भाग के बारे में कुछ कहेंगे।

वास्तव मे विज्ञान द्वारा यह कार्य सम्पन्न हो सकता है और पहिले ही इसने कोयले के गर्त-खनन[4] को बहुत सरल बना दिया है; किन्तु विज्ञान मानवीय और राजनीतिक कारणों पर नियंत्रण नही कर सकता। कितना पैसा, अर्थात् वस्तुओं और सेवाओं

1. Mining 2. Internal-combustion 3. Transport 4. Winning

की कितनी मात्रा एक खनक को मिलेगी और उसके बदले में कितना काम उसे करना चाहिए, विदेश में उत्पादित पदार्थो को रोक रखने के लिए किस तरह एक देश अपनी सीमाओं को बन्द कर देना चाहता है और मशीनें खरीदने के लिए पूँजी की कमी—ये सब मानवीय समस्याएँ है जिनका कोयले के मूल्य से गहरा सबध है किन्तु जिनका सामाधान पूर्णत: वैज्ञानिक के हाथ मे नही है। फिर भी इनमें से कुछ समस्याओ पर वैज्ञानिक के कार्य का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है, जैसे कि कोयले का उत्पादन अशत: खनक बनने की मनुष्यों की तत्परता पर निर्भर करता है। खनक का कार्य खतरनाक और थकानेवाला होता है, इसलिए अधिकाश मनुष्यो के विचार से वह मजूरी की उच्च दर का अधिकारी है। यह मजूरी उस मूल्य से ही दी जा सकती है जो दूसरे मनुष्य खनक द्वारा खोदे गये कोयले के बदले दे सकते है। इसलिए यदि किसी प्रकार खनक द्वारा निकाले जानेवाले कोयले की मात्रा बढ़ती है, तो खनक को ज्यादा मजूरी देना और इस उद्योग मे अधिक मनुष्यो को आकर्षित करना संभव हो जाता है। इसके अतिरिक्त प्रति खनक द्वारा कोयले के अधिक उत्पादन का अर्थ होता है, प्रति टन कोयले के मजूरी-व्यय मे कमी, सस्ता कोयला और परिणामस्वरूप कोयले की अधिक माँग। इसका परिणाम यह होता है कि अधिक खनकों की आवश्यकता पडती है और इसीसे वे अधिक मजूरी माँगने के योग्य हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक आविष्कार खनन के संकटो और कष्टों को घटाने में सफल हो रहे है। अठारह सौ अस्सी ईसवी के पश्चात् दुर्घटनाओं से मरनेवालो की संख्या एक तिहाई कम हो गयी है और यद्यपि खनक को चोट लगने तथा औद्योगिक रोग होने की अब भी बडी संभावना रहती है, फिर भी हमे विश्वास है कि इनका होना निरन्तर कम होता जायगा। खनको की कितनी सख्या कोयले का खनन कर सकती है और करेगी, स्पष्टतया वह कोयले के उत्पादन की मात्रा निश्चित करने का एक घटक[1] है। यदि अधिक कोयले की आवश्यकता होती है, तो अधिक खनको का लगाया जाना आवश्यक है और अधिक अच्छी मशीनो की सहायता से प्रत्येक खनक का कोयले का उत्पादन भी बढ़ना चाहिए। अत: इस अध्याय का प्राथमिक उद्देश्य यह विचार करना है कि पृथ्वी की गहराइयो से कोयले या इसकी ऊर्जा को उपभोक्ता तक लाने के लिए क्या किया जाना चाहिए जिससे इस बहुमूल्य और आवश्यक पदार्थ के गर्तखनन की कठिनाइयों को हमारे पाठक समझ सकें जिन्हे ही अन्त में नीति सम्बन्धी अन्तिम निर्णय करना है।

1. Factor

प्लैङ्क लेन कोयला—खनि नं०. १ गर्त से गार्सउड हाल नं०. ९ गर्त तक का खंड जो स्तरों की वर्तमान स्थिति को दिखाता है।

Section from Plank Lane Colliery No. 1 pit to Garswood Hall No. 9 pit showing present disposition of beds.

चित्र नं० ३—स्तरदोषों द्वारा कोयले के स्तरों में पड़ने वाले विघ्न को दिखाते हुए एक वास्तविक कोयला-क्षेत्र का खंड। [एच० एम० एस० ओ० की अनुमति से, विगन जिले के भूतत्व आपरीक्षण अनुसंधान-लेख से।]

जहाँ कोयला पाया जाता है

रोटी को छेड़े बिना सैंडविच से माँस के टुकडे को निकालने की क्रिया से खनन कार्य की तुलना की गयी है। कोयला स्तरो[1] में मिलता है और कोयले की पर्ते चट्टानो, सामान्यतः एक प्रकार के शिलास्तर[2] या चिकनी मिट्टी के किसी परिवर्तित रूप या बालुशिला[3] की पर्तो के बीच फँसी रहती है। यदि स्तर लगभग १५ इंच से पतले हों तो उनके खनन से कोई लाभ नही होता, क्योंकि खनक के लिए कोयले तक पहुँचने की काफी जगह बनाने के लिए घेरनेवाली चट्टानों के बड़े भाग को काटना पड़ता है। स्तरों की मोटाई एक इंच के भाग[4] से (एकाध बार) सैकड़ों फुट तक होती है। यदि स्तर क्षैतिज[5] हों, तो खनक का कार्य साधारणतः जैसा होता है उससे अधिक सरल हो जाता है। वास्तव में अधिकतर स्तर क्षैतिज की ओर झुके हुए रहते हैं। प्रत्येक स्थान पर जहाँ कहीं पूरी की पूरी चट्टाने भूपटल[6] के हिलने से फिसल जाती हैं या ढकेली जाती हैं वहाँ उनके फर्श और छत प्रत्येक स्थान पर चपटे (समतल) नहीं होते और यहाँ-वहाँ पर्ते दोषपूर्ण हो जाती हैं। फलत. कोयले की खानि में सडकें और मार्ग समतल नही होते, बल्कि स्तरो के झुकाव के अनुसार उनमें भी झुकाव होते हैं। इन अनियमित झुकावों के कारण कोयला-तल[7] से, जहाँ कोयला काटा जाता है, ईषा[8] तक कोयले का लाना कठिन हो जाता है। इस प्रकार कोई भी एक खानि दूसरी खानि के पूर्ण रूप से सदृश नही होती और उपकरणों[9] का प्रामाणिकीकरण[10] एक सीमा तक ही संभव हो सकता है। खननकार्य मे मशीनो[11] का सहारा लिया जा सकता है किन्तु प्रकृति द्वारा पैदा की गयी समस्याओं को हल करने के लिए खनक द्वारा मशीनो का उपयोग करने मे बहुत निपुणता की आवश्यकता है। कोयले को मशीनो द्वारा खनन कर पूर्ण लाभ के साथ दोषरहित और सामान्य मोटाई के स्तरो मे उठाया जा सकता है जो या तो समतल हो या बहुत थोडे ही झुके हो और जिनका फर्श तथा छत अच्छा हो। इस दृष्टिकोण से ग्रेट ब्रिटेन के खनको की अपेक्षा अमेरिकन खनको को अधिक सुविधा रहती है, इसीलिए वे प्रति पुरुष अधिक उत्पादन कर सकते हैं। अमेरिका की खानो मे ६ टन कोयला प्रतिदिन प्रति खनक का औसत उत्पादन है, जब कि दूसरे देशो में कुल तीन-चौथाई से डेढ़ टन तक प्राप्त किया जाता है। ब्रिटिश उत्पादन सवा टन से थोड़ा-सा कम है।

1. Seams 2. Shale 3. Sandstone. 4. Fraction
5. Horizontal 6. Earth's crust 7. Coal-face 8. Shaft
9. Equipment 10. Standardization 11. Mechanization.

कोयला वैसी हर गहराई पर पाया जाता है जिस पर इसका खनन हो सकता हो। कभी-कभी यह तल से ऊपर की ओर निकल आता है और इसका उत्खनन[1] किया जा सकता है। कभी-कभी यह तल से केवल कुछ गज नीचे रहता है और इसके ऊपर की मिट्टी और प्रस्तर को यात्रिक फावडों[2] द्वारा खोदा और यंत्रो द्वारा हटाया जाता है। इस प्रकार अनावृत-क्षेपण-पद्धति[3] द्वारा इसका खनन होता है (प्लेट १, देखिए)। इस प्रकार कोयले की सबसे अधिक मात्रा का खनन किया जाता है। खानि जितनी अधिक गहरी होगी, ईपा के निमज्जन[4] और कोयले को ऊपर खीचने में उतना ही अधिक श्रम करना पडता है और इस समय लाभदायक कोयले के खनन की निचली सीमा लगभग ४५०० फुट है, यद्यपि इससे अधिक गहराइयो पर बहुत अधिक कोयला विद्यमान है।

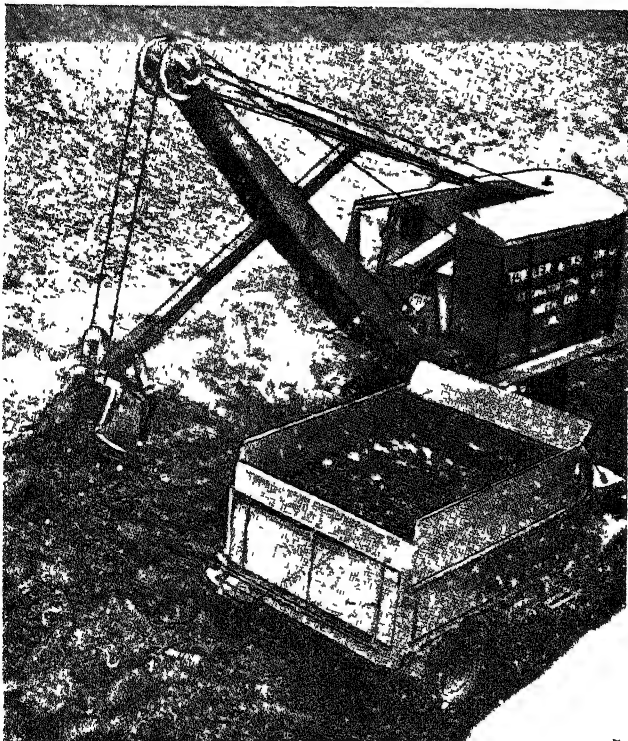
इस प्रकार व्यावहारिक समस्या केवल सतह के नीचे कोयले के अस्तित्व का पता लगाना ही नही है बल्कि यह भी है कि उसे किस तरह खानो के बाहर निकाला जाय कि उससे जितनी आमदनी सभव हो, उससे अधिक की मशीनो तथा आदमियो की जरूरत उसे निकालने मे न पड़े।

संसार के कोयले के संसाधन[5]

कोयला भूपटल में विस्तृत रूप से फैला हुआ है किन्तु कुछ क्षेत्रो में अभी इसके खनन-कार्य मे हाथ भी नही लगाया गया है। यह कोयला भिन्न-भिन्न श्रेणी का है और अपने संक्षिप्त विवरण में हम भूरे कोयले[6] और लिग्नाइट तथा बिटुमिनी[7] कोयले और एथ्रे साइट मे जो अपेक्षया अधिक बहुमूल्य है, भेद करेंगे। केवल १४ देश ऐसे है जो प्रतिवर्ष दो करोड़ टन से अधिक कोयले का उत्पादन करते हैं। पृष्ठ १९ के मध्य भाग की सारिणी[8] मे ये देश क्रमानुसार दिये गये है। उत्पादन के इन आँकडों की तुलना पृष्ठ २० के ऊपरी भाग मे दी गयी सारिणी में कोयले की पूर्ण संचित राशि के अनुमान से की जा सकती है।

यह स्पष्ट है कि यदि ये अक सही है तो ससार के पास कोयले का विशाल संग्रह विद्यमान है। फिर भी इसका अर्थ यह नही है कि ईधन की कोई समस्या ही नहीं है। कुछ लोगो का कहना है कि सारिणी में दिये गये अंकों मे अत्युक्ति की गयी है किन्तु फिर भी ऐसा नहीं प्रतीत होता कि वे घटाकर आधे किये जा सके। यदि ऐसा हो भी

1, Quarried 2, Mechanical shovel, and grabs 3. Open-Cast system
4. Sinking 5. Resources 6 Brown coal 7. Bituminous 8. Table



प्लेट १——अनावृत क्षेपण पद्धति द्वारा कोयले का खनन (दे० पृ० १८)



प्लेट २—खनक द्वारा कोयले का अधश्छेदन (दे० पृ० २६)

जाय तो भी लगभग दो हजार वर्षो या ऐसे ही समय के लिए पर्याप्त कोयला रहेगा। अधिक जटिल कठिनाइयाँ तो इस मानवीय समस्या से उत्पन्न होती है कि खनक का कार्य ऐसा किस तरह बना दिया जाय कि मनुष्य उसे करना चाहें या मशीनों द्वारा वह किया जा सके। अन्तिम बात यह है कि संसार में कोयले का वितरण बडा असमान है। कुछ देश कोयले के क्षेत्र से बहुत दूर हैं; यह एक ऐसी परिस्थिति है जिससे इसके गर्त-शीर्ष[1] व्यय मे परिवहन का एक भारी व्यय जुड जाता है। फिर भी मेरा विश्वास है कि इसके अन्तिम रूप से समाप्त[2] हो जाने के सिवाय दूर भविष्य में कोयले की ऐसी कोई समस्या नही है जिसे विज्ञान हल न कर सकता हो।

कोयले का उत्पादन

(आँकडे १९५० के हैं जब तक कि दूसरा वर्ष न दिया हो*)

देश	करोड़ मेट्रिक टनों में		
	एंथ्रेसाइट और बिटुमिनी कोयला	भूरा कोयला, लिग्नाइट और पीट	योग
सयुक्तराष्ट्र अमेरिका	५०.७	.३	५१.०
ब्रिटेन	२१ ९	-	२१.९
पश्चिमी जर्मनी	११.१	७.७	१८.८
पूर्वी जर्मनी (१९४९)	.३	१२.२	१२ ५
रूस (१९३८)†	-	-	१३.३
पोलैण्ड	७.८	.५	८.२
फ्रास	५ १	.२	५.३
चेकोस्लोवेकिया	१.८	३.१	४.९
जापान	३.८	.१	३.९
भारतवर्ष	३.३	-	३ ३
बेल्जियम	२ ७	-	२.७
दक्षिणी अफ्रिका	२ ४	-	२.४
आस्ट्रेलिया	१ ७	.७	२ ४

1. Pit-head. 2. Exhaustion

*विश्व-शक्ति-सम्मेलन[3] की साख्यिकीय[4] वार्षिक पुस्तक नं० ६, १९५३ पर आधारित

†निष्संदेह उस वर्ष से इसमे बहुत बृद्धि हुई है।

3. World-Power Conference 4 *Statistical*

कोयले का संचय[1]

महाद्वीप	करोड़ मेट्रिक टनों में		
	एंथ्रेसाइट और बिटुमिनी कोयला	भूरा कोयला, लिग्नाइट और पीट	योग
यूरोप	१,५५,१००	३९,८००	१,९४,९००
उत्तरी अमेरिका	२,११,५००	९६,८००	३,०८,३००
एशिया	१,०९,७००	४००	१,१०,१००
ओशीनिया	१,४००	४,०००	५,४००
अफ्रिका	२०,६००		२०,६००
योग	४,९८,३००	१,४१,०००	६,३९,३००

कोयला प्राप्त करने के लिए क्या करना चाहिए

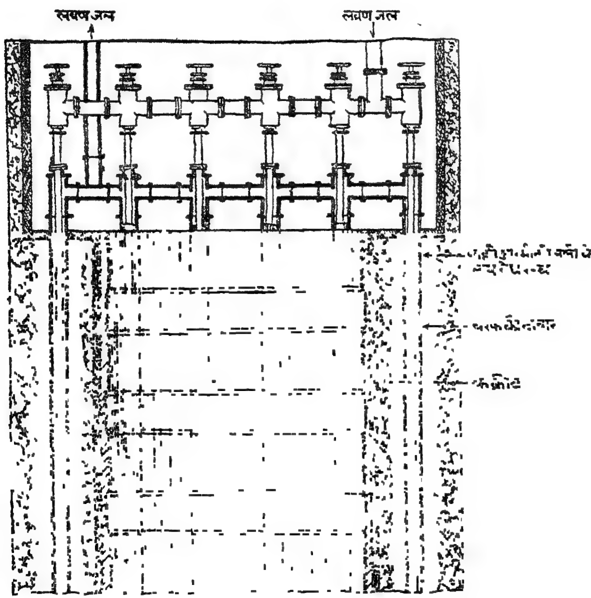
कल्पना कीजिए कि एक नयी खान आरम्भ करनी है। इसका अर्थ है कि जमीन की सतह के नीचे उपयोग हो सकनेवाले कोयले का अस्तित्व सिद्ध हो चुका है। इसके सिद्ध करने की एकमात्र निश्चित विधि बेधरध्र[2] का निमज्जन करना है। एक वलयाकार[3] छिद्रक[4] का उपयोग किया जाता है जो चट्टान के एक बेलनाकार अश को काटकर बाहर निकालता है जिससे क्रमिक[5] स्तरो की जॉच सम्भव हो जाती है। यह एक मॅहगा कार्य है, क्योकि एक बेधरंध्र पर १०,००० पौण्ड या २०,००० पौण्ड (तीन लाख रुपये) तक व्यय हो सकता है; यही कारण है कि जब तक इसका निश्चित सकेत न मिले कि नीचे कोयला है, यह कार्य आरम्भ नही किया जाता। भूतत्त्व-वैज्ञानिक[6] जानते है कि चट्टानों की किस प्रकार की रचना से कोयला मिलता है और साधारणतः क्षेत्र-विशेष में वे इसके अस्तित्व का अनुमान लगा सकते है, परन्तु निस्सदेह कोयले के बहुत से क्षेत्र ऐसे है जो अभी तक पूर्णत. अज्ञात है, विशेषकर वे जो संसार के अधिक दूरस्थ भागों में है।

अब इजिनियर उस क्षेत्र की योजना बनाता है जहाँ खानि खोदी जानी है और दो आवश्यक ईषाओ का निमज्जन पहला कार्य होता है। इस पर अत्यधिक व्यय होता है और एक बड़ी तथा गहरी खानि में यह व्यय दस लाख पौण्ड या अधिक के क्रम

1. Reserves. 2 Bore-holes 3. Annular 4. Drill 5. Successive.
6. Geologists.

का हो सकता है । इससे पहले कि एक टन कोयला भी निकाला जा सके ऐसी खान पर लगनेवाली पूँजी का मूल्य यथार्थ मे चालीस लाख पौण्ड के निकट पहुँच सकता है। यह भी एक कारण है जिससे कोयले के उत्पादन की समस्या का सीधा उत्तर, विशेप-कर खनकों की सीमित और घटती हुई संख्या को सामने रखते हुए, केवल यह नही है कि "अधिक खानें खोदो।"

ईषा का निमज्जन एक लम्बा और ऐसा कार्य है जिसके लिए निपुणता की आवश्यकता होती है। चट्टान ऊपर से नीचे तक कठोर और सघन कदाचित् ही होती है। गीली बालू या चूर-चूर हुई शिलाएँ मिलती हैं। कभी-कभी ईषा को इस दुर्बल पदार्थ



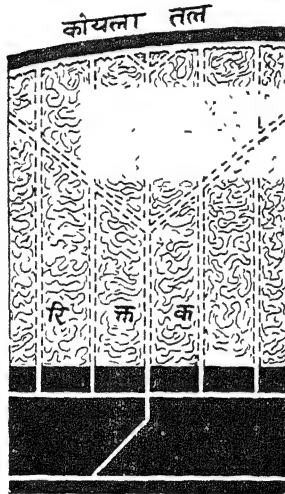
चित्र ४—हिमीकरण[1] द्वारा गीली भूमि में ईषा का निमज्जन

में संभालने की असम्भावना पर एक घेरे में कई नलों का निमज्जन करके विजय प्राप्त की जाती है। इस घेरे में से लवण-जल[2] का चक्रण कराया जाता है जो कि जल के

1. Freezing 2. Brine

हिमांक[1] से नीचे तक ठंडा किया गया होता है। गीली भूमि इस प्रकार क्रमशः जम जाती है और कठोर पदार्थ की एक दीवार सी बन जाती है। तब घेरे के भीतर की कोमल या गीली भूमि का सुरक्षित रूप से उत्खनन किया जा सकता है और बर्फ की दीवार के भीतर लोहे या सीमेंट का एक आस्तरण[2] बनाया जा सकता है जिससे जल स्थायी रूप से पृथक् हो जाता है। या फिर, तरल सीमेंट के अनुवेधन[3] से भूमि को ठोस किया जा सकता है और तब उसका उत्खनन कर सकते हैं।

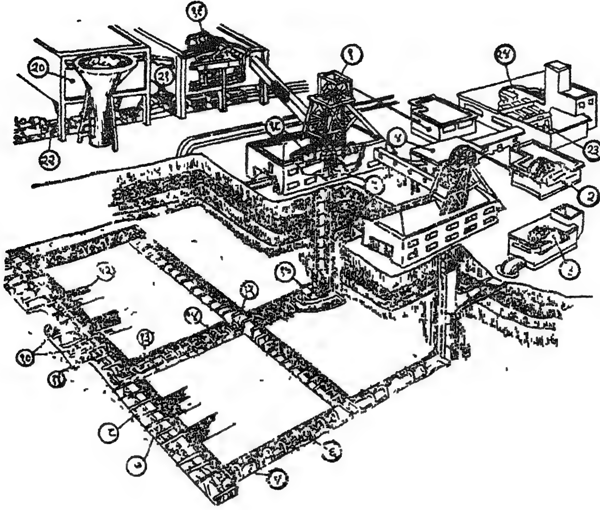
ईषा की तली पर खानि के अभिन्यास[4] में बहुत अतर होता है किन्तु साधारणतः मजबूती से बनायी गयी स्थायी सडकें होती हैं जिनसे होकर खनक कोयला-तल तक जाते हैं। इन्ही सड़कों से कोयला पिजडों तक लाया जाता है जिनमें चक्कर खाता हुआ यह सतह तक पहुँचता है। इन्ही सडको द्वारा उस वायु के लाने और वापस ले जाने का कार्य भी होता है जिसकी श्रमिकों को कोयला-तल पर आवश्यकता होती है।



चित्र ५—दीर्घप्राचीर कार्य-विधि

ज्यों-ज्यों कोयले की राशि समाप्त होती जाती है, उसका कार्यतल ईषा से दूर और अधिक दूर हटता जाता है और इसलिए खनक तथा कोयले दोनों की यात्रा अधिक लम्बी होती जाती है और गर्त से कोयले के निकालने[5] का व्यय बढ़ता जाता है। इग्लैण्ड मे ईषा से कोयला-तल तक की औसत दूरी एक मील से थोडी-सी कम होती है किन्तु कुछ पुरानी खानो मे खनको को अपना कार्य प्रारम्भ करने से पहिले तीन मील तक चलना पड़ सकता है। कभी-कभी कोयला-तल के अधिक समीप एक नयी ईषा का निमज्जन लाभदायक होता है किन्तु साधारणतः पुरानी खानि में ऐसा करने का व्यय वसूल नही हो पाता।

1. Freezing point
2. Lining
3. Injection
4. Layout
5. Winning



चित्र ६—दीर्घप्राचीर-पद्धति पर कार्य करनेवाली एक कोयला खानि का अभिन्यास
(राष्ट्रीय कोयला बोर्ड की कृपा से)

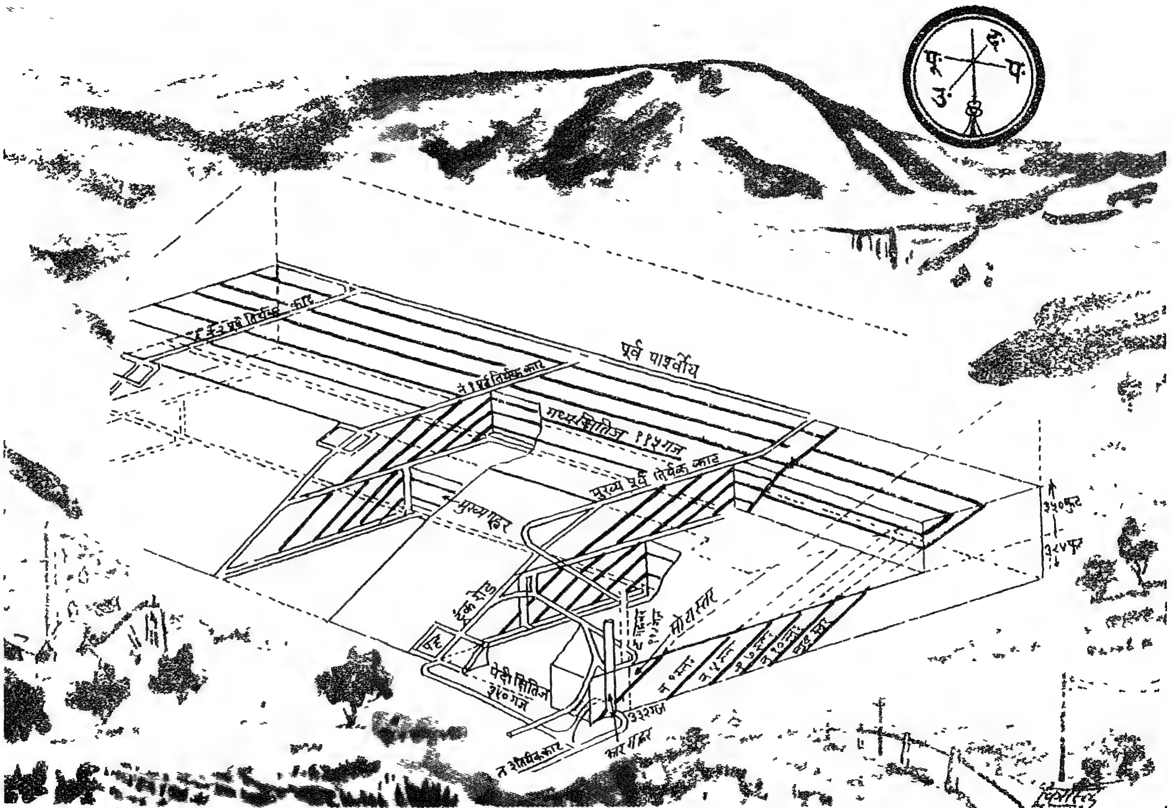
१. गर्तशीर्ष गतिवाहक Pithead Gear
२. उत्तोलक इञ्जन-गृह Winding Engine House
३. पंखा-गृह Fan House
४. दीप-कक्ष Lamp-room
५. गर्त तट Pit bank
६. मनुष्य आरोहण Man-riding
७. कोयला काटना Cutting Coal
८. गोला निक्षेपण के लिए छिद्रण Drilling for shotfiring
९. गैस के लिए परीक्षण Testing for gas
१०. हाथ से भरा जानेवाला स्वयं-चल परिवाहक Hand filling auto-conveyors
११. अवलम्बन स्थापन Prop setting
१२ संवेष्टन Packing
१३. परिवाहक Conveyor
१४. भार-भरण बिन्दु Loading Point
१५. मुख्य पथ मे भरी हुई द्रोणियाँ Full tubs in main roadway
१६. आश्रय Maintenance
१७. गर्तपेंदी Pit-bottom
१८. तोलन-मंच Weighbridge
१९. बुनन पट्टी Picking belts
२० क्षालन Washery
२१. गाडी-भारधारक दंड Wagon-loading boom
२२. भरी हुई कोयला-ट्रेन Loaded coal train
२३. गर्तशीर्ष तापक Pithead baths
२४. केन्टीन Canteen

खानों के भीतर निर्मित सारे कार्य-स्थान ऊपर फैली चट्टानो के निरन्तर और विशाल दवाव के नीचे रहते है। जब तक सडकों और निर्मित-कार्य-स्थानों को दृढ़ता से सहारा न मिले, उनकी प्रवृत्ति भहरा पड़ने की रहती है। छतें झुक जाती है, फर्श उठ जाते है, गर्त-अवलम्बन[१] झुक जाते और टूट जाते है। खान का यह गुण स्वीकार कर लिया गया है। ईषा के निकट की स्थायी सड़कें प्रायः लोहे, कक्रीट या ईटो से बहुत अधिक पक्की कर ली जाती है जिससे अधिक समय तक उनका उपयोग हो सके किन्तु खान के जिन भागो से कोयला निकाल लिया जाता है उन्हें गिर जाने दिया जाता है। यदि कोयले तक पहुँचने के लिए चट्टानो का बड़ा भाग काटकर हटाना पड़ता है तो उन कोयला निकाले भागों को बहुधा इन व्यर्थ के प्रस्तर-खण्डो से भर दिया जाता है, किन्तु हर अवस्था में उनकी छत क्रमश नीचे गिर जाती है। तल तक पहुँचनेवाली सड़कों को उनके दोनो ओर काटी गयी चट्टानो इत्यादि के दृढ़ स्तम्भ बनाकर और बहुत-खण्डोवाले इस्पात के तोरण[२] लटका कर सम्हाला जाता है। कोयला-तल को टिम्बर के बदले, जैसी कि पुरानी परिपाटी थी, अब साधारणतः इस्पात के स्तम्भो और छड़ों द्वारा स्थिर रखा जाता है। यह सब होते हुए भी छतों का गिरना निरन्तर चिन्ता और घातक-दुर्घटनाओ का मुख्य कारण होता है। ऐसी स्थिति में सचमुच ही यह आश्चर्य की बात है कि ब्रिटिश खानों में काम करनेवाले खनक इतनी निपुणता और सावधानी से काम करते है कि इन घातक दुर्घटनाओ से प्रतिवर्ष ३००० भूमिगत[३] श्रमिको के पीछे केवल एक की मृत्यु का ही औसत पड़ता है।

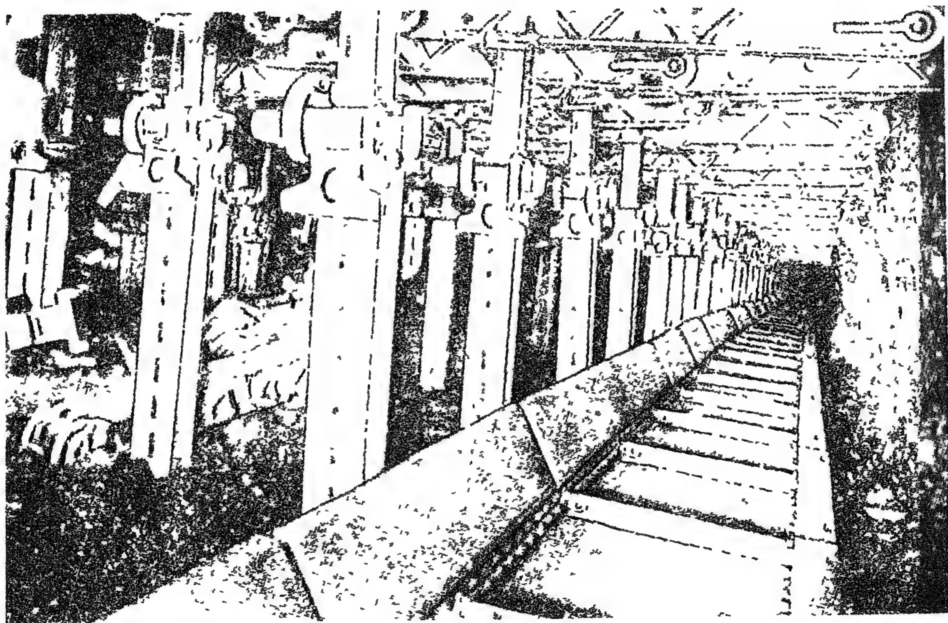
कोयला निकालने की कई विधियाँ है किन्तु अत्यधिक प्रचलित दीर्घ-प्राचीर[४] पद्धति है जिसमें कोयले की पूरी राशि कोयला-तल के साथ-साथ ले जायी जाती है। वोर्ड-स्तम्भ-पद्धति[५] दूसरी विधि है जिसमें सडकें इस प्रकार बनायी जाती है कि कोयला बडे स्तम्भों के चारखानेदार[६] रूप में विभाजित किया जाता है। बाद मे ये स्तम्भ हटा दिये जाते है।

सबसे हाल का विकास क्षितिज-खनन[७] का हुआ है जिसमे सड़के क्षैतिज रूप से ऐसे तल पर बनायी जाती है कि उनसे कोयले का स्तर कई स्थान पर कट जाता है किन्तु वे स्तर के आकार का अनुकरण नहीं करती। जहाँ पर सड़क स्तर को काटती है वही से कार्य-स्थान प्रारम्भ होते है (प्लेट ३ देखिए)। इस पद्धति में

1. Pit-props. 2. Arches. 3. Underground. 4. Longwall.
5. Bord-and-pillar. 6. Chequer work. 7. Horizon-mining.

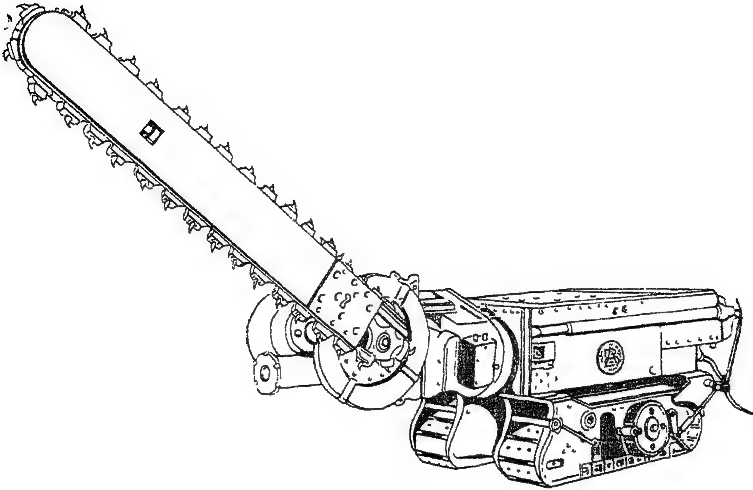


प्लेट ३—क्षितिज खनन (दे० पृ० २४)



प्लेट ४—अविरत खनन (दे० पृ० २७)

मुख्य सड़कों का पत्थरों में से होकर बनाया जाना सम्भव है जो कि कोयले की अपेक्षा बहुत अधिक दृढ़ होते है। इन सड़कों की छते नहीं गिरती, इसलिए ये इतनी चौडी



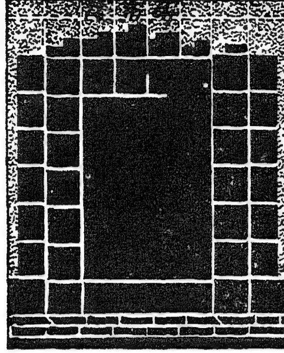
चित्र ७ क—कोयला काटने की मशीन

बनायी जा सकती हैं कि खानो की बड़े आकारवाली कारों की ट्रेनें भी उनसे आ-जा सकती है। इस प्रकार कार्य-तल और ईपा या गर्त-शीर्ष के बीच मे श्रमिकों और कोयले को शीघ्रता से तथा सस्ते मे लाना और ले जाना सम्भव हो जाता है।

कोयले को काटना

यह वांछनीय है कि कोयला बड़े-बड़े टुकडों में निकाला जाय और जहाँ तक संभव हो वह टूटने-फूटने न पाये। खनक के सम्मुख कोयले की एक दीवार होती है, जिसकी ऊँचाई कदाचित् ५ फुट होती है और जिसके नीचे और ऊपर पत्थर होता है। कुछ दिशाओं में कोयला सरलता से विदारित हो जाता है जैसा कि आप कोयले की कोठरी में कोयले के एक टुकड़े को तोड़ते समय देख सकते हैं। इसलिए खनक कोयले को बड़े ढेलों में विदारण करने का प्रयत्न करता है।

इस कार्य को करने की प्रामाणिक[1] (स्टैण्डर्ड) विधि कोयले के नीचे ६–८ इंच ऊँची और ४॥–५ फुट गहरी ऐसी नाली बनाना है, जो कि कीलकों[2] पर अवलम्बित रहती है। जब ये कीलक हटा लिये जाते हैं, तो कोयला स्वयं अपने भार से या विस्फोटकों[3], कीलकों इत्यादि के प्रभाव से नीचे आ जाता है। (प्लेट २ देखिए) कोयले का अधश्छेदन[4] (छिद्रण) जब हाथो से किया जाता था, तो यह बडा ही संकटमय कार्य होता था, क्योकि कोयला अकस्मात् खनक के ऊपर गिर सकता था। किन्तु कोयला काटने का ८० प्रतिशत कार्य इन दिनो मशीनो द्वारा किया जाता है। कोयला काटने की मशीनों में (चित्र ७ क) साधारणतः एक भारी श्रृंखला[5] का उपयोग किया जाता है जिसमें छोटे खनित्र[6] लगे रहते हैं और जो सम्पीड़ित[7] वायु या विद्युत् द्वारा चलायी जाती है। यह श्रृंखला एक छोटी भुजा, उच्चालक हस्त[8] के चारों ओर दौड़ती है और कोयले को किसी श्रमिक की अपेक्षा बहुत अधिक शीघ्रता से और कम क्षय[9] के साथ काटती है। जब कोयले का खंड[10] अधश्छेदित हो जाता है तो बहुधा इसको बराबर और ऊपर से काटकर पृथक् किया जाता है। यह पिड या ढेर स्वयं ही नीचे को आ सकता है या नीचे लाने के लिए विस्फोटको की आवश्यकता हो सकती है जो इस प्रकार के होने चाहिए कि उनसे ज्वाला उत्पन्न न हो सके। तब, यदि आवश्यक हो तो, हटाने से पहिले कोयले को खनित्रो से तोड़ा जाता है।



चित्र ७ ख–बोर्ड तथा स्तम्भ कार्य-विधि (पृ० २४)

धरातल तक कोयले का परिवहन

खनित कोयले का लगभग पाँचवाँ भाग अब भी हाथों से "द्रोणी"[11] मे लादा जाता है किन्तु शेष चार भाग शक्तिचालित परिवाहकों[12] में बेलचों द्वारा लादा जाता है जो इसे ले जाकर कारों या द्रोणियों में लादते हैं जिनके द्वारा यह ईषा तक ले जाया

1. Standard 2. Wedges 3. Explosives 4. Undercutting 5. Chain 6. Picks 7. Compressed 8. Jib 9. Waste 10. Block 11. Tubs 12. Conveyors

जाता है। कार्य करने की इन विधियो के सम्बन्ध मे दो आपत्तियाँ की जाती है। सर्वप्रथम कोयले को बेलचों से भरने का कार्य भारी और धीमा है; दूसरे, कोयला छेदने के प्रक्रम में यह एक विघ्न बन जाता है। पहिले कोयले को काटना और फिर इसे लादकर अलग ले जाना, यह सामान्य प्रक्रम है किन्तु अब ऐसी मशीनों का विकास हो गया है कि कोयले का काटना और लादना साथ ही साथ हो सकता है। ए० बी० मैको-मूर[१] एक उदाहरण है (प्लेट ६) जिसमें काटनेवाली तीन श्रृखलाएँ हैं जिनके द्वारा यह कोयला-तल से कोयले की एक फाँक[२] काट लेती है। कोयला घूर्णन करते हुए एक लादनेवाले डंडे[३] पर गिरता है जो आगे इसे एक छोटे परिवाहक तक ले जाता है जो अपनी बारी मे इसे मुख्य परिवाहक-पट्टिका[४] तक पहुँचाता है। काटने-वाली मशीन और परिवाहक दोनों कोयला-तल और स्तम्भों की पहिली पंक्ति के बीच होते हैं जिससे छेदने, लादने और स्तम्भ स्थापित करने के कार्य एक-साथ तुरन्त किये जा सकें। यह प्रक्रम अविरत-खनन[५] कहलाता है (प्लेट ४ देखिए) और इससे कोयले का उत्पादन प्रति खनक पीछे प्रायः दुगना हो सकता है। किन्तु यह बात स्मरण रखनी चाहिए कि ऐसी बहुत-सी खानें है जिनमे इनका उपयोग नहीं हो सकता।

पिछले युद्धकाल में श्रम बचाने के लिए जर्मनी में कोयला-हलों[६] की उपज्ञा[७] हुई। हल ऊर्ध्वाधार[८] कोयला-तल के साथ खींचा जाता है और, मानो रन्दा फेरा जाय, इस तरह कोयले की एक फाँक परिवाहक-पट्टिका पर गिर पडती है। कोमल और सरलता से कट जानेवाले कोयले के लिए यह बड़ा कार्य-साधक है, परन्तु ब्रिटेन का अधिकांश कोयला इतना कड़ा है कि इसका उपयोग नही किया जा सकता। वहाँ इसके रूपान्तरों जैसे सैमसन-नग्नीकारक[९] का परीक्षण किया जा रहा है।

अब कोयला परिवाहक-पट्टिका के साथ-साथ चलता है जो कि इसे द्रोणियों या कारों मे फेंक देती है; ये एक रज्जु-खिचाई[१०] पद्धति द्वारा गर्त की पेंदी तक खींच ली जाती है, यद्यपि अब परिवहन के इस साधन का स्थान डीजल और विद्युत्-बैटरी से चालित इंजन ले रहे है। द्रोणियाँ ईषा तक लायी जाती है, फिर पिंजड़ो में प्रविष्ट करा दी जाती है और खींचकर धरातल तक पहुँचा दी जाती है।

1. A.B. Meco-Moore 2. Slice 3. Bar 4. Conveyor-belt
5. Continuous mining 6. Coal-ploughs 7. Invention (उद्भव) 8 Vertical
9. Samson Stripper 10. Rope-haulage

धरातल पर कार्य

कोयले की खान में (चित्र ६) धरातल का संयंत्र बड़े आकार का और बहुमूल्य होता है। पहिले तो उत्तोलक-इजन[१] होता है जो खनिको और कोयले को ऊपर-नीचे लाता-ले जाता है। जब यह कार्य करता है, तो इसे बहुत शक्ति लगानी पडती है और वास्तव में ९००० अश्व-शक्ति तक के इंजन स्थापित किये जाते है। सुरक्षा के बहुश्रमसाध्य पूर्वोपायों द्वारा यह निश्चित कर लिया जाता है कि जब यह धरातल या ईषा की पेंदी के निकट पहुँचे तो पिजडा धीमा हो जाये और इसके अंगो में किसी दोष के उत्पन्न होने से पिजडा अपने आप जहाँ का तहाँ रुक जाता है। खदान में एक वायु भरने[२] वाला पंखा भी होता है जो कि कार्य-स्थानों में हजारों टन वायु प्रति घंटा धौकने में समर्थ होता है। कुछ खानों में भमिगत यंत्रो को विद्युत् प्रदान करने के लिए बिजली उत्पन्न करनेवाले संयत्र[३] लगे रहते है। बहुत-सी खानों मे जल की समस्या गभीर होती है और इसे निरन्तर पम्पों द्वारा धरातल पर निकाला जाता है। आजकल साधारणतः विद्युत्-पम्प प्रयुक्त किये जाते है जिससे खान के भीतर भाप ले जाने की आवश्यकता न हो।

संवातन[४] और पंक-वायु[५]

सभी खानों में संवातन (वेंटिलेशन) होना चाहिए, किन्तु कुछ में दूसरो की अपेक्षा इसकी आवश्यकता अधिक रहती है। मनुष्यो और जानवरों को अपने ऊतको[६] में भस्म करने और शक्ति देने के लिए, वायु की आवश्यकता होती है। मानवीय स्नायु, यद्यपि एक बहुत कार्य-क्षम इंजन है, अपने इंधन के आधे भाग को भी कार्य मे परिवर्तित नही करते और शेप इंधन से उष्मा उत्पादित होती है। मानवीय शरीर प्रायः एक ही ताप पर रहना चाहिए और इसलिए उसे इस उष्मा से छुटकारा दिलाने के लिए आवश्यक है कि यह गरमी चारों ओर की वायु को दे दी जाय और पसीने का वाष्पण हो जाय। उष्ण और आर्द्र[७] वायुमण्डल में इन प्रक्रमों मे से कोई भी संभव नही है। बहुत गहरी खानों का ताप सचमुच में ग्रीष्म के सबसे अधिक तप्त दिनो के ताप के बराबर हो जाता है; यह उष्मा, खान के जल की आर्द्रता के साथ ऐसा वायुमण्डल बनाती है कि इसमें गरमी से छुटकारा[८] नहीं पाया जा सकता, अतः मनुष्यों के लिए कार्य करना

1. Winding engine. 2. Blowing-fan 3. Generating plant 4. Ventilation
5. Firedamp 6. Tissues. 7. Humid 8. Dissipation

संभव नहीं होता। इसलिए यदि खान में मनुष्यों को पूर्ण शक्ति से कार्य करना है, तो ठंडी और पर्याप्त मात्रा में शुष्क वायु का खान के प्रत्येक भाग में प्रवाहित करना आवश्यक है।

इसके अतिरिक्त कोयले की खानों की अधिक संख्या मे एक ज्वलनशील[1] गैस, मीथेन (पंक-वायु) अविरत और कभी-कभी बड़ी मात्रा में निकलती रहती है। वायु की एक तीव्रधारा गैस को दूर हटा ले जाती है और इसको इतना इकट्ठा नही होने देती कि यह ज्वलित हो सके। धूल भी एक खतरा है और बहुत से खनक फेफड़ों पर इसके प्रभाव से असमर्थ हो जाते हैं—जितना अधिक अच्छा संवातन होगा, वायु में उतनी ही कम धूल रहेगी।

खान में चक्रण करती हुई वायु के भार का औसत निकाले हुए कोयले के भार से छः से नौ गुने तक होता है और यह प्रतिदिन वायु के लगभग दस हजार टन तक हो सकता है। जिस पंखे से वायु का वहन होता है, उसे एक बहुत शक्तिशाली, २५०० अश्व-शक्ति तक के मोटर से चलाना होता है। संवातन का व्यय साधारणतः कोयले के प्रति टन पर दो या तीन पेंस होता है किन्तु यह नौ पेंस तक हो सकता है।

वायु खान के हर ओर पथों की एक संकीर्ण पद्धति में से ले जायी जाती है, लघु-परिपथ[2], रोधो और द्वारों के जरिये रोका जाता है; फिर भी कुछ कार्य-स्थानों के लिए वायु की पर्याप्त मात्रा का मिलना कठिन हो सकता है। अग्निकर्मा[3] नित्य पंक-वायु की रखवाली करता है।

गैस की उपस्थिति की परीक्षा कई प्रकार से की जाती है, किन्तु साधारणतः निरापद-दीप[4] की ज्वाला का प्रेक्षण[5] किया जाता है जिसकी चोटी गैस के विद्यमान होने पर नीले-पीले रग की होती है। गैस एक सदैव उपस्थित रहनेवाला खतरा है। आग्नेय[6] खानो में यह हमेशा चुपचाप कोयले से निकलती है किन्तु कभी-कभी यह कोयले से प्रधाराओं[7] के रूप मे फूट पडती है। इस गैस का निकलना एक सदैव-उपस्थित रहनेवाला खतरा ही नही है, बल्कि एक मूल्यवान् ईधन की बडी भारी हानि भी है। कुछ खानो मे गैस का भार कोयले के भार के दस प्रतिशत से अधिक होता है और कभी-कभी इसकी तापन-शक्ति[8] स्वयं कोयले की अपेक्षा अधिक होती है।

वेल्जियम की कोयले की कुछ खानो में, जो कि अत्यन्त आग्नेय है, कोयले को काटने के पूर्व इससे सफलतापूर्वक गैस अलग कर ली जाती है। जिस स्तर में कार्य किया

1. Inflammable 2. Shortcircuiting 3. Fireman 4. Safty lamp
5. Observing 6. Fiery 7. Jets 8. Heating-power.

जाता है उससे लगे हुए स्तरो में छिद्र बेधे जाते हैं। इनका सबंध पम्पों से कर दिया जाता है जो गैस को खींचकर इसे धरातल तक चले जाने को विवश कर देते हैं। इस पदार्थ में ९० प्रतिशत तक मीथेन रहती है और नगर-गैस[1] की अपेक्षा इसका उष्मीय-मान[2] अधिक होता है; जिन उद्देश्यों के लिए नगर-गैस सामान्यतः उपयोग मे लायी जाती है, उनमे से अधिकतर के लिए इसे भी उपयोग में लाया जा सकता है।

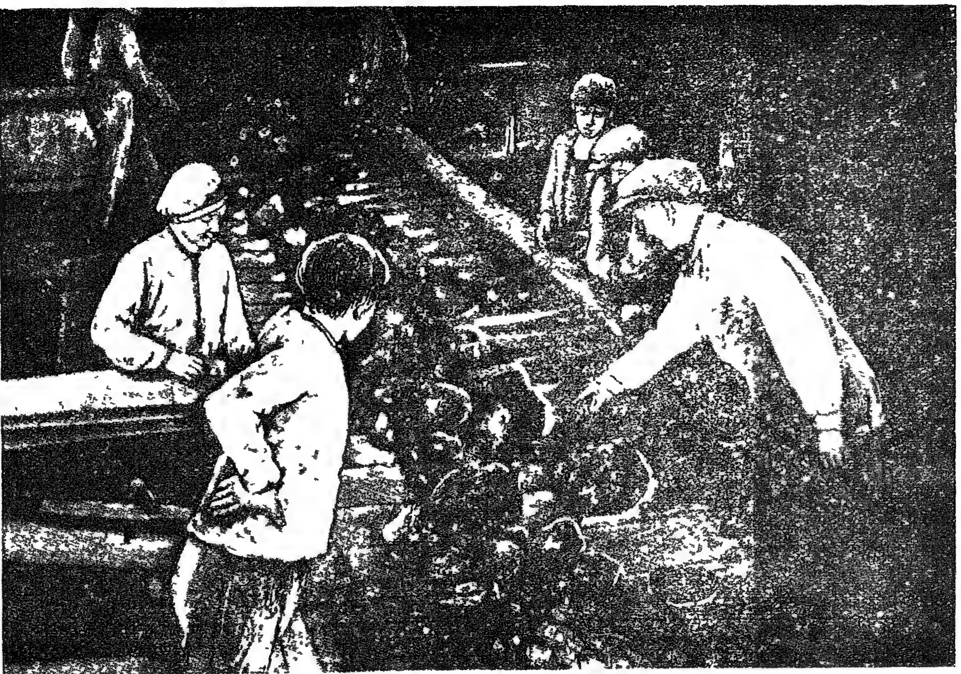
ग्रेट-ब्रिटेन मे भी मीथेन का बढ़ता हुआ उपयोग हो रहा है। उत्तरी वेल्स में आयिर-बिन्दु[3] की कोयला खान मे इसे वाष्पित्रों के नीचे जलाया जाता है, कम्बर-लैंड मे हे-कोयला-खान[4] में गैस-उद्योग को इसका प्रदाय किया जाता है। खान से निकलनेवाली वायु का जलना विकास का एक आशाजनक रूप है, यद्यपि इसम मीथेन का केवल थोडा अनुपात होता है, इसे गैस-वरीवर्त्त[5] में जलाया जा सकता है जिसमें बहुत निम्न-कोटि के गैसीय ईधनो का उपयोग हो सकता है।

कोयले का शुद्धीकरण

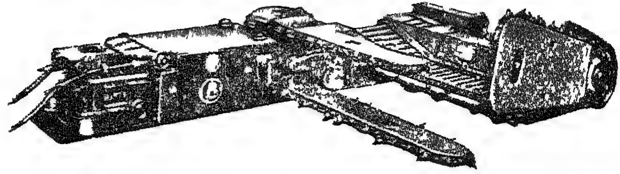
धरातल के ऊपर किया जानेवाला मुख्य कार्य कोयले को छाँटना और विशुद्ध करना है। मैल की कुछ मात्रा को अर्थात् कोयले के अधश्छेदन के बीच उत्पादित चट्टानी पदार्थ को, धरातल तक आने से रोकना असभव है। उपभोक्ता इस पदार्थ पर आपत्ति करते हैं; क्योकि इससे उष्मा बहुत कम उत्पन्न होती है जब कि यह राख की मात्रा बढ़ाती है। अतः जितना सम्भव हो सके उतना पूर्णतः इसे पृथक् किया जाता है। इसके अतिरिक्त जो कोयला ऊपर आता है और जिसे शिरा-पथ[6] के नाम से जाना जाता है, वह सभी आकार का होता है और प्रायः सभी औद्योगिक उद्देश्यों के लिए इसे कई आकारों में छाँटना पडता है।

पहले हाथों से छाँटना एक नियत विधि हुआ करती थी। इस विधि में बच्चों, भूमि के नीचे कार्य करने के अयोग्य पुरुषो या स्त्रियों का एक दल चलती हुई पट्टिका पर जाते हुए कोयले को देखता रहता था और मैल को अलग करता जाता था या कोयले के भिन्न-भिन्न आकारो और जातियों को पृथक् कर लेता था (प्लेट ५)। अब श्रम अधिक मँहगा पड़ता है इसलिए कोयले को पृथक् करने[7] और साफ करने के लिए यंत्रों का प्रयोग प्रचलित हो गया है। ब्रिटेन का कदाचित् आधे से अधिक कोयला

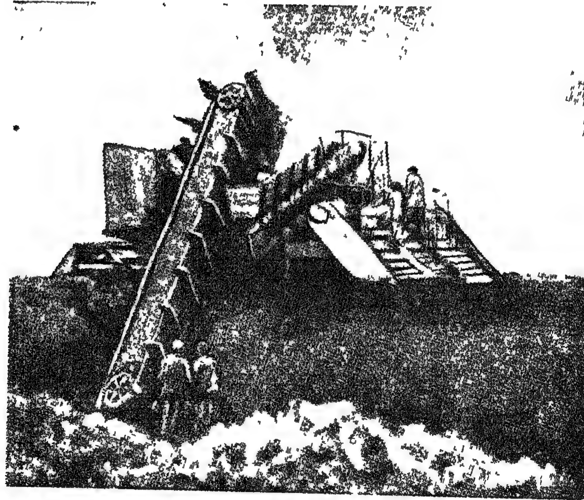
1. Town-gas
2. Calorific value
3. Point of Ayr
4. Haigh Colliery
5. Gas-turbines
6. Run-of-the-mine
7. Sorting



प्लेट ५——कोयले को साफ करना और छाँटना (दे० पृ० ३०)



प्लेट ६—कोयला काटने और लादने वाली मेकोमूर मशीन (दे० पृ० २७)



प्लेट ७—मशीन से पीट काटना (दे० पृ० ५१)

इसी प्रकार छाँटा जाता है। कोयले और पत्थर के विषम टुकड़ों को पृथक् करने के लिए एक मशीन के बनाने की समस्या कठिन प्रतीत हो सकती है किन्तु वास्तव में इसे करने की अनेक विधियों का सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा चुका है। ये सब कोयले और मैल (अर्थात् शिला या दूसरी चट्टान) के बीच थोड़े से अन्तर का लाभ उठाकर कार्य करती है।

पहले सामान्यतः उचित दूरी से लगी छडों के परदो या जालियो के द्वारा कोयले को आयतानुसार छाँटा जाता है और तब इसे कोयला-मार्जकों[1] में भरा जाता है। शिला[2] कोयले से प्राय. दुगनी सघन होती है जिससे ऐसी व्यवस्था करना कठिन नहीं है कि पानी की एक धारा कोयले को उठाकर पृथक् ले जाय, किन्तु शिला को न उठा सके जो कि पेंदी में डूब जाती है। या फिर खान से निकलने वाले कोयले को एक भारी तरल में, जो एक घोल या पंक होता है, डाला जा सकता है जिसमें कोयला तैरता है और शिला डूब जाती है।

बहुत छोटा कोयला, जिसे प्रायः धूल ही समझना चाहिए, इस प्रकार पृथक् नहीं किया जा सकता, किन्तु यदि इसे एक उचित फेन[3] मे डुबोया जाय तो कोयले से बुल-बुले चिपक जाते है जो कि तैरता है, किन्तु पत्थर के चूरे से बलबुले नही चिपकते और वह डूब जाता है। इस प्रकार लगभग २५ लाख टन कोयला-धूल की पुनः प्राप्ति होती है जिसमें से अधिकांश का उपयोग धातु-शोधन कार्य में प्रयुक्त होनेवाले कोक के बनाने में किया जाता है।

तरल का उपयोग किये बिना कोयले को मैल से पृथक् करने के कई ढंग है। वायु की एक उचित रूप से नियमित धारा कोयले को उठा लेती है, किन्तु मैल को नही; कोयला काँच की एक पट्टिका से टकराकर उछलेगा किन्तु मैल नही; एक इस्पात-तल पर से कोयला मैल की अपेक्षा अधिक सरलता से फिसलेगा। कोयला और मैल को पृथक् करने के लिए बहुत सी भिन्न-भिन्न प्रकार की कार्यक्षम और प्रभावकारी मशीनों के बनाने में इन सब गुणो का लाभ उठाया गया है।

उपभोक्ता तक कोयले का परिवहन

यह भली-भाँति ज्ञात है कि कोयले के व्यापारी के स्थान की अपेक्षा गर्त-शीर्ष पर कोयले का मूल्य बहुत कम होता है। यह अन्तर परिवहन के व्यय के कारण होता है।

1. Coal-cleaners 3. Shale 2. Froth

कोयले का लादना, ले जाना, उतारना और उपभोक्ता तक पहुँचाना, ये सब अनिवार्य प्रतीत होते है और कोयले के परिवहन का व्यय इसके खनन के व्यय के बराबर हो सकता है। इसलिए युद्ध के पूर्व गर्त-शीर्ष पर जिस कोयले का मूल्य २५ शिलिग प्रति टन होता था, गृहस्थो को वही ५० शिलिग प्रति टन की दर पर बेचा जाता था और इस धधे से किसी को भी अधिक लाभ नही होता था।

मुझाव रखे गये है कि जलधारा में बहाकर एक चौड़ी नल-पाँत[1] के द्वारा तैल की भाँति कोयले का भी परिवहन किया जाय। राष्ट्रीय-कोयला-बोर्ड[2] भी कोयले की खानो[3] के शक्ति-केन्द्र[4] स्थापित करने और उनमें ऐसे ईधन जलाने की योजना बना रहा है जो किसी भी प्रकार बेचे नहीं जा सकते, क्योंकि उनमें इतने शिला-खण्ड और पत्थर रहते है कि उनके परिवहन का व्यय बहुत ज्यादा हो जाता है। यद्यपि इन शक्ति-केन्द्रो द्वारा एक उपयोगी कार्य होगा, तथापि इनसे परिवहनसमस्या का हल नही होता, क्योकि धातुशोधन आदि जैसे बहुत से कार्यो के लिए कोयले का उपयोग होता है जिनके लिए विद्युत् का उपयोग नहीं किया जा सकता। फिर भी, यह स्पष्ट है कि द्रव और गैसीय ईधन और इनसे भी अधिक विद्युत् के परिवहन मे ठोस ईधन के परिवहन की अपेक्षा अधिक सुविधा होती ही है।

कोयले के भेद

विशिष्ट गुणों की दृष्टि से कोयले-कोयले मे बहुत अन्तर होता है। सचमुच में यह कदाचित् ही स्वीकार किया जायगा कि एंथ्रेसाइट और लिग्नाइट दोनो का उद्भव एक है, किन्तु ये दोनों ही परिकुचित[5] और परिर्वातित वनस्पति है और कोयले के नाम से पुकारे जाने का अधिकार रखते हैं। कोयले मे कार्बन के अनुपात के अनुसार श्रेणियो में उसके विभाजन की व्यवस्था की जा सकती है। उसका वर्गीकरण सामान्यतः इस प्रकार किया जाता है—

(१) एंथ्रेसाइट (अंगार प्रस्तर)
(२) बिटुमिनी कोयला (अद्रिज कोयला)
(३) लिग्नाइट (खनिजांगार)

पर इन श्रेणियों में भी कई विभेद है।

1. Pipe-line
2. National Coal Board
3. Colliery
4. Power station.
5. Mummified.

कोयले के गुणों में इतना अन्तर होता है कि ग्राहक के लिए यह जानना आवश्यक हो जाता है कि अपने रुपये के बदले उसे क्या मिल रहा है। जो कोयला वह मोल ले रहा है उससे वह कितनी उष्मा का उत्पादन कर सकेगा, इस विषय से उसका सबसे अधिक सम्बन्ध होता है। इसकी अभिव्यक्ति इसके उष्मीय-मान से की जाती है। इंजीनियर उष्मा को ब्रिटिश-उष्मा-मात्रकों[1] में मापते है। यह मात्रक उष्मा की वह मात्रा है जो एक पौण्ड जल का ताप एक अंश फारेनहाइट बढा देती है। इसलिए कोयले और दूसरे ईंधनों की तापन-शक्ति सामान्यतः "इतने ब्रिटिश उष्मीय मात्रक प्रति पौंड" के रूप में व्यक्त की जाती है। एंथ्रेसाइट का उष्मीय-मान १६००० ब्रिटिश उष्मीय मात्रक प्रति पौड है। ऐसा कहने का तात्पर्य है कि जब एंथ्रेसाइट का एक पौण्ड जलाया जाता है तो उत्पादित उष्मा १६००० पौड जल को ६०° (फारेनहाइट) से ६१° फा० तक गर्म कर देगी या अधिक सामान्य मात्रकों का उपयोग करें तो दस गैलन (५२° फा०) शीतल जल को (२१२° फा०) उबाल देगी।

इस अंक का मूल्य निकालने के लिए जिस कोयले का परीक्षण किया जा रहा हो उसके तौले हुए थोड़े से नमूने को एक "बम-कैलारीमीटर" मे जलाया जाता है जिसमें अधिक दबाव वाली आक्सिजन भरी रहती है और इसके ताप में होनेवाली वृद्धि को नापा जाता है।

जब कि कोयले का उष्मीय मान इसका सबसे महत्त्वपूर्ण गुण है, इसमें दूसरी अनेकों विशेषताएँ होती हैं जो उद्योगपतियो को आर्कषित करती हैं। इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण इसका इष्टक[2] बनने का गुण है। कुछ प्रकार के कोयले इस्पात उद्योग के लिए आवश्यक दृढ़, कठोर कोक बनाते हैं, दूसरे कोयले कोमल चूर्णनीय[3] कोक बनाते हैं, जब कि कुछ प्रकार के कोयले कोक बिलकुल नही बनाते। कोयले में जल और राख व्यर्थ के अंश हैं, राख का अनुपात १·५ और १० प्रतिशत के बीच रहता है। कुछ राख सरलता से पिघलकर झाँवाँ बन जाती है, जब कि कुछ चूर्ण के रूप में शेष रह जाती है। यह एक ऐसा विषय है जो वाष्पित्रो में अग्नि जलाने के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। कुछ कोयलों में ५ प्रतिशत तक गधक रहता है जो धातु पर प्रभाव डाल सकती है और कुछ में इतनी कम कि वह ·४ प्रतिशत के लगभग ही होती है। इस कारण बड़ी राशि में कोयले का क्रय करनेवाले ग्राहक प्रयोगशाला में अपने कोयले का परीक्षण करते हैं और परीक्षण के फल के अनुसार ही वे इसे खरीदते है। कोयले का घरों में

1. British Thermal Units 2. Caking 3. Friable

उपयोग करनेवाले को उतना मूल्य देना चाहिए जो शिला, राख और नमी के अनुपात को मुजरा लेने पर बनता हो, किन्तु वह बहुत हद तक कोयले के व्यापारी के हाथों में होता है।

कोयले के तीन मुख्य भेद होते है जिनमें से हर एक के अनेको रूपान्तर मिलते है। ये भेद निम्नलिखित है—

(१) **एंथ्रेसाइट**, जिसमे ९०% कार्बन होता है। यह शुद्ध, चमकीला और कठोर होता है, प्रायः बिना धुएँ और ज्वाला के जलता है और इसका उष्मीय मान बहुत अधिक, १६००० ब्रिटिश-उष्मीय-मात्रक प्रति पौण्ड तक, होता है। यह एक मूल्यवान् घरेलू ईधन है और रासायनिक[1] व्यापार मे कार्बन के उद्गम के रूप में इसका उपयोग होता है।

(२) **बिटुमिनी कोयला**, जो व्यापार का साधारण कोयला है। यह कोक में परिवर्तित होनेवाले और परिवर्तित न होनेवाले दो भेदो में विभाजित किया जा सकता है। पहले प्रकार के कोयले का उपयोग कोक और गैस बनाने और दूसरे का उपयोग केवल भाप बनाने या घरेलू कार्य करने में किया जाता है। इसका उष्मीय मान सामान्यतः १२०००–१४००० ब्रिटिश उष्मीय मात्रक होता है।

(३) **लिग्नाइट**, इंग्लैण्ड में इसका अधिक मात्रा में खनन नही होता। यह एक भूरा या काला-सा पदार्थ होता है जिसमे से कुछ कठोर पीट की भाँति और कुछ निष्प्रभ कोयले की भाँति दीखता है। इसका उष्मीय मान ११०००–१२००० ब्रिटिश-उष्मीय मात्रक प्रति पौंड के लगभग है किन्तु कम भी हो सकता है।

कोयला क्या है?

हमें पढ़ाया जाता था कि कोयला मुख्य रूप से कार्बन ही है, किन्तु इसमें इतना असत्य है कि इसमें मुक्त कार्बन न होकर कार्बन से मिले दूसरे तत्त्वो[2] के यौगिक होते हैं। कुछ विलायकों[3] में कोयले को घोला जा सकता है, किन्तु कार्बन को किसी में भी नही। अतः कोयला कार्बन नहीं है, पर इसमे कार्बन के यौगिक होते है।

निस्संदेह कोयला कोई एक यौगिक नही है, किन्तु जो यौगिक इसका अधिकांश हे उसकी विशेषताओं के बारे मे कुछ सिद्धान्त माने जाते हैं। कोयले के बारे में वर्तमान मत यह है कि यह बहुत बड़े अणुओं[4] से बना हुआ है जो कार्बन के सैकड़ों पर-

1. Chemical 2. Elements 3. Solvents 4. Molecules

माणुओं[1] से निर्मित होते हैं जो एक षड्-भुजाओं[2] वाले क्रम में व्यवस्थित रहते है और हाइड्रोजन एव आक्सिजन परमाणुओं से विशेष बिदुओ पर जुडे रहते हैं। एक सामान्य बिटुमिनी कोयले मे कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सिजन के परमाणुओं का अनुपात C_9H_6O के रूप मे व्यक्त किया जा सकता है।

कोयले में मिश्रित गधक और नाइट्रोजन भी होते है, किन्तु ये तत्त्व उन यौगिकों के अंश होते हैं जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है या वे दूसरे पृथक् यौगिकों के अश होते है, यह निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है।

जब कोयला गर्म किया जाता है तव क्या होता है ?

जब कोयला धीरे-धीरे गर्म किया जाता है तो रासायनिक परिवर्तनों की एक परम्परा घटित होती है। २००° सेंटीग्रेड तक तो जल और कार्बन-डाइ-आक्साइड का उत्पादन होता है और २०० तथा ३००° सेंटीग्रेड के बीच कोयले के गधक यौगिको का विच्छेदन[3] आरम्भ हो जाता है जिनसे गधक मिश्रित हाइड्रोजन उत्पन्न होता है। ३००° से० से ऊपर नाइट्रोजन यौगिको से अमोनिया का निकलना आरम्भ हो जाता है और कुछ तैल दिखाई देने लगते है। यह सब केवल एक छोटा-सा प्रभाव है और कोयले का मुख्य विच्छेदन ३७५–४००° से० के लगभग (एक निम्न रक्त-उष्मा[4] के नीचे) प्रारम्भ होता है। पहले कार्बन-मोनो-आक्साइड बनती है, फिर हाइड्रोजन और साथ-ही-साथ कार्बन के वाष्पशील यौगिकों की एक बड़ी भिन्न संख्या। यह प्रक्रम ५००–६००° से० (एक निम्न रक्त-उष्मा) तक होता रहता है और इससे अधिक ताप होने पर कोयला कोक में परिवर्तित हो जाता है। गैस और दूसरे वाष्पशील पदार्थ की मात्रा कोयले के भार का १० से ४५ प्रतिशत तक हो सकती है।

कोयले को तपाने का फल ज्वलनशील[5] वाष्पशील द्रव्य की एक बड़ी मात्रा का निकास और कोक की रचना होता है जो अधिकतर कार्बन और राख होता है तथा जिसमें वाष्पशील द्रव्य बहुत कम या बिलकुल ही नहीं होता। जब कोयले के साथ इस प्रकार का व्यवहार किया जाता है तो इसका कार्बनीकरण[6] किया गया है ऐसा कहते है। जब कभी कोयला ५००° से० या इससे अधिक ताप तक गर्म किया

1. Atoms 2 Hexagon 3. Decomposition 4. Red-heat 5. Inflammable
6. Carbonisation

जाता है तो कार्बनीकरण होता है, पर जिस ताप पर वास्तव में यह किया जाता है, वह कुछ अंश तक दोनो, कोक के गुण और निकसित वाष्पशील द्रव्य के भेद तथा मात्रा, पर प्रभाव डालता है। अतः हम उच्चताप के कार्बनीकरण, जो कि पीत-उष्मा[1] (c. १०००° से०) पर होता है, और निम्न-ताप कार्बनीकरण में, जो (c. ५००—६००° से०) पर किया जाता है, अंतर करते हैं।

1. Yellow heat

अध्याय ३

ठोस इंधन का दहन

साधारण सिद्धांत

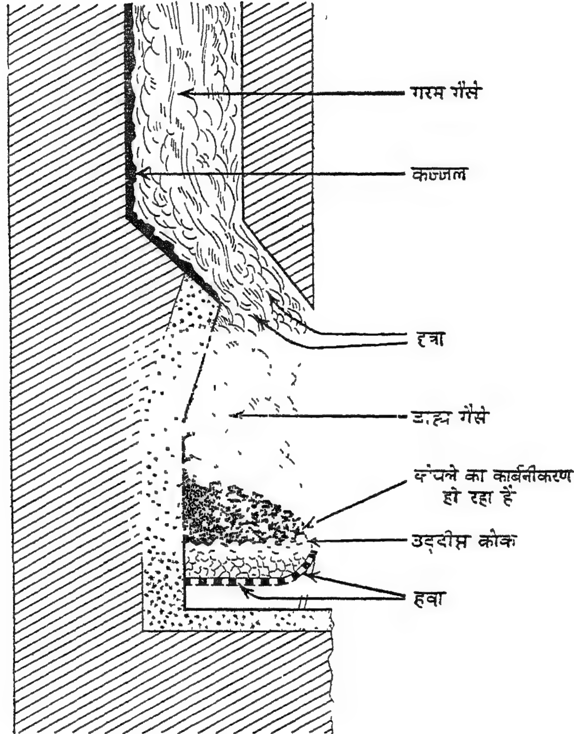
ग्रेट ब्रिटेन मे खानो से प्राप्त कोयले का तीन-चौथाई भाग कोयले के ही रूप में जलाया जाता है और इसका लगभग एक चौथाई व्युत्पन्न ईधनों—कोक और बहुत-से प्रकार की गैसों—में परिवर्तित किया जाता है। तो यह समझना अत्यधिक महत्त्व-पूर्ण है कि कोयला किस प्रकार जलाया जाय जिससे उसका सबसे अधिक प्रभाव पड़े।

कोयला कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सिजन के यौगिको का मिश्रण है, जिसमे साथ ही साथ गंधक-यौगिक, नाइट्रोजन-यौगिक और दूसरे खनिज पदार्थ मिले रहते है। कोयला-पदार्थ[1] का एक सन्निकट रासायनिक सूत्र C_9H_6O का कोई गुणज[2] (अपवर्त्य) होगा। कोयले से जितनी उष्मा मिल सकती है उसे पूर्णतया प्राप्त करने के लिए कार्बन की पूर्ण मात्रा को जलाकर कार्बन-डाइ-आक्साइड और हाइड्रोजन को जल में परिवर्तित करना आवश्यक है। यदि कोई गैस, वाष्पशील पदार्थ या कज्जल[3]—वास्तव में किसी भी प्रकार का धुआँ—बच निकले तो कोयले के जलने से पूर्ण लाभ नहीं उठाया जा रहा है, उष्मा व्यर्थ जा रही है और वायु दूषित हो रही है। यदि ग्रेट ब्रिटेन का कोयला इस प्रकार जलाया जाय तो शायद इस समय जलाये जाने-वाले कोयले का पाँचवाँ भाग बचाया जा सकेगा और हमारी कोयले की वर्तमान समस्या भी हल हो जायगी।

यदि हम यह भी मान लें कि कोयला इस प्रकार जलाया जाता है कि इसकी पूर्ण ऊर्जा उष्मा में परिवर्तित हो जाती है तो भी हमें अभी यह देखना है कि उष्मा व्यर्थ न जाने पावे। कोयले से उत्पादित उष्मा की किसी विशेष काम के लिए—भाप उत्पन्न करने, किसी कमरे को तपाने या लोहे को पिघलाने के लिए—आवश्यकता होगी और यदि किसी उत्पादित उष्मा द्वारा वह निश्चित कार्य नही होता तो वह व्यर्थ जा रही है।

1. Coal-substance 2. Multiple 3. Soot

तो कोयले का पूर्ण रूप से जलाया जाना और जहाँ आवश्यकता हो केवल वहीं पूर्ण उष्मा का उपयोग--ये ही इंजीनियर की समस्याएँ है। पहली समस्या को हल करना कठिन है; दूसरी का हल असम्भव है किन्तु इसके हल के अधिक निकट पहुँचने का सदा प्रयत्न किया जा सकता है।



चित्र ८. जब कोयला एक खुली अँगीठी में जलाया जाता है तब क्या होता है।

पहले एक साधारण घरेलू अँगीठी में कोयला जलाने के सबसे मामूली ढंग पर विचार कीजिए। आप अग्नि पर एक बेलचा भरकर कोयला डाल देते है। बहुत शीघ्र एक हरा-सा भूरे रंग का धुआँ उठता है जिसमें कोयले का कार्बनीकरण[1] करने में

1. Carbonization

उष्मा के प्रभाव से उत्पादित तारकोल[1]-सा आसुत[2] पदार्थ और नमी रहती है; शीघ्र ही यह धुआँ समाप्त हो जाता है और वाष्पशील पदार्थ चमकीली ज्वालाओं के साथ काला धुआँ निकालते हुए जलने लगते हैं जिससे चिमनी पर कज्जल जम जाता है। कोयला इस प्रकार क्रमश: एक प्रकार के कोक में परिवर्तित होता जाता है जो अन्त मे एक तीव्र उद्दीप्ति[3] और कार्बन-मोनो-आक्साइड की छोटी नीली ज्वालाओं के साथ जलता है। किसी भी समय पर चिमनी की गैसों के विश्लेषण[4] से ज्ञात होगा कि उनमें बिना जला दाह्य[5] द्रव्य रहता है और थर्मामीटर से पता चलेगा कि वे गर्म होती है। वास्तव में कोयले से निकली हुई उष्मा के पॉच अंशो में से चार को ये गैसे लिये रहती हैं। परन्तु इस उष्मा का कुछ अंश चिमनी की ईटो की बनावट द्वारा अवशोषित हो जाता है और भवन की ऊपरी मंजिलों को तपाने में उसका उपयोग किया जा सकता है।

इस तरह कोयला जलाना किसी इजीनियर को गवारा नही हो सकता। जब कि घरेलू अग्नि कोयले की ऊर्जा का पॉचवॉ अंश उपयोग में लाती है, इंजीनियर उसके अस्सी प्रतिशत का उपयोग करने की आकाक्षा रखता है और बड़े शक्ति-केन्द्रों[6] में वह इसे नब्बे प्रतिशत तक बढ़ा सकता है।

भाप उत्पन्न करना

कोयले का सबसे अधिक उपयोग (कुल का कदाचित् ४५ प्रतिशत) भाप उत्पन्न करने में होता है, जिसका प्रसार इंजन में शक्ति उत्पादन करने के लिए कराया जाता है। भाप-इंजनों का मुख्य उपयोग वैद्युत-शक्ति-केन्द्रों,[7] सामान्य निर्माण-शालाओ की मशीनो, रेल के इंजनों और जहाजो मे होता है।

साधारणत: रेल के इंजनो और छोटे औद्योगिक वाष्पित्रों[8] की अपेक्षा शक्ति-केन्द्रों के बहुत बड़े संयंत्रो और बड़े जहाजों मे कोयला अधिक लाभदायक रूप से जलाया जा सकता है, किन्तु सभी मे नियम प्राय: एक से ही हैं और वास्तव में यहॉ जो कुछ कहा जा रहा है उसका अधिकांश कोयला जलानेवाले किसी भी प्रकार के संयंत्र पर लागू होता है।

एक कार्यक्षम भाप-वाष्पित्र के लिए निम्नलिखित बातों का होना आवश्यक है—

(१) कोयले का पूर्णरूप से जलकर कार्बन-डाइ-आक्साइड और भाप मे परिवर्तित होना।

1. Tarry 2. Distillation 3. Glow 4. Analysis 5. Combustible
6. Super-power-stations 7. Electrical power-stations 8. Boilers

(२) उष्मा का जलते हुए कोयले से वाष्पित्र के पानी में, यथासंभव पूर्ण रूप से स्थानान्तरित हो जाना ।

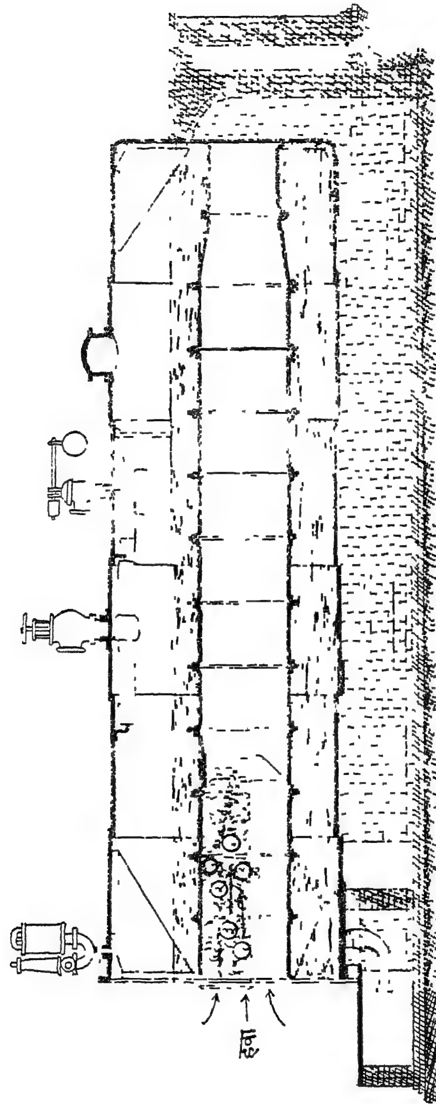
(३) वाष्पित्र छोड़ देने के बाद भी गैसों में बची हुई उष्मा का उपयोग ।

कोयले का कार्यक्षम दहन

औसत किस्म के कोयले का एक टन जलाने के लिए दस टन हवा की आवश्यकता होती है। इस हवा मे लगभग दो टन आक्सिजन और आठ टन नाइट्रोजन होता है। यह सब नाइट्रोजन, दहन से बनी भाप और कार्बन-डाइ-आक्साइड जब चिमनी स्तूप[1] से निकलती है तो सयंत्र में डाले हुए कोयले और उसमें प्रविष्ट वायु की अपेक्षा अधिक गर्म होती है। इससे स्पष्ट है कि गर्म नाइट्रोजन, कार्बन-डाइ-आक्साइड इत्यादि को वायु में निकाल देने से प्रत्येक वाष्पित्र-संयत्र में उष्मा का व्यर्थ व्यय होगा। यदि गैसो को वाष्पित्र छोडने के पश्चात् चिमनी स्तूप से प्रवाहित कराकर वायु में मिलाया जाय, तो वे अपने साथ कोयले की उष्मा का लगभग एक तिहाई अंश ले जा सकती है। इससे बहुत सी शिक्षाएँ मिलती है। प्रथम, कोयले को पूर्णतः जलाने के लिए जितनी वायु पर्याप्त हो उससे अधिक वायु का उपयोग नही करना चाहिए, नहीं तो अनावश्यक वायु को भी गर्म करना पड़ेगा। दूसरे, ईधन शुष्क होना चाहिए, नही तो शीतल जल को गर्म भाप में परिवर्तित करने मे उष्मा का अपव्यय होगा और तीसरे, वाष्पित्र से निकलने वाली गैसों की उष्मा का किसी लाभदायक कार्य करने के लिए उपयोग होना चाहिए।

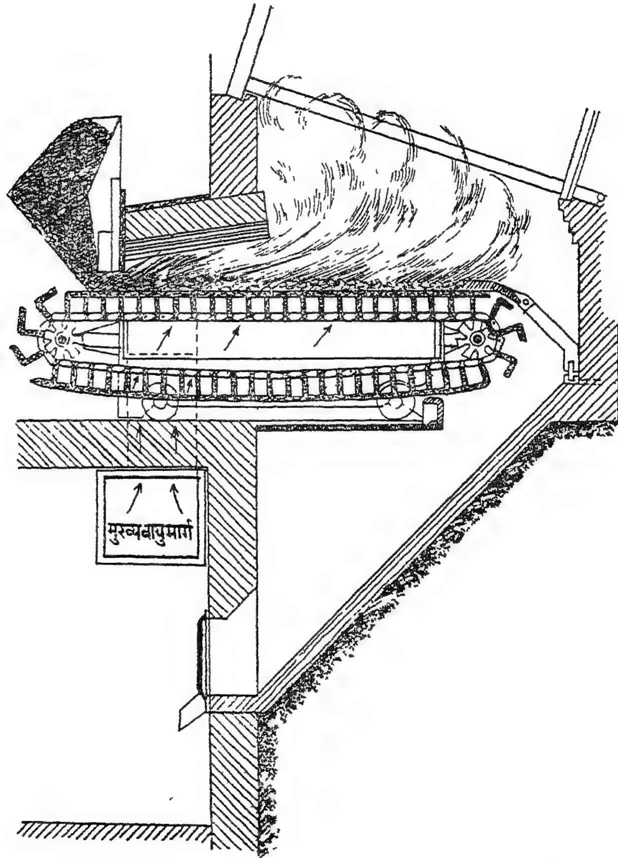
वाष्पित्र मे अग्नि जलाना स्पष्टतया ही एक कला है, यदि हाथों द्वारा यह किया जाय और यदि यत्रों द्वारा किया जाय तो यह एक विज्ञान है ! तो मान लीजिए कि हमारे पास हाथ से जलाया जानेवाला एक वाष्पित्र कार्य कर रहा है (चित्र ९)। उसमें तली मे उद्दीप्त ईधन का एक स्तर[2] है (१) ; झोकनेवाले ने अभी अभी कोयले की एक पतली तह (५) को इसके ऊपर फेंका है। छड़ों के नीचे से वायु प्रवेश कर रही है, यह उद्दीप्त ईधन को कार्बन-डाइ-आक्साइड मे परिवर्तित कर देती है (२,३); पर इसमें से कुछ की प्रतिक्रिया श्वेत-तप्त[3] कार्बन रूप से होती है जिससे कार्बन-मोनो-आक्साइड बनती है (४); जब तक वायु और गैसे ईधन के तल तक पहुँचती है, वायु की समस्त आक्सिजन व्यय हो चुकती है। इसी बीच में तल के ऊपर का कोयला (५)

1. Stack　　2. Bed　　3. White-hot



चित्र ९. एक लंकाशायर वाष्पित्र में
कोयले का दहन (पृ० ४० देखिए)

गर्म होता जा रहा है और विच्छेदित हो रहा है। इससे गैस तथा तारकोल जैसा पदार्थ निकलता है। इस प्रकार ईंधन की तली से बाहर जानेवाली गैसो मे काफी अच्छा ईधन, मिथेन, हाइड्रोजन, कार्बन-मोनो-आक्साइड, तारकोल इत्यादि रहते है। इन्हें जलाने के लिए और अधिक वायु का पहुँचाना आवश्यक है, इसलिए ईधन-प्रस्तर के ऊपर वायु का दुबारा प्रवेश कराया जाता है(६)। तब गैसें ज्वाला के रूप में जलती है और अधिक उष्मा का उत्पादन करती है।



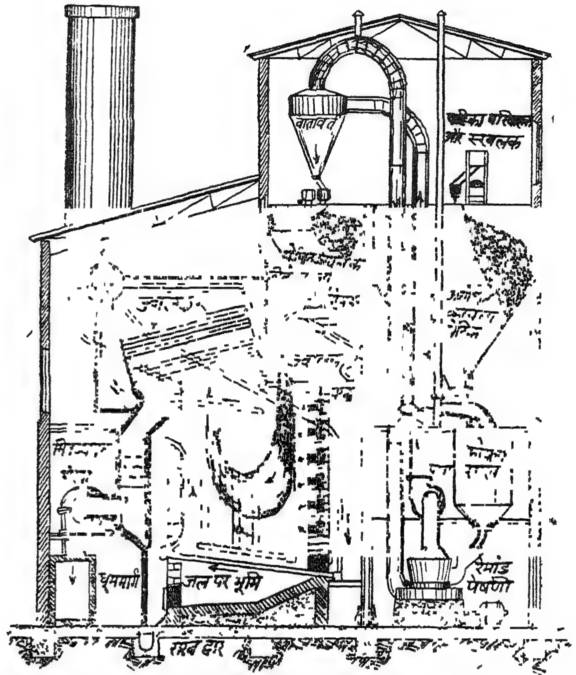
चित्र १०. एक स्थान से दूसरे स्थान तक गमन करनेवाली अँगीठी द्वारा कोयले की यांत्रिक झोंक।

किन्तु ज्यों-ज्यों ईंधन की तली पर झोकनेवाले के द्वारा फेंका हुआ कोयला उद्दीप्त कोक में परिवर्तित होता है, इससे दाह्य गैस का निकलना बराबर कम होता जाता है और वायु के दुबारा प्रवेश की आवश्यकता भी बराबर कम होती जाती है। अतः, यदि एक वाष्पित्र में आन्तरायिक[1] रूप से ईंधन झोंका जाय तो दुबारा प्रवेश होनेवाली वायु के निरन्तर सामंजस्य[2] की आवश्यकता होती है—और यह सन्तोष-जनक रूप से नही किया जा सकता। इस कारण सभी कार्यक्षम सयंत्रों मे झोकने का कार्य यत्रो द्वारा किया जाता है। कोयले को हर समय और एक ही दर से प्रवेश कराया जाता है जिससे ईंधन के प्रस्तर (तली) से निकलने वाली गैसों की गठन[3] सदा एक रहती है और दुबारा प्रविष्ट की गयी वायु की उन्हें सदैव एक ही मात्रा में आवश्यकता होती है। इस प्रकार यह सम्भव हो जाता है कि एक ओर तो वायु की कमी के कारण ईंधन को व्यर्थ व्यय होने से बचाया जाय और दूसरी ओर अनावश्यक वायु के कारण होनेवाला उष्मा का अपव्यय रोका जाय।

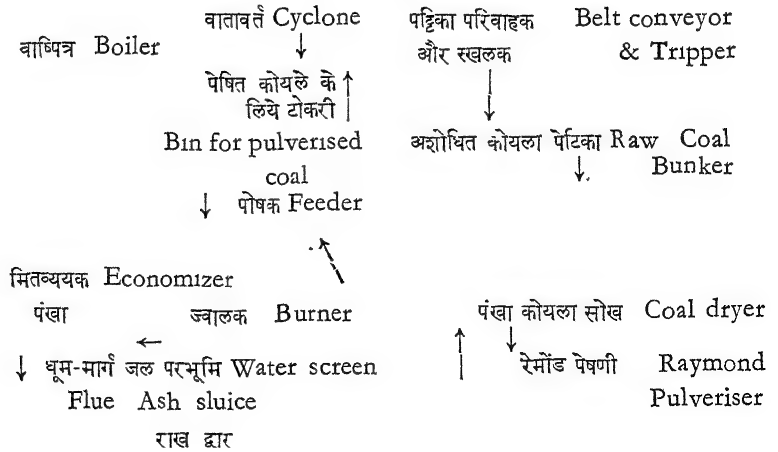
कोयला झोंकनेवाले यत्र कई प्रकार के हैं। कुछ कोयले को ईंधन की तली के निचले हिस्से मे ढकेलते हैं जिससे कोयले से निकले हुए तारकोलीय द्रव्य का ऊपर के उद्दीप्त ईंधन की उष्मा द्वारा विच्छेदन हो जाता है; कुछ में, कोयला भ्राष्ट्र के सामने के भाग में ढकेल दिया जाता है जिससे कोयले से निकलने वाली गैसों को गर्म ईंधन के ऊपर से प्रवाहित होना पड़ता है। जिस प्रकार के झोंकनेवाले यंत्र का चित्र दिया गया है (चित्र १०) वह एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जायी जानेवाली अँगीठी है और बहुत से बड़े-बड़े उद्योगों मे उसका उपयोग किया जाता है।

ईंधन झोकने की बहुत सी कठिनाइयाँ पेषित कोयले (या दूसरे ईंधन) के उपयोग से हल हो जाती है। कोयला बड़ी सरलता से चूरे में परिवर्तित हो जाता है (हाँ, बहुत ही सरलता से, जैसा कि घर मे कोयला रखने की टोकरी की तली देखने से साबित हो जाता है) और वायु के एक झोके से इस चूरे को भ्राष्ट्र के भीतर पहुँचाया जा सकता है। वहाँ यह प्रायः तुरन्त और पूर्णतः जल जाता है (चित्र ११)। पीसने वाली चक्कियाँ कई प्रकार की हो सकती है, बड़े-बड़े उद्योगो में बहुधा कन्दुक-पेषणी[4] का उपयोग किया जाता है जिसमे कोयले को घूर्णन करते हुए एक बेलन में जिसमें इस्पात की भारी कन्दुकें होती हैं, डालकर पीसा जाता है। जैसे ही चूरा बनता है उसे वायु की एक धारा से संग्रह करनेवाले खत्ते में या सीधे भ्राष्ट्र म उडाया जाता है जहाँ एक

1. Intermittently 2. Adjustment 3. Composition
4. Ball-mills



चित्र ११. पेषित कोयले द्वारा जलनेवाला बड़ा वाष्पित्र-संयंत्र



प्रकाश फैलाने वाली तीव्र ज्वाला के रूप में यह प्रज्ज्वलित[1] होता है। भ्राष्ट्र की दीवारों में वाष्पित्र से जुड़ी हुई जल-नलिकाएँ लगी रहती है और इन नलिकाओं का आवरण या जाली इसके फर्श का काम देती है। भ्राष्ट्र से बाहर निकलने वाली गैसो में धूल के रूप में राख मौजूद रहती है और एक असहनीय अनुत्रास से बचने के लिए इसे अलग करना होता है। पेषित ईंधन का लाभ यह है कि भ्राष्ट्र का नियंत्रण आसानी से किया जा सकता है जिससे वायु के न्यूनतम प्राचुर्य[2] के साथ पूर्णदहन करने के लिए वायु की उपलब्धि में तालमेल बैठाना सरल हो जाता है। इससे व्यर्थ की गैसो में होनेवाली उष्मा की कुछ हानि रोकी जा सकती है। झाँवें से कोई कठिनाई नही होती और चूर्ण किये गये ईंधन को उठाना-धरना तथा वितरित करना सरल होता है। इसके अतिरिक्त दूसरे ढंग से छोटे कोयले का भी उपयोग किया जा सकता है, जो अन्यथा व्यर्थ बरवाद हो जाता है। इन लाभों के विपरीत, कोयले को चूर्ण करने के व्यय को भी सामने रखना है। इस प्रक्रम को बराबर पसन्द किया जा रहा है, किन्तु उपयोग किये जानेवाले सारे कोयले का केवल लगभग १५% ही इस प्रकार जलाया जाता है।

तो मान लीजिए कि वायु का पूर्ण नियमन हो सकता है। ऐसी दशा में ईंधन से उसकी पूर्ण उष्मा प्राप्त हो सकेगी। इसका कुछ अंश विकिरण,[3] प्रकाश-और-उष्मातरगों[4] के बाहुल्य में परिवर्तित हो जायगा और कुछ नाइट्रोजन, कार्बन-डाइ-आक्साइड और भाप पैदा करने मे लग जायगा जो इधन की तली[5] को ऊँचे ताप पर, प्रायः ६००° से०, छोड़ते हैं। अब समस्या यह है कि इस उष्मा का जितना अंश सभव हो सके, उतना वाष्पित्र के जल तक पहुँचाया जाय।

उष्मा को ईधन से वाष्पित्र में पहुँचाना

वाष्पित्र तक पहुँचने और वहाँ भाप उत्पन्न करने के लिए, ईधन की तली और उसके ऊपर की गसो की उष्मा को वाष्पित्र की दीवाल मे से निकालना होता है और यह स्पष्ट है कि इस दीवाल का क्षेत्रफल जितना अधिक होगा उतनी ही अधिक उष्मा गैसों में से निकल जायगी। इस सतह मे वृद्धि दो तरह से की जा सकती है (चित्र ११)— वाष्पित्र मे होकर जानेवाली अग्निनलिकाओं मे से गैसो को ले जाकर या जल को ऐसी नलिकाओं[6] में से ले जाकर जिनके चारो ओर गैसें चक्रण करती हैं, (जल-नलियाँ)।

1. Ignited 2. Excess. 3. Radiation 4. Light-and heat-waves
5. Fuel-bed 6. Fire-tubes

पहली पद्धति का उपयोग रेल के इजनो और छोटे वाष्पित्र सयत्रो मे किया जाता है; और दूसरी, जो अधिक कार्यक्षम किन्तु उतनी सीधी और सरल नही है, जलपोतो के इजनो, शक्ति-केन्द्रो और दूसरे बड़े सयत्रो के लिए चुनी जाती है।

जलनलिकाओ द्वारा ताप का विकिरण तुरन्त ही और प्राय पूर्णत. ग्रहण कर लिया जाता है; किन्तु गैसो की उष्मा के सबध मे ऐसी बात नही होती। फलतः तपानेवाली सतह को जितना सभव हो सके उतना विकिरण के लिए खुला रखना आधुनिक प्ररचना का लक्ष्य रहता है। उष्ण गैसे अपनी उष्मा का कुछ अश वाष्पित्र नलिकाओ[1] को दे देती है; उनका ताप, हम समझते है,* लगभग ६००° से० से कोई ४००° से० तक गिर जाता है। यह प्रत्यक्ष है कि यदि जलाये गये कोयले के प्रत्येक टन के पीछे ४००° से० तापवाली ग्यारह टन गैस वायु मे मिल जाती है तो उष्मा की बड़ी मात्रा व्यर्थ चली जाती है। ऊपर के उदाहरण मे यह कोयले की उष्मा का एक चौथाई होगा। इस कारण, जब तक कि इस उष्मा का कुछ अश पुनः वापस न मिले, इजीनियर की सतुष्टि नहीं होती।

मितव्ययक[2]

धूममार्ग मे छोड़ी हुई गैसो की उष्मा का उपयोग दो मुख्य उद्देश्यो के लिए किया जा सकता है—(१) उपयोग में लाये जानेवाले उस जल को गर्म करने में जो कि वाष्पित्र को दिया जायगा, (२) और भ्राष्ट्रो मे प्रवाहित की जानेवाली वायु को गर्म करने मे। इन दोनो प्रक्रमों द्वारा उष्मा फिर वापस मिल जाती है। किन्तु इस प्रकार पुन. प्राप्त हो सकनेवाली उष्मा की मात्रा सीमित होती है। सर्वप्रथम, वाष्पित्र मे वायु को प्रवाहित करनेवाला बल साधारणत. चिमनी-स्तूप की उष्ण गैस और प्राकृतिक वायु के एक स्तम्भ[3] के भार के अन्तर से प्राप्त होता है; अत चिमनी में गैस को आप जितना अधिक ठडा करेगे, यह अतर उतना ही कम होगा और वायु का झोका भी उतना ही कम हो जायगा। यदि वायु को, चिमनी-स्तूप मे से खीचने के बजाय पखो द्वारा भ्राष्टो मे प्रवाहित किया जाय तो इसे प्रवाहित करने के लिए शक्ति का उपयोग करना पड़ता है, और क्योकि अन्ततः यह शक्ति उष्मा से ही व्युत्पन्न होती है

1. Boiler-tubes

* ये अंक विभिन्न वाष्पित्र संयंत्रो में बहुत भिन्न हो सकते हैं, पर अंक कुछ भी हों, नियम सदा लागू रहता है।

2. Economizer 3. Column

अतः गैसों को अत्यधिक ठंडा करने से कोई लाभ नही होता। इसके अतिरिक्त, एक निश्चित ताप से नीचे, गैसों में मिली हुई भाप संघनित होने लगती है और सदा उपस्थित रहनेवाली सल्फर-डाइ-आक्साइड को घोल लेती है जिससे एक अम्ल की भाँति संक्षारक[1] द्रव बनता है जो संयत्र के जिस भाग को छूता है उसी को क्षति पहुँचाता है।

चिमनी की गैसें ही उष्मा के अपव्यय का एकमात्र कारण नहीं है, जो अनिवार्य रूप से भ्राष्ट्र के जड़ाव, वाष्पित्र की सतह इत्यादि से निकल जाती है। सावधानी से किया गया आच्छादन[2] इसे कम कर देता है, किन्तु इस प्रकार ईंधन की उष्मा के २–३ प्रतिशत के व्यर्थ जाने की संभावना रहती ही है।

भाप बनाने की कार्य-क्षमता

हम भाप बनानेवाले अपने संयंत्र की क्षमता उस कोयले के दहन की उष्मा के प्रतिशत से व्यक्त कर सकते है जो कि वास्तव में भाप उत्पन्न करने में व्यय होता है। अत्यधिक कार्य-क्षमता रखनेवाले बडे-पैमाने के संयत्रों में यह ९० प्रतिशत तक पहुँच सकती है; एक अच्छे आधुनिक शक्तिकेन्द्र में ८० प्रतिशत और एक हाथ से जलाये जानेवाले लकाशायर के साधारण वाष्पित्र में ५५ प्रतिशत तक। बुरा आच्छादन, भाप का बाहर निकल जाना, ईंधन का बुरे ढंग से झोंकना और ऐसे ही अन्य कारणों से कार्य-क्षमता किसी भी अंक तक गिर सकती है।

कारखाने के लिए कोयला

बहुत से औद्योगिक प्रक्रमों, उदाहरणार्थ, मृत्तिका-उद्योग,[3] काँच, सीमेंट, चूना बनाने तथा धातुओ के बनाने और कार्य करने मे द्रव्य की बडी मात्राओं को एक उच्च ताप तक ले जाना होता है। ईंधन के लिए सदैव कोयला ही नही चुना जाता, क्योंकि इससे बनाये गये कोक या उत्पादक-गैस को बहुधा अधिक पसन्द किया जाता है

साधारणतः कार्य-क्षमता के दृष्टिकोण से वैसे ही नियम यहाँ लागू होते है जैसे कि भाप बनाने के लिए कोयले के उपयोग पर, यद्यपि उसी कार्य-क्षमता तक कदाचित् ही पहुँचा जा सकता है। कोयले के परिमित उपयोग का एक उदाहरण ईंटो के पकाने में पाया जाता है। एक-दूसरे से सम्बन्ध रखनेवाले कक्षो की एक श्रेणी मे ईंटों का ढेर लगा दिया जाता है। जिस भ्राष्ट्र में कोयला जलाया जाता है उससे निकलने

1. Corrosive 2. Lagging 3. Ceramics

वाली गैसें पहले उन ईंटों तक पहुँचती है जो कि पकायी जा रही हैं और जिनका ताप १०००° से० तक पहुँचना है। इस कक्ष से निकलनेवाली उष्ण गैसें उन कक्षों की कतार में से होकर प्रवाहित होती हैं जिनमें बिना पकी ईंटें रहती है, जिससे गैसों की उष्मा इन्हें तपाने और शुष्क करने में प्रयुक्त होती है, और स्तूप में से निकलनेवाली गैसें केवल लगभग २००° से० के ताप पर होती है।

काँच-भ्राष्ट्रों[1] में, जिन्हे एक बहुत उच्च ताप तक पहुँचना होता है, भ्राष्ट्र से निकलनेवाली गैसो का उपयोग भ्राष्ट्र मे प्रवेश करनेवाली गैसों और वायु को उष्ण बनाने मे किया जाता है। इससे तुरन्त ही एक बहुत उच्च ताप मिलता है और ईधन की बचत होती है।

घरों मे कोयले का दहन

वात-भ्राष्ट्रों[2] में लोहा बनाने तथा कोक और गैस बनाने के लिए कार्बनीकरण करने के लिए कोयले के उपयोग का वर्णन चौथे अध्याय में किया जायगा। कोयले का दूसरा मुख्य उपयोग घरो मे चीजे गर्म करने और रसोई बनाने में किया जाता है।

पचास वर्ष पूर्व, घरो मे कोयले के अतिरिक्त दूसरा ईधन बहुत ही कम जलाया जाता था; वास्तव मे अभी तक घरेलू उष्मा का मुख्य साधन कोयला ही है, यद्यपि कोक, गैस और विद्युत् का—जो निश्चय ही सभी कोयले से व्युत्पन्न किये जाते हैं—उपयोग कोयले के उपयोग के बराबर होता जा रहा है। किन्तु आज भी ग्रेट ब्रिटेन मे खनित कोयले का लगभग पाँचवाँ भाग घरों मे जलाया जाता है। कोयले से उत्पादित पदार्थों के जलाने की अपेक्षा, जिनके उत्पादन पर कुछ कम व्यय नही होता, कोयले को जलाना, यदि घरेलू साधन[3] उसको केवल अधिक कार्य-क्षमता से जला सकें तो कम खर्चीला होगा।

किन्तु इस समय वे ऐसा नही कर सकते। खुली अग्नि कोयले की उष्मा का ६०—८५ प्रतिशत व्यर्थ खर्च कर देती है और वायु को धुएँ से भर देती है। घरेलू गर्म-पानी के वाष्पित्र और चूल्हे[4] जिनमें गृहस्थ कोयला झोककर छोड़ देना चाहता है, कोयले-से सतोषजनक कार्य नही करते, जिसका कारण कोयले से निकलने वाली गैसों को जलाने के लिए वायु के दुबारा प्रवेश के नियत्रण की कठिनाई है। इसके अतिरिक्त कोयले कोयले में बड़ा अन्तर होता है। कोयले का व्यापारी जो कोयला देता है वह

1. Glass-furnaces 2. Blast-furnaces 3. Appliances 4. Cooker

बड़ा या छोटा, साफ या मैला, इष्टक बनानेवाला या इष्टक न बनानेवाला, झाँवाँ बनानेवाला या न बनानेवाला हो सकता है। शक्ति-सयंत्रों[1] का उपयोग करने वाले, प्राप्त किये गये कोयले का अध्ययन करते हैं और परिस्थितियो की ऐसी व्यवस्था करते है कि इसको जलाकर सर्वोत्तम लाभ उठाया जा सके, किन्तु घर का एक मात्र नियम है "भरो और भूल जाओ।" जो हो, यद्यपि कोयला (एंथ्रेसाइट के अतिरिक्त) घरेलू रसोई बनाने और पानी गर्म करने के लिए बहुत अधिक उपयोग में नही आता, तथापि घरेलू अँगीठियों मे प्रति वर्ष लगभग ३।। करोड़ टन कोयला जलाया जाता है, जिनमे से कुछ का उपयोग पानी गर्म करने के लिए भी किया जाता है।

कोयले की खुली अग्नि

इस पुस्तक के लेखक ने कुछ वर्षों तक लकडी के अतिरिक्त और कुछ नही जलाया जिसकी क्षमता, जलनेवाले पदार्थ के रूप मे, कदाचिद् कोयले की क्षमता से भी कम है। किन्तु इसकी गध रुचिकर होती है और यह देखने में आकर्षक प्रतीत होती है; वास्तव में लकडी की अग्नि मे हर समय कुछ न कुछ होता ही रहता है। चूल्हे में लकडी लगाते रहना और आवश्यकतानुसार आग को तेज या मन्द करते रहना वस्तुत एक अलग धंधा है—प्रायः ऐसा जो मन को भाता हो। लकडी की अग्नि को मेरे अधिक पसद करने का कारण वास्तव में सौन्दर्य की भावना है; इससे मेरी इन्द्रियो को प्रसन्नता होती है, यह भूतकाल से मेरा सबंध स्थापित कर देती है; और एक अच्छी अग्नि जलाने का कार्य निपुणता का ऐसा अद्भुत कर्म है जिससे मुझे थोडी सी प्रशसा का अवसर मिलता है। मै इस पर जोर केवल यह जानने के लिए दे रहा हूँ कि घरेलू तापन-कार्य को केवल इसकी कार्य-क्षमता से ही नही जाँचा जा सकता।

घरों मे ईंधन के उपयोग का वर्णन एक दूसरे अध्याय मे किया जायेगा। फिर भी यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि एक अच्छी अँगीठी में सावधानी से ईंधन भरने पर कोयले की दहन-उष्मा[2] का लगभग २५ प्रतिशत कमरे मे विकीर्ण हो जाता है जब कि और १५ प्रतिशत चिमनी के ईंटो से बने भाग में अवशोषित होकर फिर घर मे वापस आ जाता है। यदि एक औसत कार्यक्षमता वाले वैद्युत शक्तिकेन्द्र मे कोयले की वही मात्रा जलायी जाती तो २७ प्रतिशत से अधिक उष्मा विद्युत् मे परिवर्तित न होती और पारगमन[3] में होनेवाली हानि के कारण केवल लगभग २२ प्रतिशत

1. Power-plant   2. Heat of combustion   3. Transmission

ही उपभोक्ता तक पहुँच पाती । वैद्युत-अग्नि को दी गयी सारी विद्युत् लाभदायक उष्मा मे परिवर्तित हो जायगी । इस प्रकार सर्वश्रेष्ठ प्रकार की कोयले की खुली अग्नि, वैद्युत-अग्नि की अपेक्षा कोयला जलाने की अधिक कार्यक्षम विधि है ।

किन्तु वास्तव मे उष्मीय कार्य-क्षमता के बारे मे कदाचित् ही कोई आपत्ति की जाती हो । खुली अग्नि के पक्ष मे जो चीज है उसका कारण वह प्रीति या मोह है जो एक अंग्रेज को अपनी अँगीठी या चूल्हे के प्रति होता है; इसके विपक्ष मे इससे उत्पन्न होनेवाले अलकतरे जैसे गाढ़े काले रग के धुएँ का चारो ओर प्रचुर परिमाण मे छा जाना है । ग्रेट ब्रिटेन मे कोयले के धुएँ से होनेवाली क्षति का अनुमान ४ से ५ करोड़ पौण्ड प्रति वर्ष का है । कज्जल, तारकोल इत्यादि की २५ लाख टन की और संक्षारक सल्फर-डाइ-आक्साइड की लगभग ५० लाख टन की मात्रा प्रति वर्ष वायु में छोड़ी जाती है । धुआँ धातु के काम को[1] क्षति पहुँचाता है, भवनो को गन्दा करता है, वस्त्रों पर धब्बे डालता है, वनस्पतियो को बढ़ने से रोकता है, कुहरे को उत्पन्न करता है, दुर्बलो की जान ले लेता है और सूर्यप्रकाश की विटामिन-उत्पादक किरणो को आने से रोकता है। अभी पिछले कुछ वर्षो के भीतर धुआँ बहुत कम हो गया है और रसोई-घरो की अँगीठियो के स्थान पर गैस, विद्युत् या कोक से जलाये जानेवाले तंदूर उस दिशा में एक बहुत महत्त्वपूर्ण प्रगति है । अप्रचलित पुराने भ्राष्ट्र-संयत्र के स्थान पर आधुनिक भ्राष्ट्र के क्रमश उपयोग से कारखानो के धुएँ का उत्सर्जन[2] समाप्त किया जा सकता है । किन्तु जब तक एक अग्रेज को सुखद अँगीठी या चूल्हे के प्यार से विलग नहीं किया जा सकता या इसमे जलाने की लकडी या कोलाइट जैसे किसी हानिरहित ईधन का उपयोग नहीं किया जाता तब तक घरेलू चिमनी निरन्तर धुआँ देती रहेगी। इस समय इनमे से कोई भी सर्वगत उपयोग के लिए पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध नही किया जा सकता ।

पीट का उपयोग

पीट, जिसे आयरलैण्ड के निवासी घास-पात (टर्फ) कहते है, पर्याप्त मात्रा में मिलनेवाला ईधन है जो कोयले की खानो से दूर कुछ प्रदेशो में पाया जाता है । इसमें कुछ गुण है जो कोयले मे नही होते, उदाहरणार्थ—इसे खानो से नही निकालना पड़ता और कम व्यय पर तथा मानवीय जीवन को संकट में डाले बिना यंत्रो द्वारा इसका

1. Metal-work　　2. Emission

उत्खनन किया जा सकता है। दूसरी ओर उपयोग करने से पहले इसे सुखाना पड़ता है और जब यह पर्याप्त शुष्क हो जाता है तब भी इसका उष्मीय मान कोयले की अपेक्षा आधा होता है।

घर-गृहस्थी में चीजें गर्म करने और रसोई बनाने में पीट का उपयोग प्राचीन काल से होता चला आ रहा है। किन्तु शक्ति के साधन के रूप में इसका उपयोग बहुत ही आधुनिक है। पीट से शक्ति का अत्यधिक विकास रूस मे हुआ है, आयरलैण्ड मे भी इससे बहुत कार्य लिया गया है जहाँ देश की विद्युत् का लगभग एक तिहाई इससे व्युत्पन्न होता है। हाल में ही स्काटलैण्ड के उत्तरी भाग के लिए पीट जलानेवाले शक्ति-केन्द्रों की योजना बनायी गयी है। पीट के ६–८ फुट गहरे, २००० एकड़ विस्तृत दलदल से[1] लगभग एक शताब्दी तक ४०,००० किलोवाट का शक्ति-केन्द्र चलाया जा सकता है।

पीट का काटना

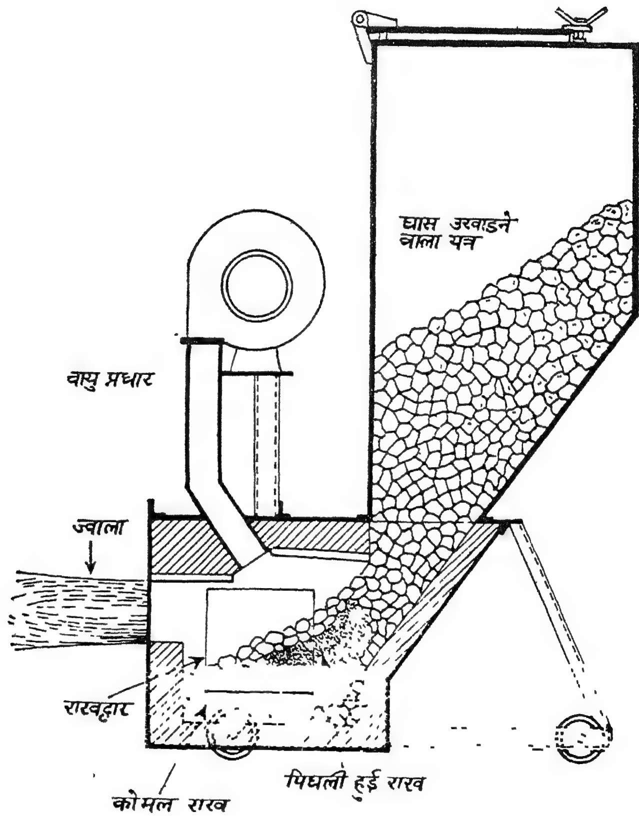
दलदल के पीट में ९५ प्रतिशत तक नमी रहती है और यह इतना गीला होता है कि मशीनो द्वारा इसे नही काटा जा सकता। सामान्यत पहली क्रिया दलदल से जल को जितना सम्भव हो नाली द्वारा उतना निकालना या उस समय तक निकालते रहना है जब तक कि उपयोग किये जानेवाले भाग में ९० प्रतिशत से अधिक जल न रहे। तब पीट काटने और उसे फैलाने की मशीन का उपयोग सभव हो जाता है, (प्लेट ७)। जिस पकिल भूमि से पीट लिया जा रहा हो, उसकी सतह पर यह मशीन चलती है। इस मशीन का नोदन[2] विद्युत् द्वारा मशीनी हल से बने चिह्नों के साथ-साथ होता है। यह पीट के एक भाग को काटती है, फिर उसे घास की जड़ पकड़े हुए ढेलो में खंडित कर देती है और उन्हे दलदल की सतह के ऊपर फैला देती है जहाँ वे कुछ सप्ताह के लिए उस समय तक सूखते रहते है जब तक कि वे हाथ लगाने योग्य दृढ़ता न प्राप्त कर ले। फिर और सुखाने के लिए उनका ढेर लगा दिया जाता है। अत में पीट, जिसमें अब भी ३५ प्रतिशत जल रहता है, शक्ति-केन्द्र में पहुँचा दिया जाता है।

पीट का दहन

पीट कोयले से एक भिन्न समस्या उपस्थित करता है। यह बड़ी सरलता से प्रज्वलित हो जाता है, इसमें इष्टक बनने की प्रवृत्ति नही होती, इसकी राख बहुत

1. Bog 2. Propulsion

हलकी रहती है और झाँवाँ नहीं बनाती। दूसरी ओर इसका आकार बड़ा होता है और इसके लिए एक बड़े दहन-कक्ष की आवश्यकता होती है। अभी तक, इसे प्रायः उसी ढग से जलाया जाता रहा है जिससे कोयला; अँगीठी में यह मशीनो द्वारा झोका जाता है और लगभग १८ इच गहरे ईंधन की तली में जलाया जाता है। कोयले को कम खर्च मे जलाने के लिए जितने विचार पृष्ठ ३९–४० पर दिये गये हैं वे सब पीट पर भी उसी प्रकार लागू होते है।



चित्र १२. मोना-प्रधार टर्फ-ज्वालक

पीट कोयले की भाँति चूर-चूर किया जा सकता है और दहन-कक्ष में उड़ाया जा सकता है; पर इसके उपयोग का अधिक सुविधाजनक प्रकार एक मोना-प्रधार टर्फ-

ज्वालक है (चित्र १२)। इसमें ईंटों से बना एक दहन-कक्ष होता है जिसमें जलनेवाला पीट रहता है, ज्यो-ज्यो ईधन जलता जाता है उसमें नया पीट भरा जाता है। एक प्रधार के रूप में वायु पहुँचायी जाती है जिसका मार्ग जलते हुए ईधन के तल की ओर निर्धारित रहता है। ईधन की तली मे वायु प्रेरित की जाती है किन्तु साथ-ही-साथ यह एक प्रक्षुब्धता[2] उत्पन्न करती है और इस प्रकार ईधन से निकलनेवाली बिना जली गैसें वायु से मिल जाती हैं। इसमें ताप इतना उच्च होता है कि राख पिघल जाती है और एक सघन झाँवे के रूप मे हटायी जाती है।

चूर्ण किया हुआ पीट एक गैस-वरीवर्त्त मे सुविधापूर्वक जलाया जा सकता है; यहाँ नमी के अंश से कोई हानि नही होती; क्योंकि इससे उत्पादित भाप वरीवर्त में काम में आनेवाले तरल के रूप मे कार्य करती है।

तो यह स्पष्ट है कि विद्युत्-शक्ति के उत्पादन और कई प्रकार के औद्योगिक तापन के लिए पीट का उपयोग किया जा सकता है; इसके कम खर्च में उपयोग की शर्त यह है कि कोयले के मूल्य से लगभग आधे मूल्य पर यह प्राप्य हो।

विविध ईधन

हर पौधा प्रकाश से ऊर्जा संगृहीत करता है और इसलिए पौधे से व्युत्पन्न प्रायः कोई भी वस्तु जलायी जा सकती है।

लकड़ी निश्चय ही एक उत्तम ईधन है, विशेषकर यदि इसका उपयोग वही किया जाय जहाँ यह उत्पन्न होती है, और उन ईधनो की भी जिन्हे व्यर्थ जानेवाले ईधन कहते हैं, एक बडी श्रेणी है। कुछ उद्योगो में व्यर्थ जानेवाले वनस्पति पदार्थ की एक बड़ी मात्रा पैदा होती है जिसका बेचना कठिन होता है किन्तु उचित भ्राष्ट्रों में भाप उत्पन्न करने के लिए इन सभी को जलाया जा सकता है।

इसी प्रकार आरा मिलो में व्यवहार मे लाये गये टिम्बर के कदाचित् १० प्रतिशत के बराबर लकडी का बुरादा पैदा होता है। बहुधा इसे बाहर फेक देते है और ढेरो मे सडने के लिए इसे छोड़ दिया जाता है। किन्तु यदि एक वाष्पित्र-संयत्र विशेष रूप से बडे दहन-कक्ष के साथ बनाया जाये, तो लकडी का बुरादा अपने भार के आधे से तिहाई तक के बराबर कोयले का स्थान ले सकता है।

गीले अवशेषो को प्रयोग में लाना अधिक कठिन है। चमडा कमाने का कार्य करने-वाले वल्कसत्त्व (टैनिन) निकालने के लिए वृक्ष की छाल या लकड़ी के छोटे-छोटे

1. Caterpillars 2 Turbulence

टुकडो को उबालते है । इनका अवशेप इतना गीला होता है कि जब तक एक विशेष भ्राष्ट्र की प्ररचना न की जाये इसे जलाया नही जा सकता । किन्तु यदि ऐसा किया जाये, तो दहन-परिधि मे पहुँचकर गीला पदार्थ सूख जाता है और तब जलता है । बबूल की छाल को जिससे चमडा पकाया जाता है जलाने से सयुक्तराज्य अमेरिका मे लगभग २० लाख टन कोयले की बचत होती हैं । खोई, जो कि गन्ने का रस निकालने के पश्चात् बच रहती हैं, एक दूसरा महत्त्वपूर्ण व्यर्थ जानेवाला ईधन है । निम्नतम श्रेणी में शहरो का कूडा-करकट आदि है जो जलने के योग्य बनाया जा सकता है और तब उससे किसीको भी कोई हानि नही पहुँच सकती । यह कम-से-कम इतनी भाप का उत्पादन कर सकता है जिससे एक भ्राष्ट्र चलाया जा सकता है ।

अध्याय ४

कोयले से व्युत्पन्न इंधन

कार्बनीकरण[1] का उद्देश्य

इंग्लैण्ड में खनित[2] कोयले के पाँच मे से चार भाग कोयले के ही रूप मे जलाये जाते है और शेष पाँचवें भाग का कार्बनीकरण किया जाता है अर्थात् इसे कोक, गैस और उपजातो[3] मे जिनमें मुख्य तारकोल है, परिवर्तित किया जाता है। हर प्रकार के कोयले का कोक नही बनाया जा सकता। यह सभी जानते है कि जब कुछ प्रकार का कोयला जलाया जाता है, तो वह पिघल और फूल जाता है, जबकि कुछ दूसरे प्रकार के कोयले ऐसा नही करते। पहिली प्रकार के कोयले ही कार्बनीकरण के लिए उपयोगी होते है।

तत्त्वत, इस प्रक्रम का मतलब है कुछ प्रकार के कोयलो को कम-से-कम ५५०° सैं० (एक निम्न रक्त-ताप[4]) तक गर्म करना, किन्तु साधारणत. इससे बहुत ऊँचे ताप तक इसे गर्म किया जाता है। ४००° सैं० पर कोयला कोमल होना आरम्भ करता है और जैसे-जैसे ताप बढता है यह लेई-सा[5] बल्कि द्रव बन जाता है। कोयले मे रासायनिक यौगिको का विच्छेदन प्रारम्भ हो जाता है और उनसे गैसो का उत्पादन होता है जिनमे हाइड्रोजन, मिथेन, कार्बन मोनोक्साइड, भाप, अमोनिया और हाइड्रोकार्बन वाष्प होते है; जिस प्रकार यीस्ट मे निकलनेवाली कार्बन-डाई-आक्साइड, रोटी के सने हुए आटे को फुला देती है, उसी प्रकार ये गैसे लेई-से पदार्थ को फुला देती है। जब ताप और अधिक बढता है, तो गैसो का निकलना बन्द हो जाता है और लेई-सा कोयला कठोर होकर कार्बन का एक टुकडा बन जाता है जिसे कोक कहते है और जिसमे फूले हुए पदार्थ की कोशीय[6] सरचना[7] रह जाती है। शीतल होने पर निकलती हुई गैसे तार-कोल और अमोनिया तथा दूसरे यौगिको के एक जलमय विलयन[8] का निक्षेप[9] करती है; शुद्ध किये जाने पर वे कोयला-गैस बन जाती है।

1. Carbonization 2. Mined 3. By-products 4. Red-heat 5. Pasty
6. Cellular 7. Structure 8. Solution 9. Deposit

कार्बनीकरण का उद्देश्य ऐसे ईधन प्राप्त करना है जिनसे वे कार्य किये जा सकें जो कोयले से नही किये जा सकते और इसके लिए जो मूल्य देना पडता है वह कोयले की उष्मा के मूल्य का लगभग ४५ प्रतिशत है। यह औद्योगिक परिमाण पर किये गये इस प्रक्रम मे व्यय होनेवाली ऊर्जा की मात्रा का द्योतक है। यदि गैस का वितरण करने मे व्यय हुई ऊर्जा को भी जोडा जाये, तो ऊर्जा की हानि ५० प्रतिशत से अधिक हो जाती है।

इतिहास के अनुसार, धातु-विद्या[1] वैज्ञानिकों को काष्ठ-कोयले का प्रतिस्थापक[2] देने के लिए, कार्बनीकरण सर्वप्रथम सोलहवी शताब्दी में प्रारम्भ किया गया। इसकी आवश्यकता इसलिए पडी कि काष्ठ-कोयला उस समय अधिक दुर्लभ और मँहगा होता जा रहा था। तभी से वात-भ्राष्ट्रों[3] में प्रयुक्त होने के लिए, धातु-गालन[4] कार्य और इसी प्रकार के अन्य उपयोगो के लिए कोक बनाया जाता रहा है।

जिस विधि से लकडी से काठ-कोयला बनाया गया था, सर्वप्रथम कोयले से कोक भी उसी विधि से बनाया गया। कोयले को ढेरो में एकत्र करके मिट्टी से ढँक देते थे। तब नीचे से उसमे आग लगाकर कोक बनाया जाता था। उपजात गैसें या तो जल जाती थी या धुएँ के रूप मे बाहर निकल जाती थी। उनका अस्तित्व अठारहवी शताब्दी के मध्य तक अज्ञात ही रहा। जब उष्मा से कोयले का कार्बनीकरण हो जाता था, तो उसे पानी से ठडा किया जाता था और लुहारों द्वारा उसका उपयोग होता था।

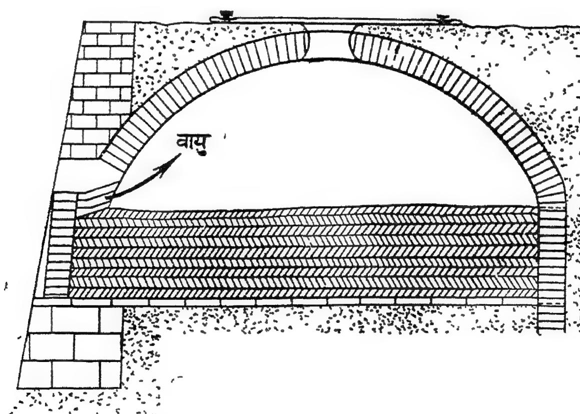
गैस का बडे पैमाने पर बनाया जाना सन् १८०० ई० के पश्चात् शीघ्र ही आरम्भ किया गया था। इसका उद्देश्य गैस बनाना था, कोक केवल एक उपजात था। लगभग १८५० ई० से तारकोल रासायनिक उद्योग के लिए एक उपयोगी कच्चा पदार्थ बना। १९०० ई० तक यह रग, औषधि और विस्फोटक[5] पदार्थों के उद्योगों का आधारभूत पदार्थ बन चुका था। पहिले विश्व-युद्ध में विस्फोटक पदार्थ बनाने के लिए बेनजीन, टोलूईन और फिनोल की माँग बहुत अधिक बढ गयी और गैस-उद्योग के उपजातो के महत्त्व का पता चला। कोक बनानेवाले भ्राष्ट्र के इन उपजातों को व्यर्थ जाने देना अनुचित समझा जाने लगा। इसलिए धातु-विद्या वैज्ञानिको की कोक-भ्राष्ट्रो की आवश्यकता से बची गैस और तारकोल का सग्रह करने तथा उन्हें व्यावहारिक उपयोग मे लाने के प्रयत्न किये गये। उपजातो को बर्बाद होने से बचाना अब कोक-उद्योग की बिलकुल सामान्य सी चीज है।

1. Metallurgy 2. Substitute 3 Blast furnaces 4. Foundries
5. Ezplosives

कोक के लिए कार्बनीकरण

ग्रेट ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका दोनों में ही लोहे के बहुत बड़े उद्योग हैं। लोहा एक वात-भ्राष्ट्र में बनाया जाता है (पृष्ठ ७३) जिसमें कोक, लोह-अयस्क[१] और चूने के पत्थर का एक मिश्रण भरा जाता है। कोक दो कार्य करता है, इसके जलने से उष्मा मिलती है और यह अयस्क को लोहे में अवकृत[२] कर देता है; कोक की जिस मात्रा की आवश्यकता होती है वह सयत्र की कार्य-क्षमता[३] के अनुसार बदलती है, किन्तु मोटे हिसाब से, एक टन लोहा बनाने के लिए एक टन कोक की आवश्यकता होती है। ग्रेट-ब्रिटेन, धातु-शोधन[४] में काम आनेवाला लगभग एक करोड ४० लाख टन कोक और संयुक्त राज्य अमेरिका लगभग ६ करोड़ टन कोक प्रतिवर्ष उत्पन्न करता है।

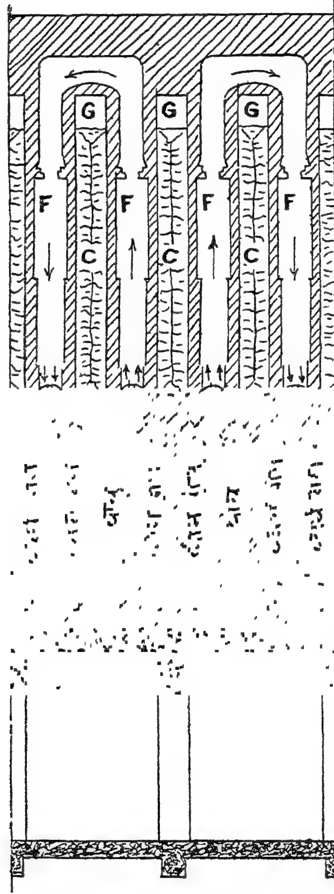
धातु शुद्ध करनेवाला व्यक्ति (मेटलर्जिस्ट) कुछ विशेष प्रकार का कोक चाहता है। वह चाहता है कि यह कठोर, दृढ़, चाँदी के सदृश दिखनेवाला और बड़े टुकडो में हो, गन्धक का इसमें बहुत कम अंश हो और यह प्रतिक्रियाशील[५] हो अर्थात् सरलता से इसका प्रज्वलन[६] हो सके और शीघ्रता से इसे जलाया जा सके। अतः वह इस प्रकार के कोयले को चुनता है जिससे ऐसा ही कोक मिल सके और उसके साथ वह ऐसी ही काररवाई करता है कि जिससे यह इच्छित प्रकार का कोक बन सके। वह इस पर अधिक



चित्र. १३. मधुकोष कोक-भ्राष्ट्र

1. Ore of iron 2. Reduce 3. Efficiency 4. Metallurgical
5. Reactive 6. Ignition

ध्यान नही देता कि इस काररवाई से कोयले से गैस या तारकोल की कोई बड़ी मात्रा मिलेगी या नहीं। दूसरी ओर, गैस बनानेवाला ऐसे कोयले की खोज करता है जिससे गैस की अधिकतम मात्रा का उत्पादन हो सके और वह केवल इतना चाहता है कि इससे ऐसी श्रेणी का कोक मिले जिसे गृहस्थ मोल ले सके। इतना और कह दीजिए कि कोक की माँग गैस की माँग की अपेक्षा बहुत अधिक है और अब इसका कारण समझ में आ जायेगा कि कोक और गैस बनाना भिन्न-भिन्न उद्योग क्यों है।



चित्र १४. धातुकर्मिक कोक बनाने के लिए एक उपजात प्लाण्ट् की तीन इकाइयाँ F, धूम्र मार्ग : C, कोयले का कार्बनीकरण होता है : G, बाहर जाती हुई गैस जिसमें से कुछ पुनर्जनित्र में गर्म की जाती है और आवश्यक उष्मा की पूर्ति करने के लिए धूम्रमार्ग में जलायी जाती है।

कहा जाता है कि सर्वोत्तम कोक पुराने ढंग के और अपव्ययी मधुकोष-भ्राष्ट्र[1] में बनाया जाता था। ये ईंटों की बनी गुम्बद जैसे होते थे, जिसका व्यास लगभग १२ फुट होता था। इनकी चोटी मे ईंधन झोकने का छिद्र और पक्ष मे एक अग्निद्वार होता था (चित्र १३)। इन्हे निरंतर गर्म रखा जाता था। ईधन झोकनेवाले छिद्र मे ५–७ टन कोयला डाल दिया जाता था, जिससे फर्श २० इच ऊपर तक ढक जाता था। भ्राष्ट्र की उष्मा से इस कोयले का कार्बनीकरण हो जाता था तथा गैसे जलने लगती थी। वायु के झोके को द्वार-मार्ग में ईटो को एकत्र करके नियत्रित किया जाता था। दो-तीन दिन के पश्चात् कोयला कोक मे परिवर्तित हो जाता था; फिर इसे जल से बुझाया और लोहे के पंजे (जद्रे) द्वारा हिलाया जाता था। इस प्रकार कोक तो उत्तम बनता था किन्तु उपजात नष्ट हो जाते थे और ऐसे भ्राष्ट्रो के समूह से निकलने वाले धुएँ और व्यर्थ की गैसो से निकट के प्रदेश विषैले हो जाते थे। आज इनका स्थान उपजात भ्राष्ट्रो ने ले लिया है।

उपजात-भ्राष्ट्र[2] (चित्र १४ देखिए) का रूप अपने अधिक लम्बे किनारो पर खड़े सिगार के डिब्बे के सदृश होता है। ऐसी भट्ठी न्यूनाधिक ४० फुट लम्बी, १२ फुट ऊँची और २० इंच चौडी होती है। यह सिलिका की ईटों की बनी होती है, क्योंकि सिलिका उच्च ताप सहन कर सकता है। करीब एक सौ तक ऐसी भट्ठियाँ एक दूसरे के पार्श्व में एक ही समूह मे बनायी जाती है और उनमे से प्रत्येक के बीच एक दीवार होती है जिसमें धूम-मार्ग बने होते है जिनमें से उष्ण गैसें प्रवाहित होती है और भ्राष्ट्रों को गर्म करती है। इस प्रकार भ्राष्ट्रो के पूरे समूह से एक ठोस खड-सा बन जाता है। इनकी चोटी के बगल से ईधन की एक लारी चलती है जिसमें कोयला भरा रहता है, जिसे यह लारी, बने हुए गोल छिद्रों मे से भ्राष्ट्र मे झोंकती है। हर भ्राष्ट्र से एक बडा नल जुडा रहता है जो गैस और दूसरे वाष्पशील पदार्थो को सगृहीत करता है। जब किसी भ्राष्ट्र मे कोयले का पूर्ण कार्बनीकरण हो जाता है, तो हर सिरे पर द्वार ऊपर को उठा दिये जाते है और एक विशाल "धक्का देने वाली मशीन"[3] ५० फ़ुट की मेपाकार[4] भुजा से उद्दीप्त कोक को बाहर धकेल देती है। कोक रेल की पटरियों पर खडी हुई एक बडी लोहनिर्वापन[5]-कार मे गिरता है और ठण्डा करने के लिए इसे पानी से सराबोर कर दिया जाता है।

1. Beehive Oven 2. By-product Oven 3. "Pusher-machine"
4. Ram 5. Quenching

तारकोल और दूसरे बहुमूल्य पदार्थों को पृथक् करने के लिए गैस के साथ प्रायः वैसी ही कारवाई की जाती है जैसी कि गैस-कारखानो मे, यद्यपि उतने विस्तार से नही । अब शेष गैस को, उष्मा की माँग की पूर्ति करने के लिए, कोक-भ्राष्ट्र के धूम-मार्ग मे जलाया जा सकता है किन्तु साधारणत कोयले से मिलनेवाली गैस की अपेक्षा कम गैस की आवश्यकता होती है । जैसा कि पृष्ठ ६८–६९ पर वर्णन किया गया है, कुछ कोक को उत्पादक गैस मे परिवर्तित कर इसका उपयोग प्रज्वालन[1] करने के लिए कदाचित् अधिक पसन्द किया जा सकता है और इस प्रकार कोक-भ्राष्ट्र-गैस को दूसरे कार्यों के लिए बचाया जा सकता है । वहाँ जिस पुनर्जनन[2] नियम का वर्णन किया गया है उसका उपयोग उष्मा की हानि रोकने के लिए किया जाता है । कोक बनाने के लिए जिस कोयले का उपयोग किया जाता है, उसे सामान्यतः, किन्तु आवश्यक रूप से नही, पीसकर पाउडर कर लिया जाता है । इसलिए चूर्ण कोयले से, जो दूसरे अधिकांश कार्यों के लिए अनुपयुक्त होता है, ठोस कोक बनाना संभव है । विभिन्न प्रकार के कोयले बहुधा इसलिए मिला दिये जाते है कि निश्चित रूप से एक ऐसा मिश्रण बन जाये जो कोक मे सरलता से परिवर्तित हो सके और जिसमें अत्यधिक प्रसार न हो, जिससे फूलते हुए कोयले के दाब से भ्राष्ट्र की दीवारे टूटकर गिर न पड़ें ।

कोक-भ्राष्ट्र से निकलनेवाली गैसें किस प्रकार उपयोग में लायी जा सकती है ? वास्तव में यह साधारण नगर-गैस जैसा ही होती है और प्रत्यक्ष उपाय यही है कि यह गैस-कारखानों को बेच दी जाये । किन्तु इसमें एक अनोखी कठिनाई सामने आती है । गैस का आकार इतना अधिक होता है और वातिधारक[3] इतने मँहगे है कि बहुत से नगर दो दिन के लिए भी पर्याप्त गैस का संग्रह नही कर सकते । फिर गैस के व्यवसाय पर पार्लिमेण्ट का एक अधिनियम लागू होता है जिसके अनुसार गैस-प्रदाय[4] का दाब किसी एक निश्चित निम्न अंक से अधिक रहना आवश्यक होता है। कोक-भ्राष्ट्रों से गैस का वहन सामान्यत. स्थिर रूप से जारी रहता है; किन्तु यदि किसी कारण कोक-भ्राष्ट्र बन्द हो जायें तो गैस-कारखानो को कोई गैस न मिलेगी और तब अपने उपयोग के लिए इसका बनाना स्वयं उनके लिए आवश्यक हो जाता है । इस कारण उन्हे एक संयत्र रखना होता है जिससे अपनी आवश्यकता के अनुसार वे गैस का उत्पादन कर सकते हैं, यद्यपि सामान्यत. वे कोक-भ्राष्ट्रो से गस मोल ले सकते है जो खुद उनकी बनायी हुई गैस की अपेक्षा बहुत सस्ती होती है । परिणामतः कोक-भ्राष्ट्र गैस के खरी-

1. Firing 2. Regenerative 3. Gas-holder 4. Gas-supply

दने से जो बचत होती है वह आकस्मिक आवश्यकता के लिए खरीदे हुए संयंत्र पर, जो काम में न आ रहा हो, लगी पूँजी से मिट जाती है। फिर भी उत्तर-पूर्वी गैस-ग्रिड और यॉर्कशायर तथा वेल्स को भी, कोक-भ्राष्ट्र गैस की बडी मात्रा प्रदान की जाती है; वास्तव में सारे देश की नगर-गैस का लगभग १० प्रतिशत कोक-भ्राष्ट्रो से व्युत्पन्न होता है। कोक-भ्राष्ट्रों से उत्पादित कुल गैस का यह लगभग दसवाँ भाग है। अवशेष का उपयोग भ्राष्ट्रों में अग्नि उत्पन्न करने, कारखानो मे भाप बनाने, धातु-शोधन भ्राष्ट्रों को तपाने और रासायनिक उद्योगों में हाइड्रोजन जुटाने इत्यादि के लिए होता है। गैस-ग्रिड पद्धति के विस्तार से कोक-भ्राष्ट्र गस का अधिक उपयोग सम्भव हो सकेगा किन्तु जब तक कोक-भ्राष्ट्रों मे अविरत कार्य का होना निश्चित न हो जाये, ये गैस-कारखानों को उनके स्थान से नही हटा सकते। दूसरी कठिनाई इस कारण होती है कि पूरे वर्ष कोक-भ्राष्ट्र लगभग एक ही परिमाण में उत्पादन करते है जबकि नगर-गैस की आवश्यकता ग्रीष्म ऋतु की अपेक्षा जाडे में अधिक होती है।

गैस के लिए कार्बनीकरण

ब्रिटिश कोक-उद्योग और गैस-उद्योग, यदि उनके द्वारा उपयोग किये गये कोयले की मात्रा से निर्णय किया जाये, लगभग एक ही विस्तार के है, किन्तु गैस-उद्योग, कम-से-कम दक्षिण में रहनेवालों के लिए, कोक-भ्राष्ट्र की अपेक्षा अधिक परिचित वस्तु है।

गैस बनानेवाले ऐसे कोयले की माँग करते है जिससे थर्म मे मापी गयी गैस की अत्यधिक मात्रा मिलती है (एक थर्म गैस की वह मात्रा है जिससे उष्मा की १००,००० ब्रिटिश-उष्मा-मात्रकें[1] उत्पन्न होती है)। इससे बिकने योग्य कोक का प्राप्त होना आवश्यक है; इसे बहुत अधिक फूलना नही चाहिए, नही तो यह वक-यन्त्र[2] से चिमट जा सकता है।

कोयला एक वक-यंत्र में तापित किया जाता है (R, चित्र १५), जो आधुनिक संयंत्र में सामान्यतः अग्नि-मिट्टी[3] की एक लम्बी ऊर्ध्वाधर[4] नली होती है। यह चोटी की अपेक्षा आधार के निकट अधिक चौडी होती है। ये वक-यंत्र अग्नि-ईटो[5] के बने कक्ष में स्थापित किये जाते है जिसमे कोक से बननेवाली उत्पादक गैस जलायी जाती है। वक-यंत्र के ऊपरी सिरे में से कोयला भरा जाता है और कोक निचले सिरे से क्रमशः निकाला जाता है। कभी-कभी भीतर भाप का अनुवेधन[6] किया जाता है जिससे

1. British Thermal Units 2. Retort 3. Fireclay 4. Vertical
5. Fire-brick 6 Injection

उद्दीप्त कोक की व्यर्थ जानेवाली उष्मा का उपयोग करके जल-गैस (पृष्ठ ७३) बनायी जाती है। अन्त मे, निकलनेवाले कोक को बुझाया जाता है। इसमें से कुछ का उपयोग उत्पादकों[1] (P) मे वक-यन्त्रों को गर्म करने मे होता है और शेष बेच दिया जाता है।

जब गैस वक-यत्र से निकलती है, तो वह गहरे पीले-से या हरे-से रंग का धुँआँ होती है। यह निम्नलिखित पदार्थो का एक संकीर्ण मिश्रण होती है—(१) हाइड्रोजन, मिथेन, दूसरे गैसीय हाइड्रोकार्बन, कार्बन-मोनो-आक्साइड, और नाइट्रोजन (इन्हींसे वह गैस बनती है जो बेची जाती है), और (२) भाप, तारकोलीय वाष्प, बेंजीन, टोलुइन, नैफथालीन, फिनोल, थियोफीन, कार्बन-डाइ-आक्साइड, हाइड्रोजन-सल्फाइड, हाइड्रोजन सायेनाइड और अमोनिया, इनमें से सभीको पृथक् करना होता है।

उदलिक-प्रनाड[2] H में ६०° –७०° से० तक गैस को ठण्डा करना पहिली क्रिया है। यहाँ भाप सघनित हो जाती है और जो जल बनता है उसमे अमोनिया, हाइड्रोजन-सल्फाइड, कार्बन-डाइ-आक्साइड और हाइड्रोजन-सायेनाइड का अधिकाश विलीन हो जाता है और एक दुर्गन्धपूर्ण पीला-सा विलयन बनता जाता है जिसे अमोनियामय[3] द्रव कहते है। साथ-ही-साथ भारी तारकोल संघनित हो जाता है। अमोनियामय द्रव तारकोल से मिश्रित नही होता किन्तु इसके ऊपर तैरता है और इन्हें भिन्न-भिन्न टैको मे ले जाया जाता है।

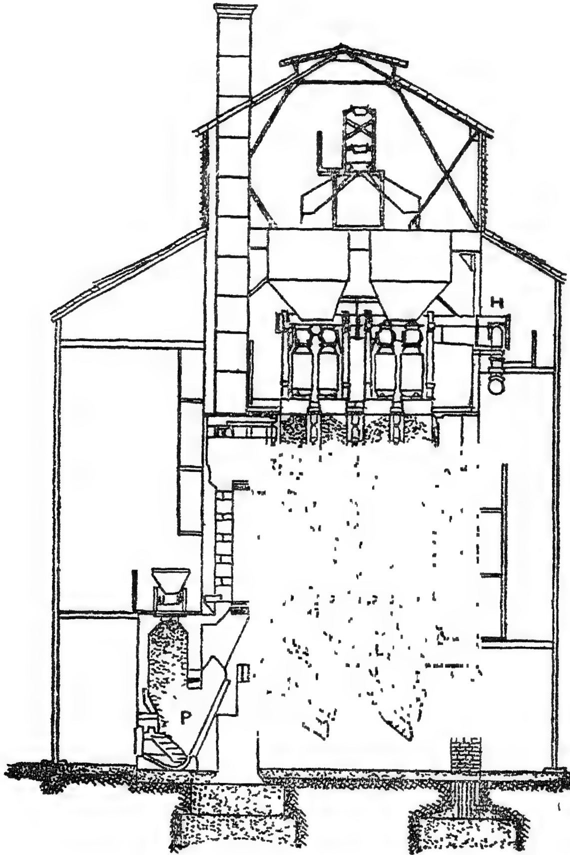
गैस अभी तक गर्म होती है और अशुद्धि प्रनाड मे से प्रवाहित होकर संघनित्रों[4] मे पहुँचती है जहाँ इसका ताप गिरकर वायुमंडलीय ताप के बराबर हो जाता है। अमोनियामय द्रव और तारकोल की और अधिक मात्रा संघनित होती है, किन्तु ठंडी की हुई गैस में अब भी अमोनिया, गंधक के यौगिक, हाइड्रोजन-सायेनाइड, नैफथालीन, वाष्प और तारकोल-कुहरा मिले रहते हैं।

शुद्धिकरण पद्धति गैस के निकास[5] का प्रतिरोध करती है जिससे उल्टी दशा में एक दाव स्थापित हो जाता है और इसके कारण गैस का च्याव[6] होगा, यदि उसे अपने मार्ग मे प्रवाहित होने मे सहायता न मिले। इसलिए इस अवस्था में एक निष्कापक[7] (अर्थात् एक पम्प) मध्य में डाला जाता है और इस प्रकार चलाया जाता है

1. Producers 2. Hydraulic-main 3. Ammoniacal 4. Condensers
5. Passage 6. Leakage 7. Exhauster

कि वक-यंत्र में गैस का दाब लगभग वायु मण्डलीय दाब के बराबर रहे तथा गैस का शोधन करनेवाले सयंत्रों और दूसरे यंत्र मे से इसे प्रवाहित होने पर विवश किया जा सके।

इसके पश्चात् गैस से अमोनियामय द्रव मे बुलबुले उठवाकर या गैस को अवशोषित करके, जिसमे तारकोल के कण विद्युदग्रों[1] की ओर आकर्षित हो जायें,



चित्र. १५. एक आधुनिक गैस-कारखाने में वक-यंत्र-गृह

1. Electrodes

तारकोल-कुहरे को पृथक् किया जाता है। अब शुद्ध और अदृश्य गैस को जल के निकट सम्पर्क मे लाया जाता है जिसमे अमोनिया विलीन हो जाता है।

गैस मे अभी तक हाइड्रोजन-सल्फाइड, कार्बन-डाइ-आक्साइड और गंधक के दूसरे यौगिक और बहुत विषैला हाइड्रोजन-सायेनिक-अम्ल[१] बचे रहते हैं। ये लौहिक-हाइड्रोक्साइड[२] (साधारणतः पक लोह-अयस्क) में से गैस को छानकर पृथक् किये जा सकते है। यह हाइड्रोजन सल्फाइड और हाइड्रो सायनिक अम्ल का अवशोषण कर लेती है। पहिले से गधक उत्पन्न होता है और दूसरे से फैरोसायनाइड। दूसरे प्रक्रम भी उपयोग मे लाये जाते है।

कुछ हाइड्रोजन सायेनाइड अवशोषित होने से बच जाता है। उसे पृथक् करने के लिए गैस को लौह-हाइड्रोक्साइड[३] के क्षारीय[४] आलम्बन[५] से साफ करते है जिसके परिणामस्वरूप सोडियम फैरोसायनाइड बन जाता है जोकि एक बिकने योग्य पदार्थ है।

अत मे कार्बन-डाइ-सल्फाइड और गधक के दूसरे वाष्पशील यौगिकों का अवशेष रह जाता है। गैस मे गधक का एक लेश भी इसके दहन से उत्पादित पदार्थो को संक्षारक[६] बनाता है इसलिए इन्हे भी साधारणतः पृथक् किया जाता है। गैस को तप्त निकैल[७] के ऊपर से प्रवाहित करना इसकी एक विधि है। गैस के हाइड्रोजन से कार्बन-डाइ-सल्फाइड की प्रतिक्रिया होती है जिससे कार्बन और हाइड्रोजन-सल्फाइड बनते है जो एक आक्साइड-शोधक[८] द्वारा हटा लिये जाते है।

बहुत से उद्योगो मे गैस को तल द्वारा धोकर नैफथालीन और बेनजीन वाष्प को भी पृथक् किया जाता है; बेनजीन वाष्प कर्मण्यित[९] कार्बन द्वारा भी अवशोषित की जा सकती है।

गैस के शोधन का प्रक्रम जटिल और व्ययसाध्य प्रतीत होता है किन्तु यह स्मरण रखना चाहिए कि गैस से निकलनेवाला प्रत्येक पदार्थ उपयोगी है जो रासायनिक उद्योगों को बेचा जा सकता है। इस प्रकार तारकोल का आसवन[१०] करने पर बेंज़ीन, टोलूईन और जाईलीन[११] मिलते है जो रासायनिक संश्लेषण[१२] या मोटर-स्पिरिट के लिए उपयोग मे आते है; क्रिओसौट[१३] तैल मिलता है जो लकड़ी को परिरक्षित रखने में काम आता है या हाइड्रोजनीकरण करके इससे मोटर-स्पिरिट बनाया जाता

1. Hydrocyanic acid 2. Ferric-hydroxide 3. Ferrous hydroxide
4. Alkaline 5. Suspension 6. Corrosive 7. Nickel
8. Oxide-purifier 9. Activated 10. Distillation 11. Xylene
12. Synthesis 13. Creosote

है; नैफ्थालीन और एन्थ्रासीन मिलते है जो रंग-उद्योगों में प्रयुक्त किये जाते है; डामर[1] सड़क बनाने के काम में लाया जाता है। शोधकों से मिलनेवाले लोह-आक्साइड को, उनके (शोधकों के) रेचित[2] होने पर, जलाकर सल्फर-डाइ-आक्साइड का उत्पादन किया जाता है जिससे गंधक का अम्ल[3] बनाया जाता है। अमोनियामय द्रव से अमोनिया या अमोनिया के लवण[4] बनाये जा सकते है जो खाद के रूप मे प्रयुक्त होते हैं; पाइरीडीन इत्यादि भी इससे मिलते है; किन्तु कोक, भाप और वायु से बना हुआ, संश्लेपित अमोनिया अब इतना सस्ता है कि गैस से निकाला हुआ अमोनिया कदाचिद् न बिकने योग्य हो सकता है।

गैस से, जो कि मुख्य उपज है, जनता भली-भाँति परिचित है। यह थर्म में बिकती है जो गैस की वह मात्रा है जिससे १००,००० ब्रिटिश-उष्मा-मात्रक का उत्पादन होता है। विद्युत् जिस मात्रक में बिकती है वह एक थर्म का लगभग ३०वाँ अंश होती है। लंदन में (१९५३) बहुत से शुल्क लगते है और गृहस्थ के लिए बहुधा यह जानना कठिन होता है कि गैस और विद्युत् पर उसका व्यय कितना होता है। साधारणतः मोटर का किराया और देखरेख इत्यादि पर होनेवाले व्यय का विचार करते हुए भी विद्युत् से मिलनेवाली उष्मा की एक निश्चित मात्रा गैस से मिलनेवाली उसी मात्रा की अपेक्षा सम्भवतः तीन से डेढ़ गुनी तक अधिक मँहगी होती है। दूसरी ओर, विद्युत का उपयोग बहुधा अधिक मितव्ययिता से होता है—जैसे, एक वैद्युत-अग्नि से उत्पन्न पूरी-की पूरी उष्मा गर्म किये जानेवाले कमरे में ही प्रवेश करती है, जबकि गैसीय अग्नि के दहन से उत्पादित पदार्थ कुछ उष्मा को चिमनी में ऊपर को ले जाते है। वैद्युत भ्राष्ट्र में उष्मा की बहुत कम हानि होती है या बिलकुल ही नहीं होती जबकि गैसीय भ्राष्ट्र से उष्ण गैसों की एक धारा निरन्तर बाहर को प्रवाहित होती रहती है।

गैस का प्राथमिक उपयोग घर-गृहस्थी में पानी आदि गरम करने में होता है किन्तु उद्योगों मे भी इसके बहुत से उपयोग होते हैं, विशेषकर उन छोटे भ्राष्ट्रों और तंदूरों में अग्नि जलाने के लिए जिनके इधन के व्यय को प्रथम महत्त्व नही दिया जाता। गैस से मिलनेवाली उष्मा पर होनेवाला व्यय कोयले से मिलनेवाली उष्मा की उसी मात्रा पर होनेवाले व्यय की अपेक्षा लगभग तिगुना होता है किन्तु झोकनेवाले की मजूरी बचने से गैस से उष्मा का उत्पादन कोयले की अपेक्षा बहुत ही सरलता से सस्ता पड़ सकता है। इसके सिवा इच्छानुसार गैस को प्रवाहित करने या इसका प्रवाह बन्द करने की सरलता, जिससे केवल उपयोग होने पर ही ईधन का व्यय होता है, गैस की

1. Pitch 2. Exhausted 3. Sulphuric acid 4. Salts

शुद्धता, राख हटाने की समस्याओं से छुटकारा, संग्रह करने के स्थान की बचत, इत्यादि सभीको ध्यान में रखना पड़ता है ।

निम्न ताप पर कार्बनीकरण

जब भ्राष्ट्रो मे कोयले से कोक बनाया जाता है, या गैस-कारखानो में इसका आसवन किया जाता है, तो इसे एक उच्च ताप पर गर्म किया जाता है, साधारणत. पीत-ताप,[1] लगभग १०००° से० तक । यदि, दूसरी ओर, सम्भव होनेवाले निम्न ताप अर्थात् ५००-५५०° से०, पर इसका कार्बनीकरण किया जाता है, तो विभिन्न पदार्थ उत्पादित होते हैं ।

कोक का अवशेष बचने के स्थान पर अर्द्धकोक (कोलाइट) बचता है जिसमें अभी तक कुछ वाष्पशील द्रव्य (१०–१५ प्रतिशत) रहता है । कोक के विपरीत, यह सरलता से जलाया जा सकता है और एक खुली अग्नि में निर्विघ्न जलता रहता है किन्तु धुँआँ पैदा नहीं करता । अतः यदि यह पदार्थ बडी मात्रा में बनाया जा सकता और गृहस्थ इसे ग्रहण कर लेता, तो यह खुली अँगीठी में जलने के लिए कोयले का स्थान ले लेता जिससे धुएँ की परेशानी दूर हो जाती । किन्तु इसमें कुछ कठिनाइयाँ है । अर्धकोक पर कोयले की अपेक्षा अधिक व्यय होता है । यह आकार में भी बहुत अधिक होता है, इसलिए कोयले का गोदाम या भण्डार एक पखवाडे के स्थान पर एक सप्ताह ही चलेगा । फिर रहने के कमरे मे बिना ज्वाला की अग्नि कोई बहुत अच्छी भी नहीं मालूम होती ।

सघनन[2] करके और दूसरी विधियों द्वारा गैस से जिस द्रव का निष्कर्षण[3] किया जाता है उसमे उच्च तापवाले तारकोल में वर्तमान मात्रा की अपेक्षा हल्के तैल और फिनोलों की बहुत अधिक और डामर की बहुत कम मात्रा रहती है । अमोनिया भी अपेक्षया बहुत कम होता है । उत्पादित गैस की मात्रा साधारणतः कोयले के समान भार के उच्च-ताप कार्बनीकरण द्वारा उत्पादित गैस की मात्रा के आधे से कम होती है ।

अतः निम्न ताप पर कार्बनीकरण को हल्के तैल और अर्धकोक के उत्पादन की एक विधि समझना चाहिए जिसका उद्देश्य आयात किये गये पैट्रोल पर हमारी निर्भरता को घटाना और साथ-ही-साथ धुएँ से होनेवाले अनुत्रास को समाप्त करना है । वास्तव में, अब इग्लैण्ड में प्रतिवर्ष केवल ४००,००० टन अर्धकोक का उत्पादन किया जाता है जो अधिकतर कोलाइट के नाम से बेचा जाता है, जबकि खुली अग्नियों में लगभग

1. Yellow-heat 2. Condensed 3. Extracted

तीन करोड पचास लाख टन कोयला जलाया जाता है। यह एक बड़ा भारी कार्य होगा यदि गैस-कारखानो के उच्च-ताप संयंत्र के स्थान पर निम्न-ताप संयंत्र का उपयोग किया जाये जिससे सभी घरेलू अग्नियो के लिए अर्धकोक की पर्याप्प मात्रा मिल सके। इसका व्यय १० करोड पौण्ड के लगभग होगा और दूसरी योजनाओं से बहुत-सी वस्तुएँ इस कार्य के लिए भेजनी पड़ेगी। यह सम्भव है कि धुएँ के बुरे प्रभावों के नष्ट हो जाने से तीन या चार वर्ष मे इस व्यय की पुनः प्राप्ति हो जायेगी, किन्तु मुझे टैक्स देनेवालों को यह समझाने के कार्य की चिता नही करनी चाहिए कि वे इस कार्य के लिए रुपया बचाये और कोयले के उपयोग को रोकने के लिए जो अधिनियम बने उसे स्वीकार कर लें।

निम्न-ताप कार्वनीकरण-संयंत्र सामान्य अभिन्यास[1] में गैस-कारखानो के ऊर्ध्वाधर बकयंत्र-संयत्र से बहुत मिलता-जुलता है किन्तु यह निश्चित करने के लिए कि बकयंत्र का ताप इच्छित ताप से अधिक न हो जाये बहुत-सी युक्तियों का उपयोग किया जाता है।

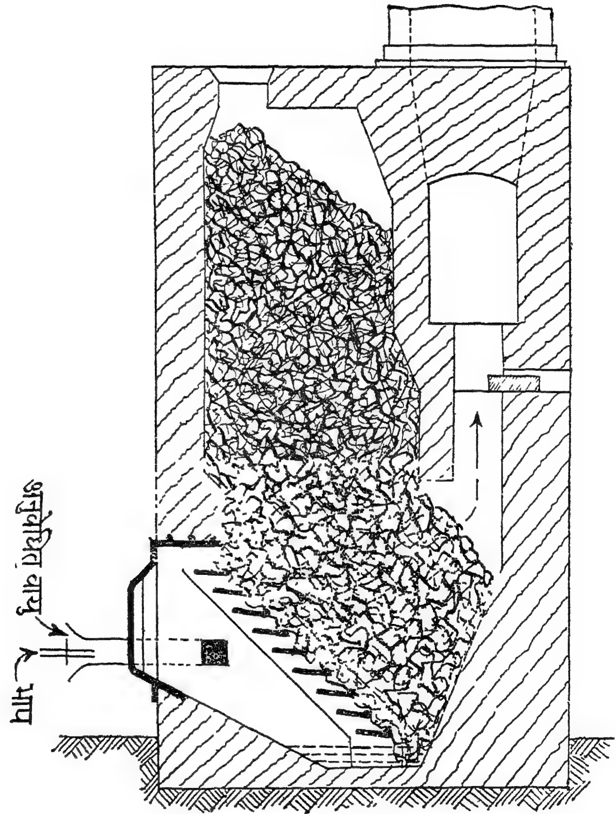
कोयले और कोक का पूर्ण गैसीकरण[2]

गैसीय इंधनों में ठोस इंधनों की अपेक्षा बहुत से तथा वड़े लाभ होते है। इनका पूर्व-तापन[3] हो सकता है और फिर पूर्व-तापित वायु में उन्हे जलाया जा सकता है, जिससे बहुत उच्च ताप मिलता है; उनमें इंधन झोंकने और राख तथा झॉवा हटाने की कोई समस्या नहीं होती; उनका दहन अधिक निश्चित रूप से नियंत्रित किया जा सकता है; इसके अतिरिक्त अन्तर्दहन[4]–इंजनों और गैस-वरीवर्त्तों[5] में उनकी ऊर्जा उच्च कार्य-क्षमता से शक्ति में परिवर्तित की जा सकती है। इन और दूसरे कारणों से कोयले और कोक की बड़ी मात्रा गैसों मे परिवर्तित की जाती है, जिनके मुख्य दाह्य[6] अवयव कार्वन-मोनोक्साइड और हाइड्रोजन होते है। इनमें उत्पादक-गैस, जल-गैस, और अर्द्ध-जल-गैस[7], इत्यादि भी शामिल है। न केवल कोक और कोयला बल्कि प्रायः किसी भी प्रकार का कार्वनमय[8] द्रव्य, उदाहरणार्थ लकड़ी का बुरादा या पीट, इस प्रकार गैस में रूपान्तरित किया जा सकता है।

1. Lay-out 2. Gasification 3. Pre-heated 4. Internal-Combustion
5. Gas-turbine 6. Combustible 7. Semi-water-gas
8. Carbonaceous

उत्पादक-गैस

उत्पादक गैस के बनाने की विधि बडी सरल है, क्योंकि इसे बनाने के लिए इतना ही आवश्यक है कि उद्दीप्त कार्बन, सामान्यतः कोक, के गहरे स्तर[1] में से वायु को प्रवाहित किया जाये। सबसे नीचे के चार इचो में वायु की कोक से प्रति-



चित्र, १६. गैस-उत्पादक

1. Bed

क्रिया होती है जिससे कार्बन-डाइ-आक्साइड बनती है और बहुत उष्मा पैदा होती है; इस तल से ऊपर, कार्बन-डाइ-आक्साइड कार्बन से मिलकर कार्बन-मोनो-आक्साइड बनाती है और उष्मा की कुछ मात्रा को अवशोषित कर लेती है यद्यपि उतनी नही जितनी कि प्रथम प्रतिक्रिया से मिलती है। इस प्रकार इंधन के स्तर से निकलनेवाली गैसें आवश्यक रूप से कार्बन-मोनोक्साइड और वायु में से मिलनेवाली नाइट्रोजन का उष्ण मिश्रण होती है किन्तु उनमें बहुधा कुछ अपरिवर्तित कार्बन-डाइ-आक्साइड और वायुमडलीय जल-वाष्प और उद्दीप्त कोक की प्रतिक्रिया से उत्पादित, कुछ हाइड्रोजन भी रहते हैं। यदि गैस ठंडी की जाती है, तो "सचेतन"[1] उष्मा का अपव्यय होता है और कोक के दहन की लगभग २९ प्रतिशत उष्मा नष्ट हो जाती है। किन्तु यदि गैस को उस अवस्था मे ही जलाया जा सके, जब वह गरम रहती है, तो इस उष्मा का उपयोग हो जाता है।

गैस-उत्पादक (चित्र १६) केवल एक प्रतिक्रिया-कक्ष है जिसके नीचे की ओर लोहे की सलाखोवाली झर्झरी (ग्रेट) होती है जिसमे कोयला रखा जाता है। इन्हीं सलाखो में से वायु का एक झोका प्रवेश करता है। चोटी के निकट इसमें एक निर्गम मार्ग होता है जिसमें से उत्पादक गैस निकलती है। इस प्रकरण के अनन्त भेद हो सकते हैं। प्रतिक्रिया कक्ष जल-निचोल[2] से घिरा हो सकता है जिससे वायु का झोंका उत्पन्न करने के लिए भाप मिलती है। वायु का झोका एक पखे या फुँकनी से मिल सकता है किन्तु इसे सामान्यतः एक भाप-प्रधार[3] से चलाये हुए अनुवेधक[4] के द्वारा उत्पन्न किया जाता है। वायु-मिश्रित भाप की कोक से प्रतिक्रिया होती है जिससे कार्बन-मोनो-आक्साइड और हाइड्रोजन बनते है और इस प्रकार गैस की दहन-उष्मा[5] कुछ अधिक हो जाती है।

उत्पादक से निकलनेवाली गैस में बहुत धूल मिली रहती है; यदि तुरन्त ही इसे जलाया जाये, तो इससे कोई विशेष कठिनाई नही होती, किन्तु यदि इसको संगृहीत किया जाये या यदि इसका उपयोग एक अन्तर्दहन इंजन में किया जाये तो धूल को हटाने के लिए गैस को साफ करना पड़ता है। उत्पादक गैस का दो तिहाई अंश अक्रिय[6] नाइट्रोजन होता है और इसीलिए इसका उष्मीय-मूल्य[7] अधिक नही होता—अतः कोई विशिष्ट प्रभाव उत्पन्न करने के लिए कोयला-गैस की अपेक्षा बहुत अधिक उत्पादक गैस जलानी

1. Sensible 2. Water packet 3. Steam-jet 4. Injecter
5. Heat of Combustion 6. Inert 7. Calorific value

पड़ती है। अत. एक निश्चित व्यय में किसी दूसरे गैसीय इंधन की अपेक्षा उत्पादक-गैस से अधिक उष्मा मिलती है, इसलिए अधिकाश उद्देश्यो के लिए इसमें नाइट्रोजन के मिश्रण को कोई महत्त्व नही दिया जाता किन्तु नगर-गैस के रूप में इसके वितरण मे इससे रुकावट अवश्य पडती है। यदि उत्पादक-गैस का घरों मे उपयोग किया जाये तो नगर की वात-धानियों[1] (वातधारको) और नलो को छः गुनी गैस रखनी होगी, जिससे उनका आकार बहुत वढ जायेगा और फलतः उनका क्रय-मूल्य भी बहुत बढ़ जायेगा। अत उत्पादक गैस एक ऐसा इधन है जिसका उपयोग वही होना चाहिए जहाँ इसे बनाया जाता है।

उत्पादक गैस को कोक से बनाने की आवश्यकता नही है, क्योकि कोयले से एक उत्तम और कुछ अधिक विशेषताओंवाली गैस का उत्पादन होता है ; जैसे, बिटुमिनी कोयले और भाप तथा वायु के मिश्रित झोंके का उपयोग करने से एक गैस प्राप्त की जा सकती है जिसमें लगभग ३० प्रतिशत कार्बन-मोनोक्साइड , १२ प्रतिशत हाइड्रोजन, ३ प्रतिशत मिथेन और ५५ प्रतिशत अदह्य[2] गैसें होती है।

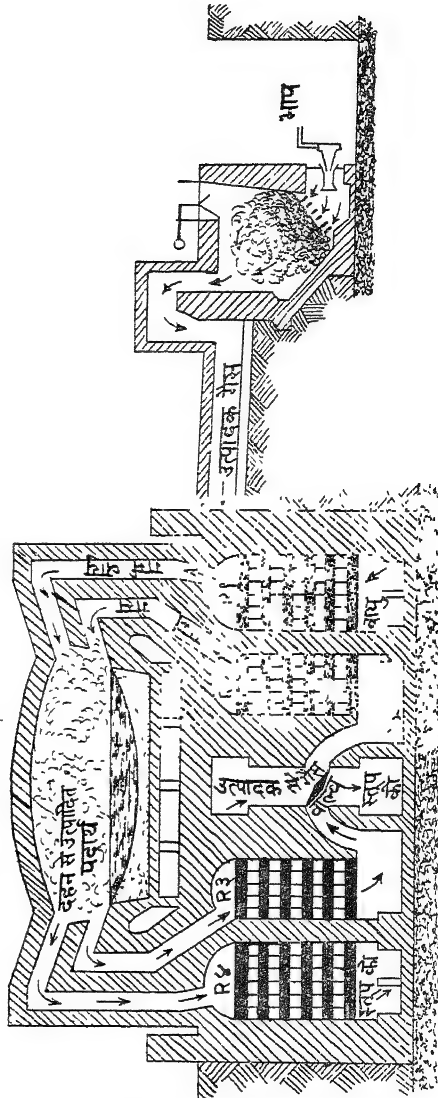
उत्पादक के उपयोग का एक साधारण उदाहरण गैस-कारखाने में बकयंत्रों में अग्नि का जलाना है (चित्र १५)। इसमे चिमनी के स्तूप द्वारा प्रेरित झोके से वायु भीतर खिंच जाती है। जिस कक्ष मे कोक होता है उसमे से यह प्रवाहित होती है और गर्म उत्पादक गैस मे परिवर्तित हो जाती है। तुरंत ही यह प्रतिक्रिया-कक्ष में जाती है जहाँ द्वारों मे से पुनः प्रवेशित वाय से इसका मिलन होता है, और जलकर यह कार्बन-डाइ-आक्साइड में परिवर्तित हो जाती है। उत्पादक में गैस-बकयंत्रो से मिलनेवाला, रक्त-ताप[3] कोक भरा जा सकता है जिससे इसके भीतर की उष्मा सुरक्षित रहती है।

पुनरुत्पादक-भ्राष्ट्रों मे अग्नि जलाना कदाचित् उत्पादक गैस का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण उपयोग है। वैद्युत-भ्राष्ट्रो के सिवा, जिनका उपयोग, कम-से-कम इंग्लैड में, अधिक महँगा पड़ता है, किसी भी भ्राष्ट की अपेक्षा इन भ्राष्ट्रो से अधिक उच्च ताप मिलता है। भ्राष्ट्र से बाहर निकलनेवाली गैसो की व्यर्थ जानेवाली उष्मा द्वारा गैस और वायु को जलाने से पहिले गरम करना, यही पुनरुत्पादक-भ्राष्ट्र का सामान्य सिद्धान्त है। परिणाम यह होता है कि जलनेवाली गैसो मे केवल उनके जलने से उत्पन्न हुई उष्मा ही नही होती बल्कि वह उष्मा भी होती है जो कि वायु और गैस को पहिले से दी गयी हो। इसलिए वे अपेक्षया बहुत अधिक उष्ण हो जाती है और एक बड़े भ्राष्ट्र-कक्ष के ताप को

1. Gas-holders　　2. Incombustible　　3. Red-hot

बढ़ाकर श्वेत-ताप[1] तक (१३००° सें० तक) पहुँचा देती है। काँच और इस्पात को पिघलाने के लिए यह नितांत आवश्यक है। चित्र १७, पुनरुत्पादक-भ्राष्ट्र का प्रदर्शक है। इसमें चार "स्टोव" होते हैं जो कि अग्नि-ईंट की जाली से भरे रहते है, जिनमें से दो, स्तूप तक जानेवाली व्यर्थ गैसों से, सदैव गर्म होते रहते है जबकि दूसरे दो, गैस और वायु को क्रमानुसार गर्म करते रहते है। जब इन पिछले दो स्टोवों (R^1 और R^2) में ईंटों की जाली ईंधन को अपनी कुछ उष्मा दे चुकी होती है और उसके कारण स्वयं कुछ ठंडी हो जाती है तो गैस और वायु को दूसरे स्टोवों (R^3 और R^4) में से प्रवाहित किया जाता है और गर्म व्यर्थ गैसों को, R^1 और R^2 में से, जो इस प्रकार एक बार फिर गर्म हो जाते है। इस प्रक्रम से न केवल उच्च ताप मिलता है बल्कि इससे उष्मा की बचत भी होती है।

अंत में, उत्पादक-गैस का अन्तर्दहन-इंजनो में ईंधन के रूप में उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार का इंजन अपना प्रभार प्रवेपण आवात[2] में खींचता है



चित्र. १७. एक पुनरुत्पादक-भ्राष्ट्र

1. White-heat 2. Induction Stroke

और इस कारण पम्प की भाँति कार्य करता है। इस तरह एक बड़ा इंजन एक उत्पादक से सयोजित किया जा सकता है जिसके भीतर से वह वायु को खीचता है। धूल को बेलनो मे पहुँचने और उन्हें क्षय करने से रोकने के लिए उत्पादक से मिलनेवाली गैस को शुद्ध करना पड़ता है और इस प्रकार "सचेतन" उष्मा नष्ट हो जाती है। फिर भी यतः भाप-इजनो की अपेक्षा गैस-इजन अधिक कार्यक्षम होते है, भाप-इंजनो में कोयला जलाने के बजाय एक उत्पादक में कोक के जलाने से विशेष लाभ हो सकता है। ऐसे इजनो का एक महत्त्वपूर्ण उपयोग जंगलों और ऐसे स्थानों में जहाँ कोयला सरलता से नही ले जाया जा सकता, आरा[1] मिलो को चलाने में किया जाता है। इंजन चलाने के लिए आवश्यक गैस बनाने के लिए साधारणतः व्यर्थ जानेवाली लकड़ी की कतरन और बुरादे को एक उत्पादक में जलाया जा सकता है। जब पैट्रोल बहुत दुर्लभ हो जाता है, जैसा कि युद्धकाल में, तो छोटे उत्पादक को कार या लारी में लगाया जा सकता है जिससे एक गैस प्राप्त होती है, जो गाड़ी को चला सकती है, यद्यपि उतने अच्छे ढंग से नहीं जितने से कि यह सामान्यतः चलती है। यदि इंजनों की प्ररचना ऐसी गैस का प्रयोग करने की दृष्टि से की जाये (अर्थात् बड़े बेलनवाले) तो उत्पादक गैस काफी संतोष-जनक इन्धन होगी, विशेषकर लम्बी यात्रा के लिए।

उत्पादक गैस का कदाचित अत्यधिक चकित करनेवाला उपयोग भूमिगत कोयले का गैसीकरण करने में होता है जिसमे कोयले के उन पतले स्तरो का उपयोग करने की व्यवस्था की जाती है जो खनन करने योग्य नहीं होते। स्तर तक, एक दूसरे से थोड़ी दूरी पर, दो बेधरंध्रों[2] का निमज्जन किया जाता है, इनमे से एक की पेंदी को आग लगायौ जाती है। वायु भीतर को खिंचती है जो दरारों के साथ-साथ उद्दीप्त कोयले से होती हुई दूसरे बेधरंध्र तक पहुँचती है। वायु की आक्सिजन कार्बन-मोनोक्साइड मे परिवर्तित हो जाती है और कोयला आसवित होकर कोयला-गैस बन जाता है। दूसरे बेधरंध्र से निकलने वाली गैस कदाचित् निम्नश्रेणी की उत्पादक-गैस होती है जिसका उष्मीय-मान क्रमशः नष्ट होते होते ८५ से लगभग १० ब्रिटिश-उष्मा-मात्रक प्रति घनफुट रह जाता है। वितरण के लिए इस गैस का कोई उपयोग नहीं रहता किन्तु इसे गैसवरीवर्त्त में जलाया जा सकता है जिसमे बहुत निम्न श्रेणी की गैसों का उपयोग हो सकता है और इस प्रकार शक्ति का उत्पादन किया जा सकता है। इस प्रक्रम का उपयोग रूस में १९३१ ई० से किया जा रहा है और ग्रेट ब्रिटेन में यह बड़े पैमाने पर परीक्षणों का विषय है।

1. Saw-mills 2. Bore-hole

वात-भ्राष्ट्र गैस

वात-भ्राष्ट्र[1] को हम विशाल उत्पादक कह सकते है। इसमें नीचे से वायु के एक झोके का प्रवेश कराया जाता है: ईषा[2] में उद्दीप्त कोक और साथ-ही-साथ अयस्क (ओर) और चूना पत्थर होता है, अतः इससे कार्बन-मोनोक्साइड का उत्पादन होता है। इसमें से कुछ, लौह-अयस्क की आक्सिजन से मिलकर उसे लोहे में अवकृत कर देती है, किन्तु इसका अधिकांश भ्राष्ट्र की चोटी की ओर प्रवाहित होता है। यहाँ, कुछ समय पहले तक, जिसका हमें अब भी स्मरण है, इसे जलाया जाता था किन्तु आज भ्राष्ट्रो को एक संतुलित लोह-शकु[3] द्वारा बन्द किया जाता है और गैसों को इस्पातीय नलों में से निकाला जाता है। गैस में मुख्यतः कार्बन-मोनोक्साइड, कार्बन-डाइ-आक्साइड और नाइट्रोजन होते हैं; इसकी उष्मीय-शक्ति अपेक्षया कम होती है, किन्तु यत. इसका उत्पादन बड़ी मात्राओ में होता है, एक टन लोहा बनने पर इसके साढे छः टन बनते हैं, इसमें ऊर्जा का बडा सग्रह होता है और लोहे के उद्योगो में इसके उपयोग से लाभ उठाया जाता है। इसका अधिकाश पुनरुत्पादक स्टोवो में, प्रवाह की वायु को तपाने के लिए जलाया जाता है, किन्तु भाप बनाने में भी इसका उपयोग होता है या इसे उन बडे गैस-इंजनो में जलाया जाता है जिनसे पंखे चलते है जिनके द्वारा वायु भ्राष्ट्रो में प्रवाहित होती है। जो कार्य एक घनफुट कोयला-गैस से होता है उसे करने के लिए इस गैस के छः घनफुटों की आवश्यकता होती है, अतः इसका वितरण करने से कोई लाभ नहीं हो सकता।

जल-गैस

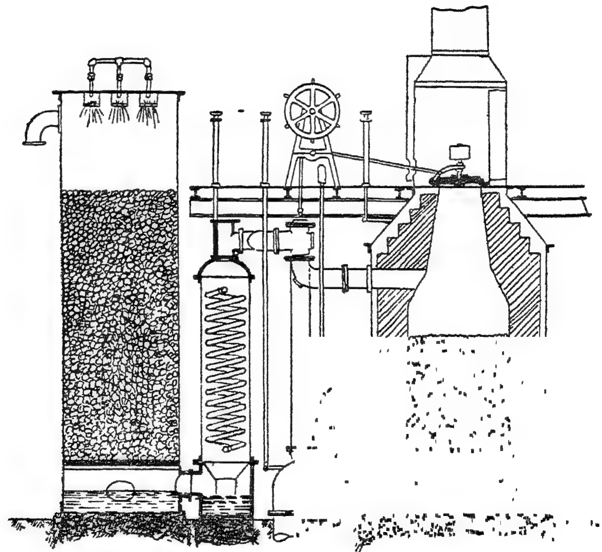
यदि ताप-दीप्त[4] कार्बन (जैसे कोक) के एक स्तर से भाप को प्रवाहित किया जाये तो भाप की इससे प्रतिक्रिया होती है जिससे हाइड्रोजन और कार्बन-मोनोक्साइड (नीली* जल-गैस) का एक मिश्रण बनता है, और जिसमें उष्मा का व्यय होता है। इस प्रकार कार्बन के भार से उष्मा निकल जाती है और कुछ मिनटों मे ही यह इतने ताप तक ठंडा हो जाता है कि प्रतिक्रिया बन्द हो जाती है।

गैस के निरंतर उत्पादन के लिए यह आवश्यक है कि थोड़े-थोडे काल के पश्चात भाप की प्रधार के स्थान पर वायु की प्रधार का उपयोग किया जाये जिससे कोक जलकर कार्बन-डाइ-आक्साइड और कार्बन-मोनोक्साइड में परिवर्तित हो जाता है और इस

1. Blast-furnace 2. Shaft 3. Iron-cone 4. Incandescent

* नीली, क्योंकि यह एक नीली ज्वाला के साथ जलती है

प्रकार उष्मा तैयार हो जाती है। जैसे ही ईंधन का स्तर एक बार फिर गर्म होता है, वायु का प्रवेश बन्द कर दिया जाता है और भाप की प्रधार फिर आने लगती है। इस प्रकार वायु और भाप को बारी-बारी से एक उत्पादक में प्रवाहित करके जल-गैस बनायी जाती है। वायु के प्रवाह-काल में उत्पादक-गैस बनती है जिसका उपयोग किया जा सकता है या जिसे व्यर्थ ही जलने दिया जा सकता है; भाप के प्रवाह-काल में, जल-गैस बनती है जिसे दूसरे नल से बाहर निकाला जाता है। साधारणतः जल से इसका शोधन किया जाता है और तत्पश्चात् बहुत से कार्यों में इसका उपयोग हो सकता है। जब तक कि "प्रवाह" में निकसित गैसो की उष्मा का उपयोग करने के लिए कोई साधन न निकले, केवल आधा ही कोक जल-गैस में परिवर्तित होता है और शेष का अपव्यय होता है। जल-गैस के दहन की उष्मा उपयोग किये गये कोक की उष्मा का अधिक-से-अधिक केवल लगभग ६० प्रतिशत होती है।



चित्र १८. जल-गैस संयंत्र, दायीं ओर, प्रतिक्रिया-कक्ष; बायीं ओर, गैसों के शुद्धीकरण के लिए मार्जक[1]

1. Scrubber

जल-गैस का उष्मीय-मान कोयला गैस के उष्मीय-मान के दो-तिहाई से थोड़ा कम होता है। इस दृष्टिकोण से इसमे कार्बन का मिश्रण करके इसे उत्तमतर बनाया जा सकता है। ऐसा करने के लिए, "प्रवाह" में बनी उत्पादक-गैस एक अग्नि-ईंट कक्ष में जलायी जाती है जिसमें, भाप के प्रवाह-काल में, तैल शीकरित[1] किया जाता है। इससे तैल का "भजन"[2] हो जाता है जिससे उच्च-उष्मीय-मान की गैसें उत्पादित होती है जो जल-गैस के साथ मिल जाती है।

जल-गैस के दो मुख्य उपयोग है, एक नगर-गैस के रूप मे और दूसरा कच्चे पदार्थ के रूप में।

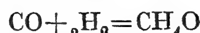
सर्वप्रथम, इससे एक सस्ती गैस मिलती है जिसे नगरो को मिलनेवाली कोयला-गैस से मिश्रित किया जा सकता है और जिसे गैस-कारखानो द्वारा प्रदाय किये गये कोक से बनाया जा सकता है। सयत्र सस्ता होता है और शीघ्र ही इससे कार्य शुरू किया जा सकता है; इस प्रकार इससे एक ऐसा साधन मिलता है जिससे अचानक ही भारी भार की आवश्यकता पूरी करने के लिए गैस की बडी मात्रा शीघ्रता से उत्पादित की जा सकती है। अमिश्रित रूप मे इसका प्रदाय नही किया जाता क्योकि यह विपैली और प्राय. गधहीन दोनों ही होती है जिससे यह उपभोक्ताओ के लिए संकट का कारण बन सकती है।

ईंधन के अतिरिक्त दूसरे कार्यो में इसका उपयोग इस पुस्तक के क्षेत्र से बाहर का विषय है किन्तु यह हाइड्रोजन का सबसे महत्त्वपूर्ण स्रोत है; अमोनिया का संश्लेषण करने, तैलो और वसाओ[3] का हाइड्रोजनीकरण[4] करने और दूसरे हजारो रासायनिक उद्देश्यों मे इसका उपयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त, इससे दो बहुमूल्य इंधन, मिथैनौल और मोटर स्पिरिट बनाये जा सकते है।

मिथैनौल, मिथाइल एल्कोहल, CH_3OH जो एक वर्णहीन वाष्पशील द्रव्य है, एक सीमान्त[5] ईधन है; अर्थात् यह साधारण परिस्थितियो में पैट्रोल से होड नही ले सकता, किन्तु पैट्रोल की स्वल्पता की स्थिति मे इसका उपयोग किया जा सकता है। यह केवल ईधन ही नहीं है; क्योकि एक विलायक[6] के रूप में, प्लास्टिको को बनाने के लिए फौरमैलडिहाइड के स्रोत के रूप में, इत्यादि, रासायनिक उद्योग में बड़ी मात्राओं में इसका उपयोग किया जाता है। हाइड्रोजन से सचित जल-गैस को एक तप्त उत्प्रेरक[7]

1. Sprayed 2. Cracked 3. Fats
4. Hydrogenation 5. Marginal 6. Solvent
7. Catalyst

के ऊपर से, जिसमें जिंक-क्रोमाइट होती है, प्रवाहित करने से इसे बनाया जाता है,



$$CO + {}_2H_2 = CH_4O$$

दूसरे उत्प्रेरकों का उपयोग करने से हाइड्रोजन से सचित जल-गैस से उच्च-एल्कोहल उत्पादित किये जा सकते है जो रसद्रव्य[1] के रूप में उपयोगी होते है।

संश्लेषित मोटर-स्पिरिट बनाने का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रक्रम, फिशर-ट्रोप्ष प्रक्रम है जिसमे जल-गैस को एक गर्म किये हुए उत्प्रेरक के ऊपर से,जिस में मुख्यतः कोबाल्ट होता है, प्रवाहित किया जाता है।

इन परिस्थितियों में वाष्पशील हाइड्रो कार्बन बनते है, कारों में जिनका उपयोग किया जा सकता है, यद्यपि स्फोटन[2] करने की उनकी विशेषताओ के कारण डीजैल इजनो के लिए वे अधिक उपयुक्त होते है। फिशर-ट्रोप्ष प्रक्रम में जल-गैस बनाने के लिए किसी भी प्रकार के ईधन का उपयोग किया जा सकता है जिसमें भूरा कोयला और लिग्नाइट भी सम्मिलित हैं; किन्तु क्योकि एक टन मोटर स्पिरिट बनाने के लिए तीन या चार टन ईधन की आवश्यकता पड़ती है, अनियंत्रित बाजार मे पैट्रोलियम से उत्पादित पदार्थो से वह स्पर्द्धा नहीं कर सकता।

फिर भी यदि संसार का तैल-भाण्डार कम होने लगे तो फिशर-ट्रोप्ष और नीचे वर्णित बरगियस प्रक्रम द्वारा अन्तर्दहन-इंजनो के लिए द्रव इंधन मिलता रहेगा।

कोयले का हाइड्रोजनीकरण

सूक्ष्मता से विभाजित कोयले पर हाइड्रोजन की क्रिया अधिक दाब के प्रभाव से इसे एक तैल में परिवर्तित कर देती है जिससे कुछ और उपचार के पश्चात् एक अच्छी श्रेणी के मोटर-स्पिरिट का उत्पादन होता है जो फिशर-ट्रोप्ष प्रक्रम द्वारा उत्पादित स्पिरिट से भी बहुत अच्छा होता है। किन्तु इसे, बरगियस प्रक्रम को, एक टन मोटर-स्पिरिट का उत्पादन करने के लिए चार या पाँच टन कोयले की आवश्यकता होती है और संयंत्र पर पूजी का व्यय अधिक होता है। इसलिए यह प्रक्रम युद्धकाल मे पैट्रोल की दुष्प्राप्यता का सामना करने में सहायता के लिए ही है किन्तु जबतक करके विषय में इससे उत्पादित पदार्थ के साथ विशेष व्यवहार न किया जाये, यह व्यापारिक दृष्टि से उपयोगी प्रस्ताव नहीं हो सकता।

यह प्रक्रम असाधारण है। इस प्रक्रम से बनने वाले तैल के साथ कोयला एक कलिल[3] लेई में पीसा जाता है और विशेष-इस्पात[4] के बडे बेलनों में २५० वायुमंडलीय दाब पर इस कोयले से हाइड्रोजन की प्रतिक्रिया करायी जाती है। इस प्रकार

1. Chemicals 2. Knocking 3. Colloidal 4. Special-steel

कोयला तैल में परिवर्तित हो जाता है, जिसका एक बार और हाइड्रोजनीकरण करने से मोटर स्पिरिट की प्राप्ति होती है। बिलिंघम में आई-सी-आई द्वारा क्रियान्वित इस प्रक्रम ने ब्रिटेन की पेट्रोल की युद्धकालीन आवश्यकता की पूर्ति में एक विशिष्ट अंशदान किया था।

लकड़ी का कार्बनीकरण

काठकोयले का उपयोग इंग्लैण्ड में ईंधन के रूप में नही किया जाता किन्तु दक्षिणी यूरोप और पूर्वी देशो में यह एक महत्त्वपूर्ण ईंधन है। कुछ पदार्थो को अवशोषित करने की इसकी असाधारण शक्ति के कारण बहुत से रासायनिक कार्यो के लिए इसकी आवश्यकता होती है; उदाहरणार्थ, प्राकृतिक गैस मे वर्तमान गैसोलीन-वाष्प को अवशोषित करन में इसका उपयोग हो सकता है (पृष्ठ ९१)।

काठकोयला जलाने की पुरानी विधि मे, जो अभी तक यत्र-तत्र व्यवहार में लायी जाती है, गुम्बदीय आकार के ढेरो मे लट्ठो को एकत्र किया जाता है जिनके मध्य में एक धूम-मार्ग रहता है और जिन्हे मिट्टी से ढक दिया जाता है। उद्दीप्त कोयला धूम-मार्ग में से नीचे डाला जाता है जिससे सारा ढेर सुलगने लगता है। केन्द्रीय वात-छिद्र[1] को बन्द करके और किनारो के निकट के छिद्रों को खोलकर अग्नि इस प्रकार नियंत्रित की जाती है कि लकड़ी का न्यूनतम अपव्यय करने से ही सारा ढेर झुलस जाता है। इस प्रक्रम में अधिकतर उपजात नष्ट हो जाते है, यद्यपि स्तूप की पेंदी से लकड़ी का कुछ तारकोल इकट्ठा किया जा सकता है; इसलिए अब लकड़ी साधारणत. ऐसे ढंग से आसवित की जाती है कि लकड़ी का तारकोल और दूसरे उत्पादित पदार्थ एकत्र किये जा सकें। जिस गैस का निकास होता है, उसमें अधिकतर मिथेन होती है, उसका उपयोग भी दूसरी दाह्य गैसों की भाति किया जा सकता है, किन्तु साधारणतः इसका उपयोग बकयंत्र को गर्म करने में होता है।

इधन के रूप में काठकोयला से कितने ही लाभ है। यह बिना ज्वाला के जलता है और इससे धुआँ उत्पन्न नही होता। यह राख के स्तर के नीचे लम्बे समय तक सुलगता रहता है और धौकनी से शीघ्रता से भड़काया जा सकता है। यदि इसे एक कम गहरी तह में जलाया जाये तो बहुत कम कार्बन-मोनोक्साइड बनती है, किन्तु इस विषैली गैस का उत्पादन एक खतरा है और जिन देशों मे काठकोयला सामान्य ईधन है, वहाँ इसके कारण बहुत से मनुष्य मर जाते है।

1. Vent

क्षुद्र-इष्टक[1]

कोयले के खनन और दूसरे व्यवहारो से इतना छोटा कोयला और चूरा उत्पन्न होता है कि इसकी पूर्ण राशि सरलता से बिक नही सकती । इसका उपयोग पेषित इंधन के स्थान पर या कोक बनाने मे किया जा सकता है, किन्तु यह स्पृहणीय है कि इसको घरेलू ईंधन में परिवर्तित किया जाये ; कोयले की धूल को डामर की थोडी मात्रा मे मिलाना, इसे तपाना और फिर इसको ईटो मे या अडाकार रूप मे सपीड़ित[2] करना इसकी प्रामाणिक विधि है । अब एक नया प्रक्रम सिद्ध किया जा चुका है जिसमे डामर की आवश्यकता नही होती । इस, हार्डी प्रक्रम, मे कोयले की धूल को सावधानी से नियंत्रित ढग से गर्म किया जाता है जिससे इसका कोमल होना प्रारम्भ हो जाता है; तब लगभग चार टन प्रति वर्ग इंच के दाब से इसे सघन गिट्टकों (इष्टको) मे परिणत कर लिया जाता है ।

1. Briquettes 2. Compressed

अध्याय ५

पेट्रोलियम का निःसरण[1]

पेट्रोलियम

एक तैल सदृश द्रव को पेट्रोलियम का नाम दिया गया है जो कुछ सरन्ध्र[2] चट्टानों में बहुत बड़ी मात्रा में पाया जाता है और उनमें तैल-कूपों[3] का छिद्रण कर[4] इसे निकाला जा सकता है। रचना[5] और रंग की दृष्टि से इसमें एक दूसरे से बहुत भेद पाया जाता है किन्तु इसका अधिकाँश कार्बन और हाइड्रोजन के यौगिकों[6] का एक संकीर्ण मिश्रण[7] है। ऐसे यौगिकों की संख्या बहुत अधिक है जिनमें से कुछ के अणु छोटे रहते है, कुछ के बड़े, कुछ के परमाणु ऋजु-श्रृंखलाओं[8] में नत्थी रहते हैं, कुछ शाखागत श्रृंखलाओं[9] में और कुछ वलयों[10] में ग्रथित होते है। पेट्रोलियम के सभी अवयव[11] जलते हैं और सभी का उष्मीय-मान[12] अधिक होता है। किन्तु पेट्रोलियम अपनी अशोधित[13] अवस्था में नही जलाया जाता, बल्कि सदैव इसका शोधन किया जाता है जिससे हलके हाइड्रोकार्बनों को इससे पृथक् किया जा सके जो अन्तर्दहन-इंजनों में उपयोग के लिए अधिक उपयुक्त हैं।

यह गाढा गहरा भूरा सा या हरा सा द्रव मोटर गाड़ियो और वायु-यानो के चलते रहने के लिए नितांत आवश्यक है और इससे विश्व की इंधनोर्जा का २७ प्रतिशत, अथवा यदि इसके साथ मिलनेवाली प्राकृतिक गैस की भी गणना की जाये तो लगभग ३६ प्रतिशत, प्राप्त होता है (१९५२)।

१९५३ ई० में सारे विश्व का इसका उत्पादन ७४.९ करोड़ मेटरिक टन था जिसका लगभग आधा उत्पादन संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में हुआ था, लगभग छठवाँ भाग लैटिन अमेरिका में और दूसरा छठवाँ भाग मध्य पूर्व में।

1. Winning 2. Porous 3. Oil-wells 4. Drilling 5. Composition 6. Compounds 7. Mixture 8 Straight-chains 9. Branched chains 10. Ring 11. Constituents 12. Calorific value 13. Raw

पेट्रोलियम का उद्गम

किस प्रकार यह तैल जो प्रकृति की किसी भी वस्तु से इतना भिन्न है, अस्तित्व में आया और सरन्ध्र प्रस्तरो तथा बालुओं मे बड़ी मात्रा में संचित हुआ ? अभी इसका कोई निश्चित उत्तर नहीं दिया जा सकता ।

दो प्रकार के सिद्धान्त सामने रखे गये है । पहिला यह कि कुछ खनिज पदार्थो, जैसे जल और धात्विक[1] कार्बाइड की रासायनिक[2] प्रतिक्रिया से इसका प्रारम्भ हुआ; अब इसे कोई नहीं मानता । दूसरा यह कि तैल जीवित जीवाणुओं[3] के अवशेषो से व्युत्पन्न हुआ है । यह सर्वत्र स्वीकार किया जाता है, यद्यपि जिन अवस्थाओ से होकर जीवाणु तैल मे परिवर्तित हुए, वे बहुत अनिश्चित है ।

तैल सरन्ध्र प्रस्तरो या बालुओ मे पाया जाता है किन्तु इसकी रचना वही हुई है, ऐसा प्रतीत नही होता । वस्तुतः ऐसा प्रतीत होता है कि अधःस्थ स्तरो––पक, शिलास्तर और चूने के पत्थर––मे इसकी रचना हुई और कदाचित् जल के दाब के कारण उनके ऊपर की जगह मे आने पर यह विवश हुआ । जितनी चट्टानो में तैल के निर्मित होने की सम्भावना है वे सभी सामुद्रिक प्रस्तर है, अर्थात् वे समुद्र के नीचे संगृहीत पदार्थो से बने हुए है और इसीलिए हम मानते है कि जिस कार्बनिक द्रव्य से तैल बना वह सामुद्रिक पौधो या जन्तुओं का अवशेष था जो सम्भवतः अणुवीक्षणीय[4] था जैसे काई[5], द्वाण[6] (द्विपरमाणु) और पाद-छिद्र-गण[7] । उस तलछट और गलन में जो समुद्रो में से अवक्षेपित हो गये हैं और अब सिन्धुतल पर पाये जाते हैं, इस प्रकार के अवशेष मिलते है; कभी-कभी ये अवक्षेप का २० प्रतिशत तक हो सकते है, किन्तु साधारणतया बहुत कम होते हैं । हम यह नही जानते कि मृत जन्तुओ और पौधो के अणु हाइड्रोकार्बनो मे किस प्रकार परिवर्तित हुए । यह असम्भाव्य प्रतीत होता है कि उन पर उष्मा की एक बड़ी मात्रा का प्रभाव हुआ है क्योकि पेट्रोलियम में कितने ही ऐसे पदार्थ हैं जो १४०° से० से ऊपर के तापों पर विच्छेदित हो जाते है; अत्यधिक संभाव्य सिद्धान्त यह है कि आक्सिजन-इतरजीवी[8] प्रकार के जीवाणुओ ने (वे जो मुक्त आक्सिजन के बिना जीवित रह सकते है) अवशेषों का विच्छेदन किया और आक्सिजन को हटाकर हाइड्रोकार्बनो को बचा रहने दिया ।

प्रथम दृष्टि डालने पर तैल की इतनी मात्रा के लिए पर्याप्त कार्बनिक द्रव्य के

1. Metallic 2. Chemical 3. Organisms 4. Microscopic
5. Algae 6. Diatoms. 7. Foraminifera 8. Anaerobic type

अस्तित्व की सम्भावना को मान लेना कठिन है। किन्तु १९३५ ई० तक पृथ्वी से लिया गया सारा तैल एक घन मील के चौथाई से अधिक न था। जिन प्रस्तरो में तैल पाया जाता है उनकी माप हजारों घन मीलों में की जाती है, इसलिए हम जितना तैल धरातल पर लाते है उसके उत्पादन के लिए कार्बनिक द्रव्य की बहुत बड़ी मात्रा की आवश्यकता नही है।

तैल के लिए अन्वेषण[1]

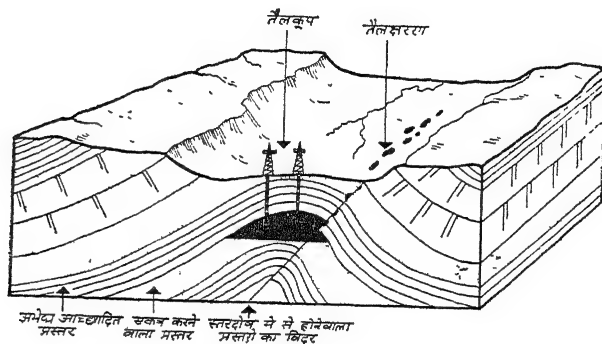
तैल के उत्पादन से सम्बन्धित पहिली समस्या उस स्थान की खोज है जहाँ तैल-कूपों का छिद्रण किया जाना है। प्रथम तैल-क्षेत्रों का पता धरातल तक आनेवाले तैल और गैस के क्षरणो[2] या प्रस्रवणों से लगा था। ऐसे क्षरणो का उपयोग प्राचीन काल से किया जाता रहा है; और १८६० ई० के पश्चात् जब पेट्रोलियम उद्योग का प्रारम्भ हो चुका था संसार के बहुत से प्रदेशो में ऐसे चिह्नो की खोज की जाने लगी। तैल, गैस या एस्फाल्ट (शिलाजतु) के चिह्नों की खोज करना और फिर परीक्षण या "जंगली बिल्ली" कूपों का छिद्रण करना एक मानी हुई विधि थी और अब भी है। भूतत्व[3] वैज्ञानिक प्रायः तुरन्त समझ गये कि तैल की प्रवृत्ति स्तरो के तोरण[4] अर्थात् प्रस्तरों की ऐसी रचना, जिसका रूप एक उल्टे गर्त[5] जैसा होता है, के नीचे संचित होने की होती है (चित्र १९), किन्तु कुछ वर्षो तक तैल-उद्योग ने इस सिद्धान्त की ओर कुछ अधिक ध्यान नही दिया; और केवल १९०० ई० के पश्चात् ही भूतत्व वैज्ञानिकों के मत पर गम्भीरता से विचार किया गया। १९२० ई० के पश्चात् वायुयानों द्वारा फोटो ले सकने से भूमि के तल का आपरीक्षण[6] और जिस प्रकार की संरचना में तैल के होने की सम्भावना है उसका ज्ञात करना सम्भव हुआ।

क्रोडो[7] का छिद्रण करने से, तल पर दृष्टिपात करने की अपेक्षा, बहुत अधिक सूचना मिल सकती है, किन्तु अन्वेषण करने की इस विधि पर बहुत व्यय होता है। छिद्रक[8] द्वारा ऊपर लाये गये प्रस्तरो में उपस्थित अणुवीक्षणीय फौसिलो[9] से भूतत्व वैज्ञानिको को पता चलता है कि क्या वे उस प्रकार के है जिनके साथ तैल सामान्यतः पाया जाता है।

दूसरी विधि जिसका अब उपयोग किया जाता है यह है कि बहुत से स्थानो पर गुरुत्वाकर्षण-शक्ति[10] मापी जाती है। जिस संरचना[11] में तैल होता है उसका

1. Prospecting 2. Seepages 3. Geology 4. Anticline 5. Trough
6. Survey 7. Cores 8. Drill 9. Fossils 10. Gravitation 11. Structure

घनत्व[1] अधिकतर प्रस्तरो के घनत्व से कम होता है और इसलिए किसी भी दूसरे स्थान की अपेक्षा उनके ऊपर पृथ्वी का आकर्पण कम होता है। एक दूसरी विधि धरा-



चित्र. १९. प्रस्तरों के एक तोरण के नीचे एकत्र हुआ तैल, एक प्रस्तर-दोष में से तल तक जिसका क्षरण होता है। (मैल पैट्रोलियम कम्पनी की कृपा से)

तल पर विस्फोटनो के द्वारा प्रस्तरों मे से चलनेवाली संपीड़ित-तरंगों[2] को उत्पन्न करना है, और फिर नीचे के प्रस्तरो मे वे किस प्रकार परावर्तित[3] होती हैं, उसका मानचित्र बनाना है।

इस प्रकार की विधियों से यद्यपि तैल के अस्तित्व के बारे मे निश्चित रूप से कुछ नही जाना जा सकता तथापि इनसे कम-से-कम परीक्षण-कूपों के निमज्जन[4] के लिए सर्वोत्तम स्थानो का अच्छा संकेत मिल जाता है जो कि तैल के अस्तित्व का एक-मात्र प्रमाण है।

तैल-क्षेत्र की संरचना

तैल-क्षेत्र की नितांत आवश्यकता पक या गीले प्रस्तर के प्रकार का एक आवरण होता है जिसमें से तैल नही निकल सकता और जो सरध्र या विदारित[5] प्रस्तरो के प्रदेशो को ढके रहता है जिनके बीच की जगह पेट्रोलियम से भरी रहती है। इस विषय के लेखक तैल की "झीलों" और "तालाबो" की चर्चा करते है किन्तु ऐसा कहने से यह अर्थ लगाने का उद्देश्य नहीं होता कि तैल से भरे हुए गह्वर (गुफाएँ) है, बल्कि इसका अर्थ इतना ही होता है कि सरन्ध्र प्रस्तरों या बालुओ के बड़े-बड़े क्षेत्र है जिनसे तैल स्वतं-

1. Density 2. Compression-waves 3. Reflected 4. Sinking 5. Fissured

त्रतापूर्वक निकाला जा सकता है । कही-न-कही नीचे या पास मे ही सामुद्रिक-प्रस्तरो का होना आवश्यक है जिनमे तैल की रचना हुई होगी किन्तु यह मानने के लिए भी कारण है कि तैल एक स्थान से बहुत दूर के दूसरे स्थान तक जा सकता है । तैल की संनिधि (सचित राशि, पूल) मे सामान्यत: तैल, गैस और जल होते है । तैल जल के ऊपर रहता है; गैस प्राय: आंशिक रूप से अथवा पूर्णतया तैल मे विलीन रहती है और ऐसे दबाव के नीचे रहती है जो साधारणत. तैल को धरातल तक लाने के लिए पर्याप्त होता है जबकि पहिली बार कूप-छिद्रण किया जाता है । यह दाब ५००—१००० पौण्ड प्रति वर्ग इच के क्रम का हो सकता है जो सर्वप्रथम तैल, गैस और बालू को ऐसे अप्रतिरोध्य बल से बाहर निकाल सकता है जैसा कि भूमि से फूट पड़नेवाले पानी मे देखने में आता है । जब गैस और तैल निकाले जाते है, तो साधारणत. दबाव कम हो जाता है और अन्त में तैल को धरातल तक पम्प द्वारा पहुँचाना पडता है ।

तैल के लिए छिद्रण

पेट्रोलियम प्राप्त करने के लिए साधारणत. यह आवश्यक होता है कि एक गहरे कूप का छिद्रण किया जाये जिसका व्यास ४½ इंच से लेकर १ फुट से थोड़ा अधिक तक हो सकता है । कूप की गहराई कुछ सौ फुट से लेकर १२००० फुट तक हो सकती है । छिद्रण में चारों ओर इस्पात के कवचन[१] का आस्तरण[२] किया जाता है जो बहुधा सीमेंट में स्थापित किया जाता है ।

कूप का छिद्रण करने की दो विधियाँ है, प्रताडन[३] से या चक्र-छिद्रण[४] से । चाहे किसी भी प्रकार के करणो[५] (औजारो) का प्रयोग किया जाये, इन्हें और कवचन की कुछ लम्बाई को छिद्र मे नीचे ले जाना पड़ेगा, इसके अतिरिक्त घिसने या कुंठित होने पर करण को बाहर निकालना पड़ेगा । सुपरिचित तैल-उत्तोलक[६] का कार्य लम्बे करणों और नलों को उध्वाधरत.[७] छिद्रण में नीचे जाने देना और बाहर खींच लेना होता है । चाहे किसी भी विधि से कार्य किया जाये, शक्ति की आवश्यकता होगी, और वह भी एक अविकसित स्थान पर जो कदाचित् परिवहन के किसी भी साधन से दूर होगा, क्योकि करणों को ऊपर उठाना, नीचे ले जाना और उनसे कार्य करना होता है जबकि छिद्रण में पंक और जल को पम्प करना होता है । यह आवश्यक

1. Casing 2. Lining 3. Percussion 4. Rotary-drilling 5. Tools
6. Oil-derrick 7. Vertically

शक्ति साधारणत. भाप-इजन से मिलती है जो बहुत विश्वसनीय है और कठिन काय तथा भारी आघातो को सहन कर सकता है ।

प्रताडन छिद्रण की सरलतम विधि है । इस्पात का भारी करण ऐसी मनीला-रज्जु[1] से छिद्र में अवलम्बित किया जाता है जो कि धरन के एक सिरे से लटकी रहती है और इंजन द्वारा ऊपर नीचे ले जायी जाती है । ऊपर को उठती हुई धरन द्वारा करण छिद्र की तली से कुछ फुट ऊपर को खींचा जाता है और जब धरन नीचे को जाती है तो करण भी नीचे गिरता है । इस प्रकार के संघात से छिद्र की पेंदी टूट जाती है । छिद्र का नीचे का भाग जल से परिपूर्ण रखा जाता है और मलबा कुचल कर पतला कीचड बन जाता है जिसे बाहर निकाला जा सकता है ।

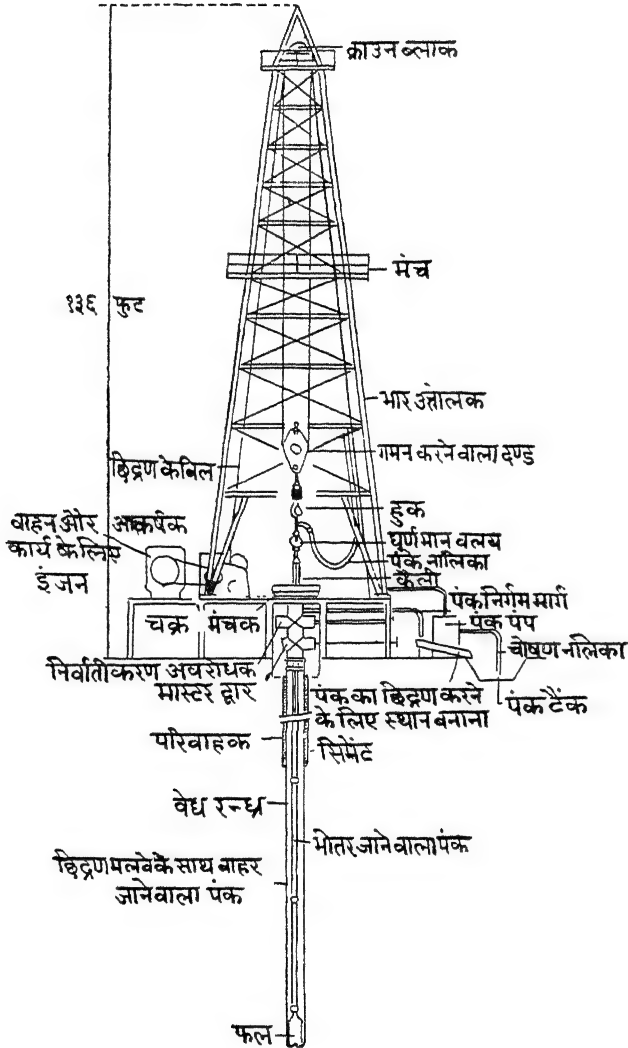
चक्र-छिद्रण अब प्रामाणिक विधि है और कठोर प्रस्तरों तथा गहरे छिद्रों के लिए आवश्यक होती है । दंडो की एक श्रेणी[2] से एक वृत्ताकार[3] या वलयाकार[4] फलक नत्थी किया जाता है । ये दंड या छड़ आपस मे पेचो से जुडे रहते है और घूर्णन[5] करती हुई एक मेज पर कार्य करनेवाले इंजन द्वारा घुमाये जाते है । जैसे ही मलबा[6] बनता है, पानी की एक धार से धुलकर बह जाता है या पतला पंक करणो की रज्जु के साथ नीचे चला जाता है ।

दोनो अवस्थाओ मे, ज्यों-ज्यों छिद्र गहरा होता जाता है, एक पक्की दीवार बनाने के लिए इस्पात के कवचन और नीचे किये जाते हैं तथा बहुधा सीमेंट से स्थापित किये जाते है जिससे गैस के विशाल दाब के कारण निकला हुआ तैल प्रस्तर और कवचन के बीच में न पहुँच जाय ।

तैल के लिए किये जानेवाले छिद्रण में एक मुख्य कठिनाई रज्जु, दंडों या करणो का टूट जाना है जिससे छिद्र में कोई भाग रह जाता है जो धरातल से कदाचित् आधे मील नीचे भी हो सकता है। इस टूटे हुए टुकड़े को निकालने के लिए ढेर या कीचड़ आदि में दबी हुई चीजों को ऊपर निकालने की क्षमता जैसी विशिष्ट निपुणता की आवश्यकता होती है। यह ऐसा कार्य है जिसमें कई सप्ताह या कई महीने लग जा सकते है और यह पूर्णतः असफल भी हो सकता है जिससे कूप को छोड देने के सिवाय और कोई उपाय नहीं रह जाता ।

दूसरी बडी कठिनाई कूपों में गैस के दाब से होती है। यह १८०० पौड प्रति वर्ग इंच तक हो सकता है, यद्यपि साधारणतः यह इस अंक के तिहाई के अधिक निकट

1. Manilla-rope 2. Series 3. Circular 4. Annular 5. Rotating
6. Debris



चित्र २० (रोटरी ड्रिलिंग रिग) घूमते हुए छिद्रण यंत्र का ढाँचा[1]
(शैल पैट्रोलियम कम्पनी की कृपा से)

1. Drilling rig

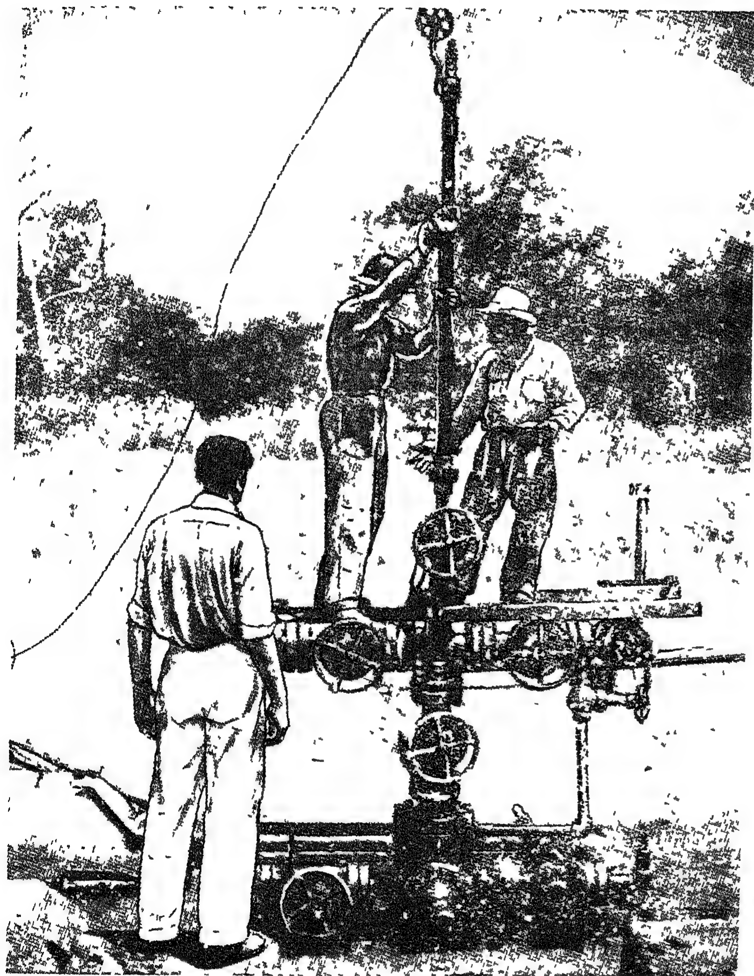
होता है। इतने दाब के कारण गैस और तैल में न केवल कवचनो को बधकर इनके और प्रस्तरो के बीच पहुँचने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है बल्कि यह गैस और तैल को अरोध्य बल से कूप से बाहर निकाल सकता है जिससे बहुत हानि होती है और तैल की बडी मात्रा व्यर्थ जाती है। इसे रोकने के लिए छिद्र को पतले पक के एक भारी स्तम्भ से भरकर गैस और तैल के दाब को संतुलित किया जाता है। एक गहरे कूप मे इस स्तम्भ का दाब तैल और गैस के दाब की अपेक्षा अधिक हो सकता है। ज्यों-ज्यों तैल निकट आता है, कवचन की चोटी पर एक कवचन-शीर्ष[1], या "क्रिसमस वृक्ष" लगा दिया जाता है (प्लेट ८, देखिये)। इसकी चोटी पर एक ग्रथिपिड[2] होता है जिसमें से छिद्रण-दण्ड कार्य कर सकते है। इसके पक्षो में पेचो से जुड़े भाग रहते है जिनमे से तैल निकाला जा सकता है। इस प्रकार तैल उसी क्षण से नियंत्रण में आ जाता है जब से कि छिद्रक द्वारा इसे मुक्ति मिलती है।

जो पदार्थ ऊपर आता है वह किसी भी प्रकार से उस अशोधित तैल के भी सदृश नहीं होता जो कि नल-पाँत[3] से परिष्करणी[4] या तैल ले जानेवाले जहाजो को भेजा जाता है। कूप से निकले हुए तैल में बहुधा गैस की एक बडी मात्रा उसी में घुली-मिली तथा बुलबुलो के रूप में मिश्रित रहती है। इस गैस को पृथक् करना होता है; निश्चय ही यह ऊर्जा के तीन अत्यधिक महत्त्वपूर्ण साधनों मे से एक है और रासायनिक उद्योग के लिए बहुमूल्य "कच्चा पदार्थ" है। जिस रूप में पेट्रोलियम कूप से निकलता है, उसमें इससे पायस[5] बना जल हो सकता है और इसे पूर्णतः पृथक् करना सरल नही होता। अधिक दाब वाले कूपों में तैल बहुधा बालू को ऊपर ले आता है और एक उच्च-दाब वाले तैल की प्रधार जिसमें बालू मिली हो, इस्पात की एक इंच मोटी पट्टिका[6] को कुछ घटों में ही आर-पार काट डालती है। इसलिए इससे पहिले कि तैल को परिष्करणी में ले जाया जाये जो कि तैल क्षेत्र में ही हो सकती है किन्तु बहुधा सैकडों मील दूर भी होती है, तैल पर बहुत कार्य करना आवश्यक हो सकता है। अशोधित तैल को परिष्करणी या उस बन्दरगाह पर स्थानान्तर करते है जहाँ से यह नलपाँत या नलमार्ग द्वारा ले जाया जाता है।

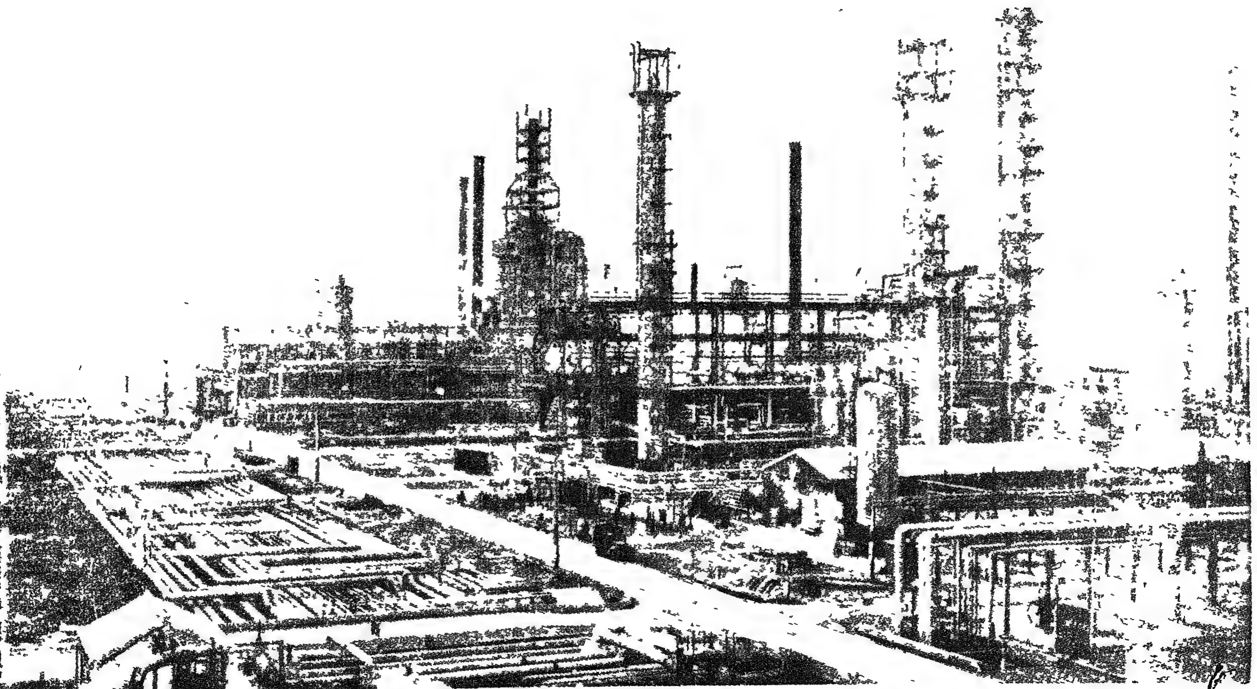
बिटुमिनी-बालू[7]

कनाडा में एथबासका नदी के निकट के प्रदेशों में एक संभावनीय इंधन का

1. Casing-head 2. Gland 3. Pipe lines 4. Refinery 5. Emulsion
6. Plate 7. Bituminous-sand



प्लेट ८—तैलकूप की चोटी पर लगा क्रिसमस वृक्ष (दे० पृ० ८६)



प्लेट ९-- एक आधुनिक तेल-परिष्करणी (दे० पृ० ९६)

आश्चर्यजनक निक्षेप[1] (जमाव) पाया जाता है। कदाचित् १०,००० वर्ग मील का क्षेत्र बालू, नदी-कर्दम और पंक से आच्छादित है जो कि बहुत श्यानता[2] वाले, एस्फाल्टिक (शिलाजतु) तैल से अन्तर्गर्भित है। यह कुल का १०–१७ प्रतिशत अंश होगा। तैल के कूपों का निमज्जन करके इसे प्राप्त नही किया जा सकता; बालुओं का उत्खनन[3] और उनसे तैल पृथक् करने के लिए कुछ उपचार करना पड़ेगा। जब कि तैल का कुछ भाग तल तक उठ आता है, तब गर्म या शीतल जल द्वारा धोने से या बालु को गर्म करने से यह किया जा सकता है। इस तरह तैल के अधिक तरल अंश का आसवन[4] हो जाता है और शेष कार्बनीकृत[5] हो जाता है। निश्चय ही, निक्षेपों से आवश्यक ईंधन मिल सकता है किन्तु इन निक्षेपों से लाभ उठाना केवल अब आरम्भ हो रहा है।

प्राकृतिक गैस और तैल का परिवहन

कूप से परिष्करणी तक तैल को ले जाना एक जटिल कार्य है। जो कुछ धरातल तक आता है, वह मुख्य रूप से गैस, तैल, जल और बालू का मिश्रण होता है। तल तक कुछ गैस तो अपने ही रूप में आती है और कुछ दाब के प्रभाव से तैल में विलीन रहती है तथा दाब कम होने पर यह बहुत तेजी से बाहर आती है। अतः मिश्रण को एक गैस-पाश[6] अर्थात् ऊर्ध्वाधर बेलनो में ले जाया जाता है जिनमें गैस चोटी पर पहुँच जाती है जब कि तैल नीचे के भाग से बहने दिया जाता है। कुछ प्रकार के तैलों में विलीन हुई गैस की बड़ी मात्रा को हटाने के लिए ऐसे दो या तीन पाशो को श्रेणी में उपयोग करने की आवश्यकता होती है। पृथक की हुई गैस साधारणतः अपने ही दबाव के प्रभाव से बाहर निकल जाती है। निश्चय ही, यह गैसोलीन-वाष्प से संतृप्त रहती है और ठंडा करके तथा दाब के प्रभाव से इसको संघनित करने के पश्चात् इस बहुमूल्य पदार्थ को पृथक् किया जाता है। तब "गैस-लिफ्ट" के लिए अर्थात् कूप में गैस की एक धारा का अनुवेधन करके तैल को ऊपर उठाने के लिए, यह "शुष्क" गैस क्षेत्रों में लौटा दी जाती है या फिर उन प्रदेशों मे पम्प द्वारा भेज दी जाती है जहाँ गरम करने और शक्ति के लिए इसका उपयोग हो सकता है।

तैल में अब भी जल और बालू मिले हो सकते है जो एक खुली टकी में इसे स्थिर करने से पृथक् किये जाते हैं। तैल ऊपर तैरने लगता है और पम्पो द्वारा अलग खींच लिया जाता है, जब कि बालू और जल पेंदी मे चले जाते हैं। कभी-कभी तैल और जल

1. Deposit 2. Viscosity 3. Excavation 4. Distillation 5. Carbonised
6. Gas-traps

का पायस बन जाता है और केवल गुरुत्व के द्वारा वे पृथक् नही हो सकते। तैल को गर्म करने से बहुधा काम चल जाता है; या फिर, वैद्युत-उपचार किया जा सकता है जिससे सूक्ष्म बूँदें परस्पर मिलकर बडी बूँदें बन जाती हैं जो स्थिर हो जाती है।

इस प्रकार की विधियो से कूपों से निकलनेवाले मिश्रण को अशोधित तैल में परिवर्तित किया जाता है जो अब संचित होने और परिष्करणो तक ले जाये जाने के लिए तैयार है।

उपयोग में लाये जाने के पहिले, गैस को भी कदाचित कुछ उपचार की आवश्यकता हो सकती है। "कड़वी गैस" के कुछ नमूनो में ८ प्रतिशत या अधिक हाइड्रोजन सल्फाइड (गन्धक मिश्रित हाइड्रोजन) होती है जिससे वह विषैली और संक्षारक[१] बन जाती है। बहुधा यह कष्टदायक अशुद्धि ऐथेनोलेमीनो[२] (पैंट्रोलियम से व्युत्पन्न रस-द्रव)[३] मे विलीन की जाती है; तत्पश्चात् इसे इनसे बाहर निकाला जा सकता है और आक्सीकरण[४] करके इसे सरलतापूर्वक गंधक में परिवर्तित किया जा सकता है, जो कि एक बहुमूल्य उपजात[५] है। जल-वाष्प को पृथक् करना भी आवश्यक हो सकता है जिसकी सर्वोत्तम विधि इसे सम्पीडित[६] और शीतल करना है।

जब तैल आवश्यकतानुसार गैस, जल और बालू से मुक्त हो जाता है तो उसे संग्रह करनेवाले टैंको में ले जाया जाता है। ये केवल खुले तालाब या झील हो सकते हैं किन्तु सामान्यतः लकडी या इस्पात से बने टैंक होते है। इनकी धारिता[७] का बड़ा होना आवश्यक नही है क्योंकि इनसे तैल एक मुख्य संग्रह-टैंक में चला जाता है। तैल का संग्रह करने के लिए यह आवश्यक होता है कि वाष्पण[८] न होने दिया जाये क्योंकि इससे अधिक बहुमूल्य भाग बाहर निकल जाता है और अग्नि का पहिले ही से वर्तमान खतरा और बढ़ जाता है। अतः बन्द टैंक सामान्यतः व्यवहार में लाये जाते है, किन्तु ताप परिवर्तन से होनेवाले प्रसार को ध्यान मे रखना भी आवश्यक होता है। कभी कभी धातु का एक खोखला ढक्कन तैल के ऊपर तैरता है जिससे वाष्प को संचित होने के लिए कोई जगह नही मिलती। कुछ प्रकार का तैल इस्पात का बडा नाशक होता है, इसलिए टैंक, बड़े आकार के भी, बहुधा लकड़ी के तख्तो से बनाये जाते हैं। अधिक शक्तिवाले कंक्रीट[९] में भी संक्षारण का प्रतिरोध करने की विशेषता होती है। कभी-

1. Corrosive 2. Ethanolamines 3. Chemicals 4. Oxidation 5. Byproduct 6. Compressed 7. Capacity 8. Evaporation 9. Reinforced-concrete

कभी भूमिगत टंकियो में तैल का सग्रह् नगरों को मिलनेवाले जल के संग्रह् की भाँति किया जाता है ।

नल-मार्ग

तैल का परिवहन इस पर होनेवाले व्यय का एक महत्त्वपूर्ण अंश है और यह एक विशिष्टतापूर्ण उद्योग है। थल पर अधिक मात्रा में तैल के ले जाने की प्रामाणिक विधि इसे नल-मार्ग द्वारा पम्प करना है । तैल-क्षेत्र बंदरगाह के निकट भी हो सकते है और नही भी; यदि निकट न हों, तो नल-पॉत या नल-मार्ग की, जिसकी लम्बाई सैकडो मीलों में नापी जा सकती है, आवश्यकता होती है । टैक्सास में, लौगविऊ[1] से न्यूयार्क तक (१३४१ मील) और इराक के तैल-क्षेत्रों से हैफा और त्रिपोली के बन्दरगाहों तक (११५० मील) के नल-मार्ग बडी सफलता के कार्यो में गिने जाते है। मुख्य नल-पॉतों का व्यास ६ से १२ इच तक होता है किन्तु कुछ दो फुट तक चौड़ी होती है। तैल में श्यानता होती है और इसको बहाने के लिए बहुत दबाव की आवश्यकता होती है, इसलिए नल-पाँतों को ८००–१००० पौड प्रति वर्ग इंच तक दबाव सहन करना पड़ सकता है । पम्प अपकेन्द्र[2] हो सकते है या पश्चाग्र-गति[3] और इन्हें भाप-इंजनों या डीजेल इंजनों से चलाया जा सकता है ।

किन्तु तैल ले जाने का सबसे सस्ता साधन नल-मार्ग द्वारा नही, बल्कि समुद्र से मिलता है और इस कार्य में कई हजार जहाज निरन्तर लगे रहते है । रेल या सड़कों द्वारा परिवहन अपेक्षया महँगा पड़ता है ।

केवल तैल ही नहीं, प्राकृतिक गैस भी नल-पॉतों द्वारा ले जायी जाती है । कभी-कभी गैस इतने दाब पर प्राप्त होती है कि इसके प्रसार ही से इसे ले जानेवाला बल मिल जाता है किन्तु बहुधा गैस-इंजनो से चलाये गये संपीडकों[4] द्वारा इसे पम्प करना पड़ता है । जब यह उस क्षेत्र में पहुँचती है जहाँ कि इसकी आवश्यकता होती है तो इसका प्रसार ऐसी बड़ी गैस-धानियों[5] में कराया जाता है जैसी कि नगर-गैस के लिए उपयोग में आती है और वहीं से कम दबाव पर उपभोक्ताओं में इसका वितरण किया जाता है ।

1. Longview 2. Centrifugal 3. Reciprocating 4. Compressors 5. Gas-holders

अध्याय ६

पेट्रोलियम से व्युत्पन्न ईंधन

पेट्रोलियम से उत्पादित पदार्थ

जिस तरह कोयला जलाया जाता है, उसी तरह पेट्रोलियम इसी रूप में नही जलाया जाता, बल्कि इसे सदैव कुछ विभिन्न पदार्थो में परिवर्तित किया जाता है जिनमें से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण पैट्रोल या गैसोलीन है। उद्योग-धधों में इसको यही नाम दिये गये हैं और इसकी अत्यधिक मॉग रहती है। साधारणतः पेट्रोलियम का परिष्करण[1] करनेवालों का ध्येय यह रहता है कि जिस पदार्थ की माँग अत्यधिक होती है उसी में पेट्रोलियम को, जितनी अधिक से अधिक मात्रा सम्भव हो सके, परिवर्तित किया जाय और वास्तव में आधे से अधिक अशोधित[2] तैल पेट्रोल में परिवर्तित किया जाता है।

सदा ऐसा ही नहीं था। पेट्रोलियम का उद्योग १८५० ई० के पश्चात् आरम्भ हुआ और १९०० ई० के निकट के वर्षो तक जिस पदार्थ की सर्वप्रथम मॉग होती थी वह दीपों में जलाने के लिए मिट्टी का तेल (पैराफीन तैल) था और दूसरे नम्बर पर थे स्नेहन[3] तैल। उत्पादित गैसोलीन प्रायः एक व्यर्थ का पदार्थ था, किन्तु मोटरकार के आगमन से इसका महत्त्व वढने लगा और १९१४ ई० के पश्चात् भंजन[4]-प्रक्रम के द्वारा पेट्रोलियम के दूसरे अवयवों[5] का गैसोलीन में परिवर्तन सम्भव हुआ। १९३० ई० के लगभग से अधिक-संपीडन[6] कार-इजन और वायुयान के बढ़ते हुए उद्योग के लिए अधिक प्रति-स्फोट[7] गुणोंवाले श्रेष्ठतर गैसोलीन की माँग बढ़ी और उस समय से निम्न-अष्टीन्य-अक[8] *के गैसोलीन को मोटर-गाड़ियो और वायुयान इंजन के लिए

1 Refine 2 Crude 3 Lubricating 4 Cracking 5 Fractions
6 High-compression 7 Anti-knock 8 Low-octane-number

* प्रति-स्फोट गुणों का सूचक

अत्यधिक अनुकूल अष्टीन्य अंकोंवाले गैसोलीन में परिवर्तित करने के लिए नये प्रक्रमों का विकास आरम्भ हुआ।

प्राकृतिक गैस और पैट्रोलियम से परिष्कृत सभी पदार्थ इंधन नहीं होते। संक्षेप में उनका विवरण इस प्रकार है --

I. इंधन

(१) प्राकृतिक गैस और परिष्करणी[1] गैस

(२) गैसोलीन

(३) मिट्टी का तैल (पैराफीन तैल)

(४) आसुत[2], डीजेल इंधन और गैस-तैल[3]

(५) इंधन-तैल[4]

(६) पैट्रोलियम कोक[5]

II. विलायक[6]

III. स्नेहक तैल

IV. पैराफीन मोम

V. बिटुमिन[7]

VI. रस-द्रव्य[8]

VII. गंधक

इन वर्गों में से हमारा सम्बन्ध केवल पहिले वर्ग (ईंधन) से है।

प्राकृतिक गैस

जैसा कि पहिले के अध्याय में वर्णन किया जा चुका है, तैल-कूपों[9] से गैस वड़ी मात्रा में निकलती है और द्रव पेट्रोलियम से इसे पृथक् करना पड़ता है। यह गैस हाइड्रोकार्बनों का एक मिश्रण होती है। सबसे हलकी स्थायी[10] गैसे होती हैं, मुख्यतः मीथेन और इथेन; इनसे कुछ अधिक भारी प्रोपेन और ब्युटेन होती है जो दाव के प्रभाव से द्रव में संघनित की जा सकती है और "बोतल की गैस"[11] के रूप में बेची जा सकती है; इनसे भी भारी पैन्टेन, हैक्सेन इत्यादि होती है जो यदि संघनित की जायें,

1 Refinery 2 Distillates 3 Gas-oil 4 Fuel-oil 5 Petroleum coke
6 Solvents 7 Bitumen 8 Chemicals 9 Oil-wells 10 Permanent
11 "Bottled gas"

तो गैसोलीन में मिलायी जा सकती है। प्राकृतिक गैस को "शुष्क गैस"[1] में, जो बेची जा सकती है, और प्राकृतिक गैसोलीन में, जो उपचार[2] के पश्चात् साधारण गैसोलीन में मिलायी जा सकती है, पृथक् करना सामान्य विधि है। वास्तव में परिष्करणियो मे इन गैसो के बडे संकीर्ण[3] विश्लेषण किये जा सकते हैं। किन्तु एक विशिष्ट या प्ररूप[4] प्रक्रम में गैस को तैल के निकट सम्पर्क में लाया जाता है जिसमें अधिक भारी हाइड्रो-कार्बन घुल जाते है। अवशेष गैस अब शुष्क होती है और निम्न-वर्णित उद्देश्यो के लिए उपयोग मे लायी जा सकती है, जब कि भारी हाइड्रोकार्बनो को तैल से भाप द्वारा आसवन[5] करके पृथक् किया जाता है और गैसोलीन में मिश्रित किये जाने के अनुकूल बनाने के लिए उनका उपचार किया जाता है।

जिस देश में प्राकृतिक गैस पायी जाती है यह उसकी एक उत्तम वसीयत है। कोयला–गैस[6] की अपेक्षा इसमें दुगुना उष्मीय-मान होता है और पिछले वर्षो तक यह निरुपयोगी वस्तु समझी जाती थी। जिन नगरों में इसकी आवश्यकता हो वहाँ तैल-क्षेत्रो से किस प्रकार इसका वितरण किया जाय, केवल यही एक समस्या थी। अमेरिका में जहाँ औद्योगिक प्रदेश तैल-क्षेत्रो से बहुत दूरी पर है, इस समस्या को हल करने में पूजी का कोई कम व्यय नही हुआ, किन्तु परिणामस्वरूप वहाँ अत्यन्त सस्ता इंधन मिलता है। १९५० ई० में अमेरिका मे ६० खरब घन फुट यह गैस १६० करोड़ डालरों में बेची गयी। इसका अर्थ यह होता है कि गैस को बड़ी मात्रा में बेचने का मूल्य लगभग एक फार्दिग प्रति थर्म के तुल्य होता है; इंग्लैण्ड में नगर-गैस[7] के फुटकर मूल्य के रूप में लिये गये १ शिलिंग ६ पेंस से इसकी बहुत ठीक-ठीक तुलना नहीं की जा सकती; फिर भी अमेरिका मे शक्ति का आश्चर्यजनक कम मूल्य सूचित करने में इससे सहायता मिलती है।

सपूर्ण प्राकृतिक गैस का उपयोग इंधन के रूप में नहीं होता, क्योकि इसका एक बड़ा भाग कार्बन-ब्लैक बनाने में लगता है जिसकी अत्यधिक मॉग इस तथ्य से समझ में आ सकती है कि हर मोटर टायर मे चार या अधिक पौड ऐसी गैस होती है।

आसवन द्वारा पेट्रोलियम का परिष्करण

पैट्रोलियम हाइड्रो-कार्बनों और दूसरे पदार्थो का एक मिश्रण है जिनमें से कुछ वायुमंडलीय ताप से कम ताप पर उबलते हैं, अधिकतर ५०° और ३००° से० के

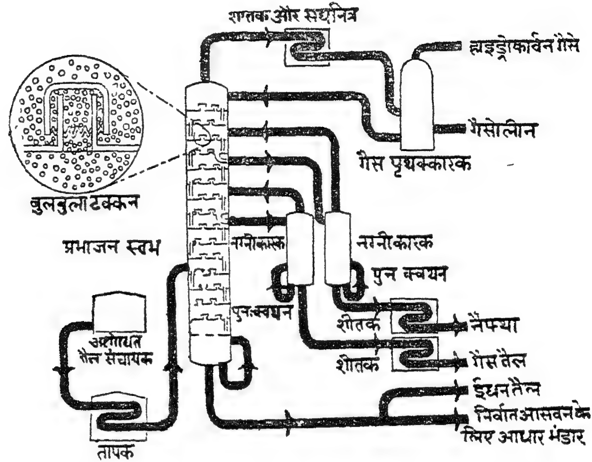
1. "Dry gas" 2. Treatment 3. Complex 4. Typical 5. Distillation
6. Coal gas 7. Town-gas

बीच, जब कि कुछ बिलकुल ही नहीं उबलते बल्कि डामर[1] या कोक में उनका विच्छेदन हो जाता है। इस प्रकार प्रथम क्रिया पेट्रोलियम का आसवन करना और इसे बहुत से भिन्न-भिन्न अंशों में पृथक् करना है जो स्वयं संकीर्ण मिश्रण होते हैं। अशोधित तैलों के गुण बहुत भिन्न-भिन्न होते है। अतएव उनके साथ भिन्न-भिन्न व्यवहार की आवश्यकता होती है, किन्तु परिष्करण की सरलतम विधि तैल को दाब से भ्राष्ट्र[2] में रखी हुई नलियो मे से निकलने को विवश करना है और इस प्रकार इसे ऐसे ताप तक पहुँचाना है जो कि वायुमंडलीय दाब पर इसके क्वथनांक[3] से बहुत अधिक होता है; तब इसको एक ऊँचे स्तम्भ के मध्य में मुक्त करते है जो बुलबुला-ढक्कन[4] लगे थालों[5] से भरा रहता है। (चित्र २१) कभी-कभी स्तम्भ के आधार से भाप का प्रवेश कराया जाता है। तैल का न्यूनतम वाष्पशील अंश स्तम्भ की तली की ओर प्रवाहित होता है और अत्यधिक वाष्पशील अंश वाष्प के रूप में स्तम्भ की चोटी की ओर उठता है। इस प्रकार अशोधित गैसोलीन की भाप चोटी से पृथक् की जा सकती है; अशोधित मिट्टी के तैल की भाप मध्य भाग से, जब कि न्यूनतम वाष्पशील अंश, "अवकृत-अशोधित-तैल"[6], स्तम्भ की पेंदी की ओर बहता है। यदि गैस-तैल या डीजेल-तैल की आवश्यकता होती है तो इसे मिट्टी के तैल के तल और स्तम्भ के आधार के बीच से ले लेते हैं। कुछ आसुतो को दुबारा उबालकर और वाष्प को स्तम्भ को लौटाकर इस पृथक्करण को अधिक पूर्ण किया जाता है।

कष्टकर गंधक-यौगिकों को हटाने के लिए अशोधित गैसोलीन और मिट्टी के तैल को सम्भवतः "मीठा"[7] करने की आवश्यकता होगी; सामान्यतः एक विलयन[8] द्वारा जिसमे क्षारक[9] सोडा और दूसरे पदार्थ होते है जो कि क्रिया को उत्प्रेरित[10] करते है, धोने से यह किया जाता है, किन्तु उत्पादित पदार्थ को वाष्पित करके और इसे किसी उत्प्रेरक[11] के ऊपर से प्रवाहित करने से भी यह किया जा सकता है। तब गंधक यौगिक हाइड्रोजन सल्फाइड में परिवर्तित हो जाते है जो सरलता से पृथक् की जा सकती है, जैसा कि पहिले ही बताया जा चुका है, और मुक्त गंधक मे परिवर्तित की जाती है।

1. Pitch 2. Furnace 3. Boiling point 4. Bubble caps 5. Tray
6. Reduced crude oil 7. Sweetening 8. Solution 9. Caustic 10. Promote
11. Catalyst

इस प्रकार बनाये हुए गैसोलीन को ऋजु-वहन[2] गैसोलीन कहते है और इसे प्राकृतिक गस से पृथक् किये हुए "प्राकृतिक गैसोलीन" के साथ मिश्रित किया जा सकता



चित्र २१. तैल परिष्करणी के आसव-यंत्र[1] का रेखा-चित्र

(शैल-पैट्रोलियम कम्पनी की कृपा से)

है। इसकी विशेषताओ में बहुत अन्तर हो सकता है; यह उपयोग करने के लिए तैयार हो सकता है या इसके अष्टीन्य-अंक में सुधार करने के लिए किसी और उपचार की आवश्यकता हो सकती है।

यदि यह एक अनुकूल श्रेणी का हो, तो उत्पादित "अवकृत अशोधित तैल" की ईंधन के रूप मे मॉग हो सकती है। कोयले के उष्मीय-मान[3] की अपेक्षा इसका उष्मीय-मान लगभग ५० प्रतिशत अधिक होता है। इसको संग्रह करना और इसका परिवहन अधिक सरल है। इसके अतिरिक्त इसमे झोंकने या राख हटाने की कोई समस्या नही होती। जलपोतो में और डीजेल-वैद्युत इंजनों में जिन्होंने अमेरिका में कोयला जलानेवाले रेल के भाप-इंजनो का उपयोग प्रायः समाप्त कर दिया है, शक्ति के साधन के रूप में इसका बहुत उपयोग होता है। फिर भी ईंधन का प्रदाय, मॉग

1 Still 2 Straight-run 3 Heating value

से अधिक होता है और यह एक लाभदायक प्रस्ताव है कि इसे भंजन कहे जानेवाले प्रक्रमों द्वारा गैसोलीन में परिवर्तित किया जाय।

उष्मीय भंजन

सिद्धान्ततः सबसे सरल उष्मीय भंजन ही है। भ्राष्ट्र में से निकलनेवाली नलियों में से प्रवाहित कर अशोधित तैल के ताप को ७००–९००° फा० के बीच किसी ताप अर्थात् एक तीव्र-रक्त-ताप,[1] तक ले जाया जाता है; इसे शीघ्रता से ठंडा किया जाता है और उसी प्रकार इसका आसवन किया जाता है जिस प्रकार अशोधित पैट्रोलियम का। इस प्रकार अवक्रत अशोधित तैल का ४५ प्रतिशत तक गैसोलीन में परिवर्तित हो जाता है और कुछ "भंजित इंधन-तैल"[2] के रूप में अवशेष रह जाता है जिसे औद्योगिक संयंत्रों मे जलाया जाता है।

उत्प्रेरक भंजन

युद्धकाल मे और उसके बाद पेट्रोलियम से उत्पादित पदार्थों का रूपान्तर या भंजन करने के लिए उत्प्रेरकों का उपयोग करनेवाले कई प्रकार के प्रक्रमो को उपयोग में लाया गया है। उन सबका वर्णन करना इस पुस्तक के लक्ष्य से बहुत दूर का विषय है, विशेषकर इसलिए कि यह सबसे अधिक सक्रिय और प्रगतिशील उद्योगो मे से एक है जिनमें नये प्रक्रम निरंतर उन प्रक्रमों का स्थान ले रहे है जो अब तक उपयोग में लाये जाते रहे है।

यहाँ इतना कहना पर्याप्त होना चाहिए कि यदि एक भारी तैल, मान लीजिए गस-तैल, की भाप सिलिका और एलुमीनिया के संयोग से बने तप्त कणो के ऊपर से प्रवाहित होती है, तो इसका ४० से ५० प्रतिशत तक अश पर्याप्त उच्च अष्टीन्य अक के मोटर-स्पिरिट मे रूपान्तरित हो जाता हैं। साथ-ही-साथ वहुत मात्रा में ऐसी गैस उत्पन्न होती है जिसमें मुख्यतः तैलकारि[3] होते है जो कि रासायनिक उद्योगो के लिए अत्यन्त मूल्यवान् कच्चे पदार्थ होते है। इसके इथाइलीन को ग्लाइकोल (प्रति-हिमीकरण)[4] या एल्कोहल मे परिवर्तित किया जा सकता है जिसका अधिकांश अमेरिका मे किण्वन[5] की अपेक्षा परिष्करणी गैस से वनाया जाता है। प्रोपिलीन से ऐसीटोन बना सकते है; व्युटिलीन से ब्युटाडीन और उससे सश्लेषित[6] रवर बनाया जा सकता है। या

1 Bright red-heat 2 Cracked fuel-oil 3 Olefines 4 Anti-freeze
5 Fermentation 6 Synthetic

फिर प्रोपिलीन और ब्युटिलीन को फिर उच्च-श्रेणी[1] के गैसोलीन में पुरुभाजित[2] कर सकते है।

यह प्रक्रम या प्रक्रिया (प्रोसेस) कई प्रकार से की जाती है; अत्यधिक रोचक तरल उत्प्रेरित विधि है। तप्त तैल-वाष्प एक विशाल स्तम्भ में शीघ्रता से ऊपर को प्रवाहित होता है जिसमे उत्प्रेरक के कणो की एक राशि भरी रहती है; वाष्प की अधिकता इन्हे तरल-घटा के रूप में अवलम्बित रखती है; ज्यो-ज्यो प्रतिक्रिया की प्रगति होती है, कणो पर पेट्रोलियम कोक का आवरण[3] चढ़ता जाता है और इसलिए व्यवस्था की जाती है कि उनका एक भाग निरन्तर हटाया जा सके और कार्बन को जलाकर उन्हें लौटाया जा सके। बड़े भारी संयत्र को (जो प्लेट नंबर ९ के पिछले भाग मे दिखाई देता है तथा) जो कदाचित् भूमि के आधे एकड़ को ढक लेगा और इससे २०० फुट ऊँचाई तक उठ सकता है, एक केन्द्रीय नियंत्रण कक्ष से केवल दो मनुष्य चलाते है; वहन, ताप इत्यादि का पूर्ण न्यास[4] अंकनीय[5] (डायल) पर दिखाया जाता है और परिस्थितियाँ स्वतः अनुकूलतम[6] के अनुरूप हो जाती हैं।

दूसरे प्रक्रमो की प्ररचना मुख्यतः गैसोलीन की श्रेणी या किस्म में सुधार करने के लिए की जाती है। इजन मे, गैसोलीन के स्फोटन की प्रवृत्ति इसके अणुओं के आकार और रूप पर निर्भर करती है; साधारणतः छोटे सघन अणुओं से लम्बी-शृखला[7] के अणुओ की अपेक्षा अच्छा फल मिलता है। आज पसंद किया जानेवाला एक प्रक्रम वह है जिसे 'प्लेट रचना'[8] (प्लेटीनम की पुनर्रचना) कहते हैं जिसमें हलके तैलों या गैसोलीन के वाष्प को एक प्लेटीनम उत्प्रेरक के ऊपर से प्रवाहित करते है जिसके प्रवाह से अणु इस प्रकार रूपान्तरित होते है कि तैल उच्च अष्टीन्य इंधन में परिवर्तित हो जाता है।

पेट्रोलियम उद्योग की वर्तमान प्रवृत्ति

आजकल पेट्रोलियम उद्योग प्रयत्नशील है कि मोटरगाड़ियों और वायुयानों के अन्तर्दहन[9] इंजनों के लिए अपेक्षया उच्च-श्रेणी के मँहगे इंधन का उत्पादन किया जाये। आवश्यक इंधन की विशेषता (क्वालिटी) में किसी परिवर्तन से, जैसा कि बेलन-इजनो[10] के स्थान पर वरीवर्त[11] और प्रधार-इंजनो[12] का साधारण प्रतिस्थापन

1. Highgrade 2. Polymerize 3. Coating 4. Data 5. Dial 6. Optimum 7. Long-Chain 8. 'Platfor ming' 9. Internal-Combustion 10. Cylinder-engines 11. Turbine 12. Jet-Engines

करने से आवश्यक होगा, कदाचित् गैसोलीन की अपेक्षा मिट्टी के तैल के प्रकार के अधिक भारी तैलो की माँग अधिक हो जायेगी । परिष्करणी प्रविधि[1] इतनी अस्थिर और संयोजनीय है कि गवेषणा और परीक्षा के कुछ काल के पश्चात् अशोधित तैल और इसके आसुतो के भंजन या पुरुभाजन द्वारा प्रायः किसी भी प्रकार के तैल का उत्पादन करना सभव हो जायेगा, चाहे वह हलका हो या भारी, उच्च अष्टीन्य अक का हो या निम्न का ।

जबकि तैल-उद्योग की प्रथम आवश्यकता गैसोलीन है, जिन प्रदेशो मे प्राकृतिक गैस प्राप्य होती है उनके इंधन प्रदाय को इससे बड़ा भारी अंशदान मिलता है और अवकृत अशोधित अंशो और अधिक भारी आसुतो से भ्राष्ट्र जलाने या जलपोतो के डीजेल या अर्द्ध-डीजेल इंजनो को चलाने का कार्य लिया जाता है । फिर भी यह स्मरणीय है कि वर्तमान समय में पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस से विश्व का आधे से कम इंधन मिलता है और उष्मा और शक्ति की अत्यधिक माँगो की पूर्ति अब भी कोयले से ही होती है ।

1. Refinery technique

अध्याय ७

जल-शक्ति

साधारण सिद्धान्त

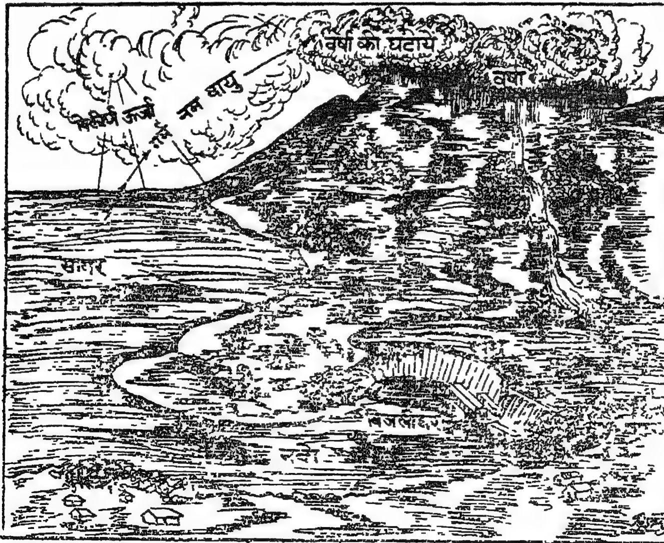
सूर्य और पृथ्वी एक विशाल पम्प की भाँति कार्य करते हैं जो गुरुत्वाकर्षण[1] के विरुद्ध समुद्र से उपरि-वायु[2] को जल का निरन्तर स्थानान्तरण करते हैं और इस प्रकार इसकी स्थितिज-ऊर्जा[3] में वृद्धि करते हैं। वहाँ से वर्षा के रूप में यह जल पहाडियों पर गिरता है और मुख्यतः नदियों द्वारा नीचे उतरकर एक बार फिर समुद्र में पहुँच जाता है। इस प्रक्रम में, सूर्य से जो ऊर्जा जल को मिलती है वह फिर मुक्त हो जाती है। स्थितिज-ऊर्जा, गतिज-ऊर्जा[4] में परिवर्तित होती है। सामान्यतः यह निम्न-कोटि की उष्मा के रूप में प्रक्षुब्ध[5] जल के आन्तरिक घर्षण[6] द्वारा नष्ट हो जाती है; किन्तु मनुष्य एक चक्की या वरीवर्त के घूर्णक[7] को बहते हुए जल की गतिज-ऊर्जा का स्थानान्तरण करा सकता है।

हर प्रकार के बहते हुए जल से ऊर्जा की उपयोगी मात्रा प्राप्त नही की जा सकती और वास्तव में वर्षा की विशाल ऊर्जा के एक अल्प अंश का ही उपयोग किया जा सकता है। सर्वप्रथम, बादलों से भूमि तक वर्षा के गिरने की ऊर्जा व्यर्थ जाती है। द्वितीय, पूर्ण वर्षा का केवल एक छोटा अंश ही किसी उत्पादन-केन्द्र के वरीवर्तों में से प्रवाहित होता है और पहाड़ियों से समुद्र में जानेवाले जल की पूर्ण मात्रा में से केवल थोड़ा भाग ही उपयोग में आता है। अतः जिन महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के बारे में सर्वप्रथम विचार करना है वे वह परिस्थितियाँ हैं जिनमें पहाड़ों से समुद्र की ओर बहनेवाले जल से ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है।

गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव से पानी के किसी भार को ऊँचाई से नीचे उतरने में ऊर्जा मिलती है, और इस ऊर्जा की मात्रा पानी के भार और उस ऊँचाई पर निर्भर करती है

1. Gravity 2. Upper air 3. Potential energy 4. Kinetic energy
5. Turbulent 6. Friction 7. Rotor

जिससे वह नीचे आता है। इस प्रकार ऊर्जा की एक निश्चित मात्रा पानी की थोड़ी मात्रा के बहुत ऊँचाई से गिरने से मिल सकती है या पानी की एक बहुत बड़ी मात्रा के थोड़ी ऊँचाई से गिरने से। पानी से इस ऊर्जा को हम किस प्रकार नियत्रण में ला सकते है ? जल में गति गुरुत्वाकर्पण से उत्पन्न होती है और इसकी गति की ऊर्जा एक चक्की के पहिये या टरबाइन (वरीवर्त) के घूर्णक को स्थानान्तरित की जाती है। पानी जितनी कम ऊँचाई से गिरता है, ऊर्जा की आवश्यक मात्रा देने के लिए इसकी उतनी ही अधिक मात्रा को वरीवर्त मे से प्रवाहित करना पडता है और उसी के अनुरूप वरीवर्त का आकार बढ़ाना पड़ता है। तो व्यावहारिक रूप से यह परिणाम निकलता है कि कम ऊँचाई के जलोद्‌गम, कहिए ८–२५ फुट तक, साधारणत. शक्ति की केवल अल्प मात्रा, कदाचित् २०० या ३०० अश्व-शक्ति तक, के उत्पादन के लिए उपयोगी होते है और हजार या दस हजार अश्व-शक्ति के उत्पादन करनेवाले संयंत्रों को बड़े जलो-द्‌गमों की, ५० से ५००० फुट या इससे भी अधिक की, आवश्यकता होती है। ऐसे बहुत स्थान नही है जहाँ जल ५० फुट की ऊँचाई से गिराया जा सकता है और उनमें से कुछ बहुत दूरस्थ है।



चित्र २२. जल-शक्ति के स्रोत के रूप में सूर्य

प्राचीन काल में जल-चक्कियों[1] का मशीनों से सीधा सयोग किया जाता था; किन्तु आज जल-शक्ति का उपयोग करने की मुख्य विधि केवल यह है कि बहते हुए जल से एक वरीवर्त (टरबाइन) द्वारा ऊर्जा का निष्कर्षण किया जाय और वरीवर्त का उपयोग एक वैद्युत-जनित्र[2] को चलाने के लिए किया जाये। इस प्रकार उत्पादित विद्युत् उसी स्थान पर उपयोग मे लायी जा सकती है या दूरस्थ स्थानों को इसका संचरण[3] या ग्रिड में इसका प्रदाय किया जा सकता है; किन्तु यह नही भूलना चाहिए कि विद्युत् के संचरण मे ऊर्जा की हानि होती है और जितनी अधिक दूरी पर उसे ले जाया जाता है उतनी ही अधिक यह हानि भी होती है। इसलिए कुछ सौ मीलो से अधिक दूरी के लिए विद्युत् के संचरण का विचार करना व्यावहारिक नही है और वास्तव में उद्योगों की प्रवृत्ति जल-विद्युत् उत्पादक केन्द्रों के निकट स्थापित होने की होती है। शर्त यही है कि यथोचित श्रम और परिवहन-सुविधा निश्चित रूप से मिल सके।

जल-विद्युत्[4] योजनाएँ

जलप्रपात से विद्युत् की बडी मात्रा का उत्पादन करने के लिए बनी शालाएँ देश के लम्बे-चौड़े क्षेत्र पर फैली रह सकती है। साधारणतः उनमे प्ररचनाओं की एक शृङ्खला-सी रहती है जो जल को एकत्र और सचित करती है। यह एक प्राकृतिक नदी या झील हो सकती है या कृत्रिम ढंग से आपस मे जुडी हुई झीलों और नदियों की एक शृङ्खला। अधिकतर इस श्रृङ्खला का अन्त एक कृत्रिम बाँध मे होता है। वहाँ से जल एक प्रकार की प्रणाली में[5] (नहर या सुरग में) दाब[6] नल-पातो[7] की चोटी तक ले जाया जाता है जो इसे वरीवर्तो तक ले जाती है, यद्यपि जहाँ जलोद्गम नीचा होता है वहाँ इनके बिना कार्य किया जा सकता है। अन्त में जल उन वरीवर्तो में से प्रवाहित होता है, जिनके द्वारा जनित्रों को चलाया जाता है और एक प्रणाली में बहा दिया जाता है जो इसे एक प्राकृतिक जलमार्ग में लौटा देती है। यह स्वाभाविक है कि ऐसी योजना के अनन्त रूप होंगे जो कि उस भूमि के अगणित प्रकारों के अनुकूल होंगे जहाँ जलप्रपात पाये जाते हैं; इसी तरह भिन्न-भिन्न योजनाओं में अनावृष्टि, बाढ़, हिम और बहनेवाली लकडी इत्यादि की बहुत-सी भिन्न-भिन्न कठिनाइयों के बारे में भी विचार करना पड़ता है।

1. Water-mills 2. Electric generator 3. Transmission 4. Hydro-electric
5. Channel 6. Pressure 7. Pipe-lines

बाँध

जहाँ जलप्राप्ति का स्रोत बड़ी और कभी न सूखनेवाली नदी होती है, जैसा कि नियागरा में, वहाँ इसकी चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं कि जल-प्रदाय रुक जायगा सिवाय कदाचित् बरफ के कारण, किन्तु अधिकतर प्रदेशों में जल की प्राप्य मात्रा का अध्ययन करना परमावश्यक है।

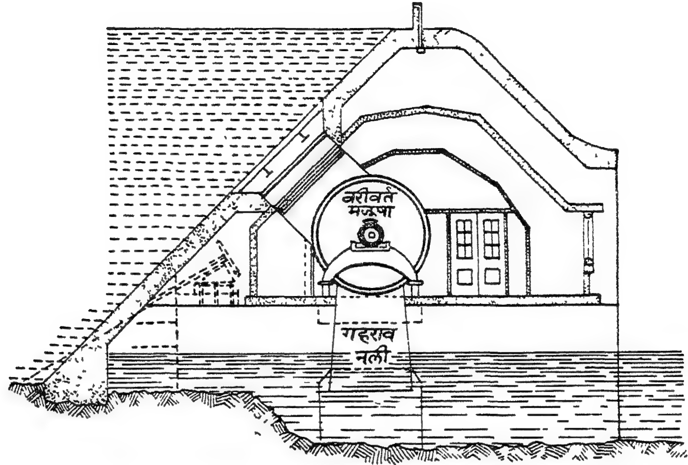
किसी भी जल-विद्युत् योजना के सम्बन्ध में सबसे पहले प्राप्य जल का अनुमान कर लिया जाना चाहिए। उस प्रदेश के आपरीक्षण[1] और वर्षा की माप तथा इनके उस अनुपात की माप से, जो भूमि पर से बह जाता है, इंजीनियर यह अनुमान लगा सकेगा कि कितना जल एकत्र किया जा सकता है। इसका अर्थ यह नही है कि वह जिस बाँध का निर्माण करता है उसके लिए जल की इतनी मात्रा के संग्रह करने की आवश्यकता होगी, किन्तु कम से कम इससे उसे उत्पादन हो सकनेवाली शक्ति का अनुमान लगाने का साधन मिल जा सकता है।

अधिकतर जल-विद्युत्-योजनाओं के लिए जल का संग्रह करना आवश्यक होता है। संग्रह करने का प्राकृतिक साधन झीलें है और कृत्रिम साधन बाँध, जो जल के तल को ऊँचा करके इसके उद्गम में भी वृद्धि करते है। यह बहुत महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि, उदाहरणार्थ, जल की एक निश्चित मात्रा यदि २०० फुट की ऊँचाई से गिरे तो उस कार्य की अपेक्षा इसके द्वारा चार गुना कार्य होगा जो वही मात्रा ५० फुट की ऊँचाई से गिरने पर कर सकती है। इस प्रकार बाढ-जल का संग्रह करके, जो व्यर्थ ही बह जाता है, बाँध न केवल प्राप्य जल की मात्रा बढ़ाता है बल्कि उसी जल को बहुत अधिक शक्ति का साधन भी बना देता है।

बड़े तथा ऊँचे बाँध ईट, पत्थर से बनाये जाते है या बहुधा लोह-कंक्रीट[2] से। उनका निर्माण बहुत महत्त्व का होता है और उन पर बहुत व्यय आता है, अतः पूर्ण जाँच के पश्चात् ही उनका आरम्भ किया जाता है। उनके आधार का बहुत दृढ होना आवश्यक होता है और यदि उनके नीचे की चट्टान दोषयुक्त होती है तो उसका उत्खनन[3] किया जाता है या कंक्रीट से उसकी भराई[4] की जाती है। प्रतिरूपों[5] द्वारा बाँध के रूप की जाँच की जाती है और विकृति[6] गूढ गणित व्यवहार का विषय होती है। फल यह होता है कि उन पर बहुत अधिक दबाव पडने पर भी कदाचित्

1. Survey 2 Ferro-Concrete 3. Excavation 4 Grouted 5. Models
6. Strain

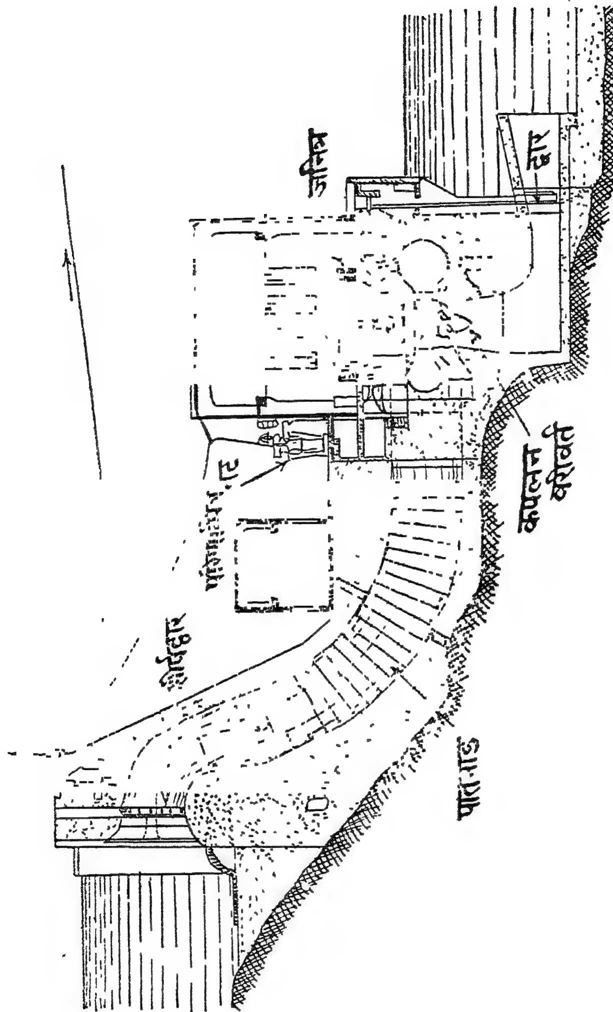
ही बाँध असफल होते है । बाँधो में जल के छलकने का मार्ग या जलद्वार होना चाहिए जिससे पानी की अनावश्यक मात्रा बाहर निकाली जा सके ।



चित्र २३. खोखले बाँध के भीतर वरीवर्त्त और बिजली-घर

ऊँचे तल पर जल के संग्रह को चाहे वह नदी में हो या झील या बाँध में, वरीवर्तो तक ले जाना होता है। कभी-कभी बाँध खोखला होता है और उसके भीतर ही वरीवर्तो को स्थान दिया जाता है; किन्तु अधिकतर तो वे बिजलीघर[1] में ही रखे जाते हैं। जिस पद्धति से जल को ले जाया जाता है उसमें सामान्यत: एक नहर, पानी को ले जानेवाला एक कृत्रिम नाला या सुरंग होती है जिससे पानी एक पतनाड[2] या नलपाँतों में पहुँचता है—जिनके द्वारा जल शक्ति-केन्द्र तक ले जाया जाता है। इस नलपाँत को नीचे वरीवर्तो तक ढलुआ पहुँचना चाहिए और उनका आकार पर्याप्त होना चाहिए जिससे इसमें जल को तीव्र गति से न बहना पड़े और इस प्रकार उसमें प्रक्षुब्धता[3] और उसके फलस्वरूप घर्षण द्वारा शक्ति की हानि न हो। निचले छोर पर दाब काफी होगा और इसी के अनुरूप नलों का सुदृढ़ होना आवश्यक है। चित्र २४ में एक विशिष्ट जलविद्युत्-संयंत्र का अभिन्यास[4] दिखाया गया है।

1. Power-house 2. Penstock 3. Turbulence 4. Lay-out



चित्र २४, एक विशिष्ट जल-विद्युत् संस्थान

वरीवर्त और जनित्र

नल-पाँत के निचले भाग में जल पर अधिक दाव रहता है जिसके कारण इसमें शक्ति संगृहीत रहती है। वरीवर्त का उद्देश्य जल से इसकी शक्ति को लेना होता है

जिसे पूर्णत. इसके घूर्णक की गतिज-ऊर्जा मे रूपान्तरित करना पडता है। यह पूर्णरूप से नही किया जा सकता; किन्तु अनुकूल परिस्थितियों में इस ऊर्जा के ९० प्रतिशत का स्थानान्तरण हो सकता है।

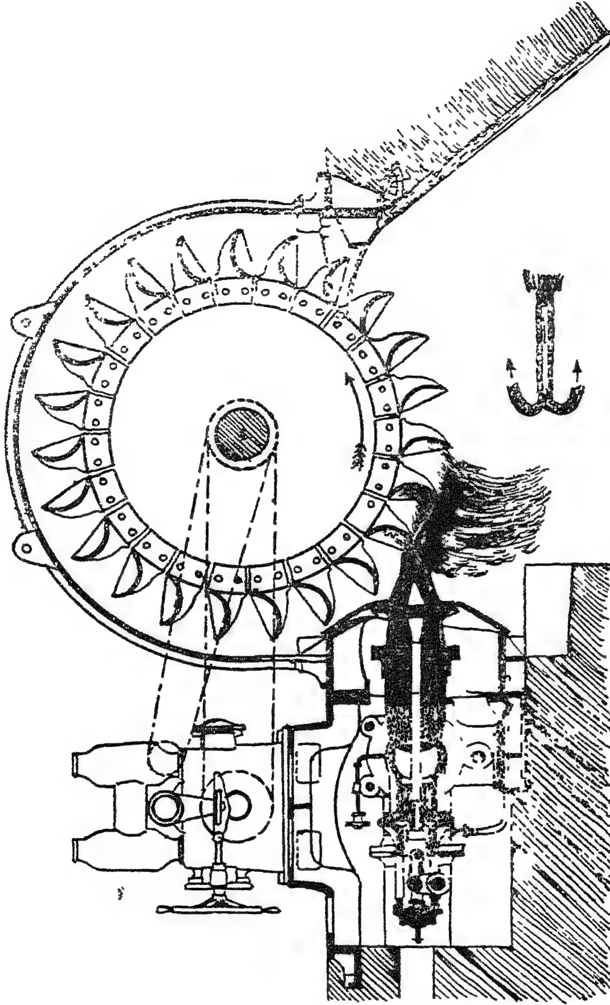
वरीवर्तो के दो मुख्य भेद है—आवेग[1] वरीवर्त और प्रतिक्रिया[2] वरीवर्त। साधारणत आवेग वरीवर्त बहुत ऊँचे जलोद्गमो (७०० फुट से अधिक) के लिए अत्यधिक अनुकूल होते है और कम ऊँचाई के जलोद्गमों, ७०० फुट से लेकर केवल थोड़े से फुट तक, के जल की बडी मात्राओ के लिए प्रतिक्रिया वरीवर्त उचित रहते है; इनके बीच वह क्षेत्र है जहाँ दोनो में से किसी का भी उपयोग किया जा सकता है।

आवेग वरीवर्त या पैल्टन का पहिया चित्र २५ मे दिखाया गया है। बहुत दाब के नीचे का जल एक प्रधार मे मुक्त किया जाता है जो कि एक बर्छी-वाल्व[3] से नियंत्रित होती है। इस प्रकार दाब के नीचे के जल की ऊर्जा जल के एक स्तम्भ की गतिज-ऊर्जा मे परिवर्तित हो जाती है जो कि ३०० फुट प्रति सेकेण्ड तक की गति से बहता है। यह प्रधार घूर्णक (रोटर) की एक बाल्टी से टकराती है; बाल्टियो की बनावट कुछ इस प्रकार की होती है कि जिस दिशा से जल आया था उसकी विपरीत दिशा मे ये उसे लौटा देती है। जब घूर्णक की गति प्रधार की गति से आधी होती है, बाल्टी को छोड़नेवाला जल, बाल्टी की अपेक्षा पीछे को बहता है और उसकी गति वही होती है जिससे बाल्टी पृथ्वी की अपेक्षा आगे को चलती है। इस प्रकार बाल्टी को छोडनेवाला जल पृथ्वी की अपेक्षा गतिहीन रहता है और अपनी पूर्ण ऊर्जा दे चुका होता है। इनमें से कोई भी कार्य पूर्णतः ठीक नही हो पाता और जल की प्रक्षुब्धता तथा दूसरे कारणों से सदैव ऊर्जा की कुछ हानि होती है। तथापि पैल्टन पहिया अधिक दाब के पानी से ९० प्रतिशत ऊर्जा का निष्कर्षण कर सकता है।

पैल्टन पहिया विशाल दाबवाले जल से कार्य कर सकता है; जैसे कि. स्विटजरलैण्ड मे सियोन[4] संयत्र में जल ५,७५० फुट के उद्गम से लिया जाता है। नीचे उद्गमो पर, ५०० फुट से कम, पैल्टन पहिये की कार्यक्षमता कम हो जाती है और प्रतिक्रिया वरीवर्तो को अधिक पसंद किया जाता है (चित्र २६)। इनके दो आवश्यक अंग होते है, स्थिर मार्ग-फलक[5] जो जल का सचालन करते है, और एक गति-शील धावक[6] जिसमे धारे होती है जो जल के दाब से और कुछ हद तक पैल्टन पहिये की भाँति आवेग से भी, घूमती है। जल को केवल स्वयं बह जाने के लिए नही छोड़ा

1. Impulse 2. Reaction 3. Spear-Valve 4. Sion 5. Guide-Vanes 6. Runner

जाता वल्कि सामान्यत एक वंद नल मे से इमे एक निचले तल पर लाया जाता है। इससे नीचे एक ऋण[1] दाव मिलता है जो ऊपर धन[2] दाव को सहायता देता है।



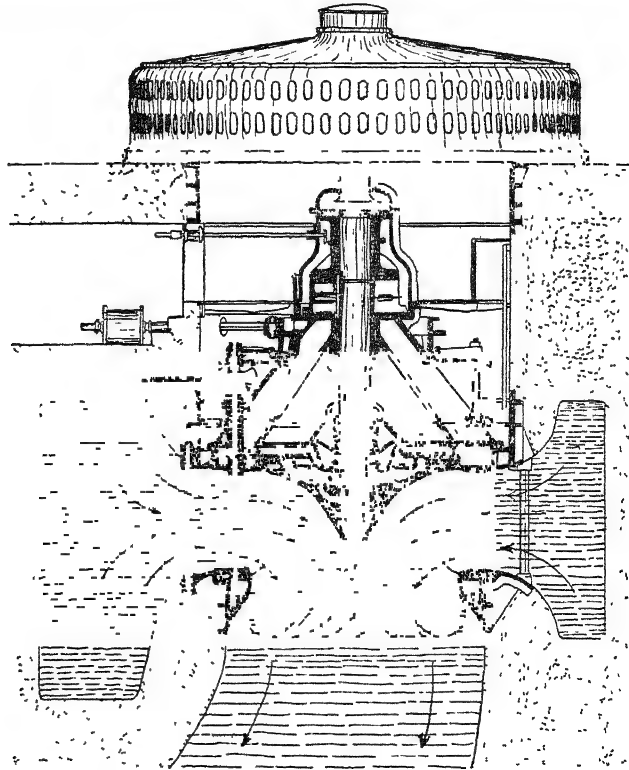
चित्र २५—पेल्टन पहिया; बाल्टियों से टकराने पर जल का मार्ग

1. Negative 2. Positive

७० फुट से कम जलोद्गमों के लिए नोदन[1]-पहिया एक अनुकूल प्ररचना है। यह समझना सरल है कि जिस प्रकार जलपोत का नोदक पानी को चलाता है उसी प्रकार पानी भी एक नोदक को चला सकता है।

जनित्र

जनित्र को साधारणतः उसी ईषा[2] पर लगाया जाता है जिस पर वरीवर्त, और इसलिए यह ऊर्ध्वाधर[3] हो सकता है या अनुप्रस्थ[4]। इसको दी गयी ऊर्जा ९५-९७ प्रतिशत की कार्यक्षमता से विद्युत् में परिवर्तित होती है और इसका अवशेष उष्मा



चित्र २६—प्रतिक्रिया वरीवर्त और जनित्र

1. Propeller-wheel 2. Sbaft 3. Vertical 4. Horizontal

में रूपान्तरित हो जाता है। यदि एक जनित्र १०,००० किलोवाट का उत्पादन करता है तो इसका अर्थ यह है कि विद्युत् की ५०० इकाइयाँ (मात्रकें) प्रति घटा उष्मा में परिवर्तित होती है। उष्मा से पृथक्करण[1] नष्ट न हो जाये, इसलिए एकान्तरिको[2] के बीच से वायु प्रवेश करायी जाती है; कभी-कभी इस प्रकार पैदा होनेवाली उष्ण वायु से शक्तिकेन्द्र के गर्म करने का कार्य लिया जा सकता है। विद्युत् का उत्पादन सामान्यतः ११,००० वोल्ट पर होता है। यदि उद्योगों में इसका उपयोग किया जाना है तो वोल्टता[3] को अपयायी[4] करने के लिए परिणामित्र[5] की आवश्यकता होती है; यदि विद्युत् का दूरस्थ स्थानो मे सचरण होना है तो विद्युत्-धारा की हानि रोकने के लिए वोल्टता को ऊँचा[6] करना होता है।

जलशक्ति के संसाधन

यह स्पष्ट किया जा चुका है कि समुद्र मे जानेवाले जल का केवल थोड़ा अनुपात ही शक्ति-उत्पादन करने के लिए उपयोग में आ सकता है। यह भी निश्चित है कि उपयोग हो सकनेवाली जलशक्ति का केवल एक छोटा अंश ही उपयोग में लाया गया है। कुछ देश जैसे आयरलैंड और स्विटजरलैंड अपनी जल-शक्ति का बड़ा सुन्दर उपयोग करते है किन्तु अफ़रीका, लैटिन अमेरिका और एशिया के विशाल जल-शक्ति साधनों का केवल अल्पांश ही उपयोग मे लाया गया है। मध्य एशिया, तिब्बत, नैपाल इत्यादि के पर्वत जहाँ से संसार की बडी-बड़ी नदियो में से अधिकांश नदियाँ निकलती है, अभी तक अछूते ही हैं। जब इन साधनो का उपयोग किया जायेगा और पूर्व के रहने-वाले पूरी प्रौद्योगिक[7] क्षमता प्राप्त कर चुकेगे, जिसे ग्रहण करना उन्होने अभी प्रारम्भ ही किया है, तो औद्योगिक शक्ति का हम कदाचित एक बडा पुनर्व्यवस्थापन देखेगे।

इन अविकसित प्रदेशो से ही अधिक प्रगति के होने की संभावना है; क्योंकि औद्योगिक सभ्यता के प्रदेशो मे पहिले ही सर्वोत्तम जलशक्ति उपयोग में लायी जा रही है या शीघ्र ही लायी जायगी।

जलशक्ति का अर्थशास्त्र

जलशक्ति से विद्युत् उत्पादन करने का प्रत्यक्ष आकर्षण इसलिए होता है कि कोई ईधन मोल लेना नही पडता और न ही ईधन लाने या राख को ले जाने के लिए परिवहन-व्यवस्था करनी पड़ती है। जल अपने को स्वयं ही प्रदान कर देता है और लम्बी अनावृष्टि या प्रचंड शीत के सिवाय इस प्रदाय को कोई नही रोक सकता।

1. Insulation 2 Alternators 3. Voltage 4. Stepdown 5. Transformer
6. Step-up 7. Technological

इसके अतिरिक्त, इस पद्धति से कार्य करने का व्यय कम आता है। यत्रो के अगों के प्रतिस्थापन की बहुत कम आवश्यकता होती है तथा टूट-फूट से भी प्राय: कार्यरोध नही होता। बहुत कम कर्मचारियो की आवश्यकता होती है और वास्तव मे सभी कार्यकर्ताओ के स्थान पर स्वत. चलित नियत्रण से कार्य किया जा सकता है।

इस चित्र का दूसरा पक्ष उदलिक[1] प्रतिष्ठानो पर लगनेवाली पूजी का भारी व्यय है। फिर बाँधो का निर्माण करने, नहरे बनाने, सुरगो का छिद्रण करने और संयंत्र मोल लेने मे जो धन लगता है उस पर भारी वार्षिक ब्याज भी देना पडता है।

अत. यह सम्भव नही है कि कोयले से और जल से उत्पादित विद्युत् के व्यय की तुलना की जाये, क्योकि इनके व्यय में बहुत अधिक अन्तर है। साधारणत. इतना ही कहा जा सकता है कि किसी विस्तृत जल-विद्युत् योजना पर कार्य प्रारम्भ होगा या नही, यह इस पर निर्भर करता है कि क्या इस पर पूँजी का व्यय इतना कम होगा कि यह कोयले से चलनेवाले केन्द्रो से होड़ ले सकेगी। जहाँ कोयला महँगा होता है वहाँ इसके स्थान पर बहुमूल्य उदलिक उद्योग का निर्माण करना लाभदायक होगा; जहाँ कोयला सस्ता होता है वहाँ जलशक्ति के केवल अधिक सरलता से उपयोग किये जानेवाले उद्गमो का विकास कर ही लाभ उठाया जा सकता है।

जल-विद्युत् योजनाओ और कोयले से चलनेवाले शक्ति-केन्द्रो मे लाभदायक सहयोग हो सकता है। कोयले के शक्ति-केन्द्र स्थिर उत्पादन पर सर्वोत्तम कार्य करते है किन्तु विद्युत् की माँग नियमित रूप से प्रति दिन बढती चलती है।

जल-विद्युत् जनित्रो को सरलता से चलाया और बद किया जा सकता है, इसलिए जहाँ एक जनित्र चलाने के लिए पूरे दिन के लिए जल प्राप्य नही है, वहाँ भी अधिकतम माँग के समय कोयले से चलनेवाले केन्द्र की अनुपूर्ति के लिए जल-विद्युत्-जनित्र से लाभदायक कार्य लिया जा सकता है। इस प्रकार अधिकतर सम्य देशो मे जल-विद्युत् संयंत्र और कोयले से चलनेवाले शक्ति-केन्द्रो से विद्युत् एक ही ग्रिड-पद्धति में लायी जाती है जिससे परिणामत: किसी भी उपभोक्ता को प्रदाय की हुई विद्युत् दोनों साधनो से व्युत्पन्न होती है। इसलिए जब कि विद्युत् के उत्पादन के लिए कोयले और जल की आर्थिक दृष्टिकोण से तुलना करना कठिन है, यह कहा जा सकता है कि दोनो के लिए अत्यन्त अनुकूल परिस्थितियो के होते हुए जल-विद्युत् योजनाएँ कोयले की अपेक्षा कम व्यय पर विद्युत् का उत्पादन करती है।

1. Hydraulic

अध्याय ८

पवन, ज्वारभाटा, पृथ्वी और सूर्य की उष्मा

पवन-शक्ति

शक्ति के निर्जीव साधनों में पवन सबसे प्राचीन है, क्योंकि सभ्यता के प्रारम्भ से ही मनुष्य अपने पालयुक्त जलपोतो को चलाने मे इसका उपयोग करता रहा है। पवन-चक्की[1] का उद्‌भव अज्ञात है पर यह निश्चित है कि पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दियो मे यह शक्ति का सर्वप्रिय साधन बनी और भूमि की पुनः प्राप्ति करने मे पम्प द्वारा पानी निकालने के लिए डचों द्वारा इसका बहुत विकास हुआ। वस्तुतः १९३९-४५ ई० के युद्धकाल मे जब हालैंड पर जर्मनी ने अधिकार कर लिया था, ऐसे समय आये जब भाप-इंजनो या डीजेल-इंजनो के लिए जिनसे पम्प चलाये जाते थे, कोई ईंधन प्राप्य न था और उस समय केवल प्राचीन पवन-चक्कियों ने ही देश को बाढ़ से बचाया।

अनाज पीसने या पानी का पम्प चलाने के लिए जिन पवन-चक्कियो का उपयोग किया जाता है उनकी शक्ति अधिक नही होती। कदाचित १० या १२ अश्व-शक्ति तक मध्यमान[2] या औसत हो सकता है। उसी शक्ति को प्राप्त करने के लिए इंधन-चालित इंजनों की अपेक्षा ये वास्तव मे अधिक बड़े आकारवाली होती है और इनके बनाने पर अधिक व्यय भी आता है। किन्तु आधुनिक इजीनियरिग के ससाधन चक्की-रचयिता के संसाधनो से बहुत भिन्न हैं और यह अनुभव किया जा रहा है कि विद्युत्-शक्ति का उत्पादन करने के लिए बड़ी पवन-चक्कियों का बनाना सभव और आर्थिक दृष्टिकोण से शीघ्र ही व्यावहारिक होनेवाला है।

पवन-शक्ति का स्रोत सूर्य है जो घूर्णन करती हुई पृथ्वी के वायुमंडल पर चमकता है। अतः यह जल-शक्ति के सदृश अनन्त है किन्तु जलशक्ति के सदृश ही इसका

1. Wind-mill 2. Average figure

मितव्ययक उपयोग करने के लिए कुछ विशेष परिस्थितियों का होना आवश्यक है। मुख्यतः भूखंडों से प्रभावित होकर वायु एक बडे सकीर्ण ढंग से चक्रण करती है। उपयोगी होने के लिए पर्याप्त शक्ति और नित्यता की पवनें विशेषकर उच्च अक्षांशो[1] मे मिलती है। स्काटलैंड उन देशो में से एक है जहाँ ऐसी पवनें चलती हैं और इसलिए पवन-शक्ति के विकास के लिए यह एक अनुकूल प्रदेश है। महाद्वीपीय प्रदेशों मे पवनें अपेक्षया बहुत कम स्थिर होती है, किन्तु समशीतोष्ण[2] कटिबंधो में बहुत से पहाड़ी प्रदेशों मे विकास के लिए पर्याप्त पवनें चलती है। स्थान कहाँ है, इस पर बहुत कुछ निर्भर करता है, क्योकि पवन-जनित्र[3] को स्वतंत्र और अनवरुद्ध पवन मिलनी चाहिए।

पवन

पवन से जो शक्ति प्राप्त की जा सकती है वह उसकी गति के घन के समानुपाती होती है। उदाहरण के लिए, यदि १० मील प्रति घंटा वेगवाली वायु से १ अश्व-शक्ति बराबर शक्ति मिलती है तो २० मील प्रति घंटा रफ्तारवाली पवन से ८ अश्व-शक्ति की और ३० मील प्रति घंटा की पवन से २७ अश्व-शक्ति की मिलती है। पृथ्वी पर कही भी पवन स्थिरता और दृढता से नही चलती क्योकि इसकी गति और दिशा निरन्तर बदलती रहती है। यदि पवन-चक्की को ऐसे स्थान पर रखा जाये जहाँ पवन सामान्यतः जोर से चलती है, तो एक असाधारण पवन से इसके नष्ट होने का भय रहेगा; यदि वायु मंद हो जाये तो पवन-चक्की का घूमना बद हो जायेगा। आधुनिक उद्योग अनियमित अवकाशों पर शक्ति का बन्द होना सहन नही कर सकते, किन्तु शक्ति-वितरण की वैद्युत-ग्रिड पद्धति मे विद्युत् के आन्तरायिक साधनों का लाभदायक उपयोग हो सकता है। एक ऐसी ग्रिड-पद्धति की कल्पना की जा सकती है जिसे ऐसे जनित्रों से शक्ति मिलती है जिनमें जल-वरीवर्त, इंधन-इंजन और पवन-चक्की द्वारा शक्ति उत्पादित की जाती है, जिससे किसी समय पवन के रुक जाने से होनेवाली क्षति की पूर्ति दूसरे संयंत्र पर भार बढ़ाने या सहायतार्थ रखे हुए संयंत्र को उपयोग मे लाने से हो सकती है। ऐसे बहुत से स्थान है जहाँ वर्ष के ८० प्रतिशत काल मे पवन उपयोगी गति से चलती है और जहाँ इससे विद्युत् की एक बहुमूल्य मात्रा का उत्पादन किया जा सकता है।

1. Latitudes 2. Temperate 3. Wind-generator

बड़ी पवन-चक्कियाँ इंजीनियरी की बहुत-सी समस्याएँ उपस्थित करती हैं जिनका हल केवल परीक्षण के लिए निर्माण किये गये संस्थानों[1] से ही हो सकता है। ऐसी कुछ पवन-चक्कियों ने सफलतापूर्वक कार्य किया है। याल्टा में रूसियों ने दस वर्ष तक एक १०० किलोवाट के जनित्र को चलाया है। पिछले विश्व-युद्ध में डेन्मार्क के निवासियों ने अपने ग्रामों को विद्युत्-प्रकाश देने के लिए पवन-चालित जनित्रों की एक बड़ी संख्या की स्थापना की थी जिनसे ३० से ७० किलोवाट प्रति घंटा तक का उत्पादन होता था जो उन परिस्थितियों में एक सफलता थी। किन्तु जब हम स्मरण करते है कि ब्रिटेन में सैकड़ों ऐसे उत्पादक-केन्द्र हैं जिनमें से प्रत्येक २५,०००–५०,००० किलोवाट की दर से शक्ति का उत्पादन करता है, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि डैनिश नमूने की पवन-चक्कियो से अधिक उत्पादन नहीं मिल सकता।

एक शक्ति-केन्द्र के प्रतिस्थापन के लिए हमें पचास १,००० किलोवाट के पवन-जनित्रों की कल्पना करनी है और वास्तव में इतनी शक्ति का एक पवन-जनित्र सफलता से कार्य कर भी चुका है।

स्मिथ-पुटनाम वात-जनित्र[2]

१९३९ ई० में, वरीवर्त बनानेवाली ऐस मोरगेन स्मिथ कम्पनी ने बड़े पवन वरीवर्तो के निर्माण किये जाने की सभावना को लेकर एक गवेषण योजना को पूरा करने का विचार किया। जिस प्ररचना को अपनाया गया वह पी० सी० पुटनाम का कार्य था, किन्तु यह स्पष्ट है कि अनुभव से सदैव अधिकाधिक अच्छे संयंत्रों की प्ररचना होती रहेगी। एक बहुत बड़े दो-फल[3] वाले वरीवर्त के द्वारा, जिसका व्यास १७५ फुट था, एक जनित्र चलाया गया। जनित्र २,००० फुट ऊँची पहाड़ी पर बनाया गया जहाँ तीव्रगति वायु के चलने की प्रत्याशा थी। वरीवर्त का सयोग एक प्रत्यावर्ती-धारा[4] समक्रमिक-जनित्र[5] से किया गया था जिससे जनता को प्रदाय करनेवाली पद्धति को विद्युत् मिलती थी। इस संयंत्र ने १४३ घंटे संतोपप्रद कार्य किया और तब इसका एक फलक जड़ से चटक गया तथा प्रयोग छोड़ दिया गया। कम्पनी को संतोष था कि दुर्घटना का कारण पदार्थ मे निहित एक दोष था और उन्होंने परीक्षण जारी नही रखा क्योंकि इसके द्वारा जो कुछ सिद्ध करना चाहा था वह सिद्ध हो चुका था, अर्थात् इस प्रकार विद्युत् का लाभदायक रूप से उत्पादन हो सकता था और इसमें व्यय

1. Installations 2. Aero generator 3. Double-blade 4. Alternating
5. Synchronous generator

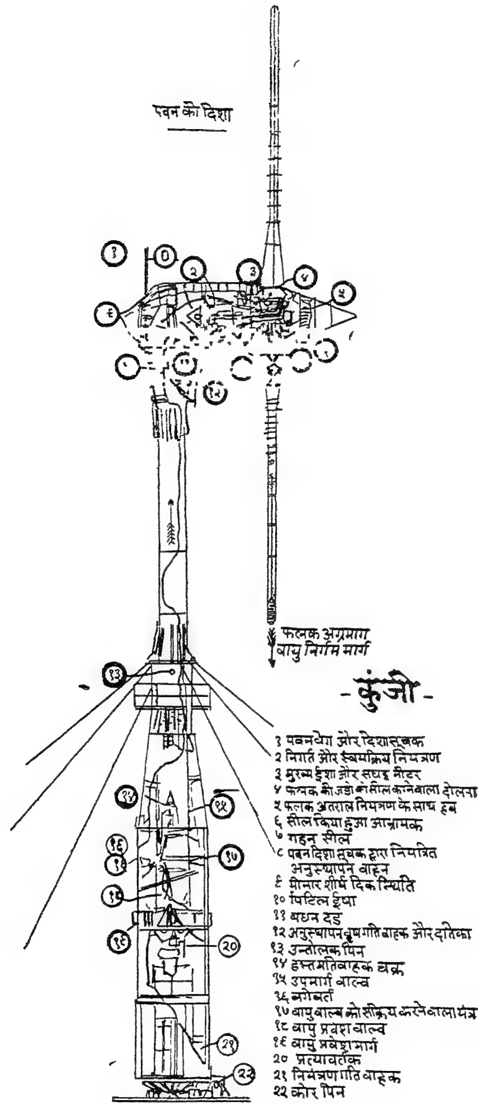
भी दूसरे साधनों द्वारा उत्पादित विद्युत् के व्यय की तुलना में बहुत अधिक नहीं पडता था। इससे पवन के रंग-ढग तथा गतिविधि के बारे मे बहुत-सी सूचना मिली जिसे अभिलिखित कर लिया गया।

इन प्रयोगो से लोगों में विशेष अभिरुचि उत्पन्न हो गयी। अमेरिका को जिसके पास कोयला, तैल, प्राकृतिक गैस और जल के अत्यधिक ससाधन है, दूसरे देशों की अपेक्षा, जिनमें ब्रिटेन भी सम्मिलित है, शक्ति के नये ससाधनो की कम आवश्यकता है और वर्तमान समय मे इस देश में कई प्रायोगिक संयंत्र बनाये जा रहे है या उनसे कार्य हो रहा है, यद्यपि स्मिथ-पुटनाम संयंत्र के आकार से उनकी तुलना नही की जा सकती।

ब्रिटेन में वात-उत्पादन[1] की सभावना पर गभीर विचार किया जा रहा है। ओर्कनीस[2] में एक १०० किलोवाट का प्रायोगिक सयंत्र स्थापित किया गया है और एक दूसरा, जिसका निर्माण पूर्ण होने के समीप है, विशेष आकर्षण का कारण है। यह मशीन (ऑडरो-ऑफी[3] जनित्र, चित्र २७) एक स्तम्भ है जिसमे दो बड़े खोखले नोदक[4] फलक लगे हुए है जो कि छोरों पर खुले हुए है। पवन नोदक को घुमाती है और इससे वायु अपकेन्द्रीय[5] रूप से फलको मे से निकलती है। यह वायु स्तम्भ के ऊपर को खीची जाती है और जब यह इसमे से प्रवाहित होती है तो एक वायु-वरीवर्त को चलाती है जो एक जनित्र से जुड़ा रहता है। इस योजना का एक बड़ा लाभ यह है कि इसमे किसी गतिवाहक[6] के लगाने की आवश्यकता नही होती, क्योकि नोदक का मोटर से सयोग नही होता।

इस प्रकार के प्रयोगो से निस्सन्देह ऐसी सूचना मिलेगी जिसके आधार पर पवन-जनित्रो के व्यय और विश्वस्तता के बारे में निश्चय करना सम्भव हो सकेगा। पवन जनित्रों का उपयोग किया जायेगा या नही, निश्चय ही यह इस पर निर्भर करना चाहिए कि भविष्य में शक्ति के दूसरे साधनों, विशेषत कोयले का मूल्य क्या होगा। यह कुछ असंभाव्य प्रतीत होता है कि वात-जनित्रों से वह सारी शक्ति मिल सकेगी जिसकी इस देश को आवश्यकता है, क्योकि इस समय ये केवल ऊँचे और बाधारहित स्थानो पर ही कार्य-क्षम हैं। यह अनुमान लगाया गया है कि यदि पवन-शक्ति का पूरा उपयोग किया जाये तो इससे ब्रिटेन की विद्युत् शक्ति का कदाचित १०-१५ प्रतिशत मिल सकेगा और इससे ३० से ५० लाख टन तक कोयले की प्रतिवर्ष बचत हो सकेगी।

1. Aero-generation 2. Orkneys 3. Andrean-Enfield 4. Propeller
5. Centrifugally 6. Gearing



चित्र २७—ऑडरो-ऑफी जनित्र ("इंजीनियरिंग" की कृपा से)

ज्वारभाटे की शक्ति

ज्वारभाटे की ऊर्जा पृथ्वी के घूर्णन[1] की ऊर्जा और सूर्य, चन्द्रमा तथा पृथ्वी की आपेक्षिक गति की ऊर्जा से व्युत्पन्न होती है। यद्यपि ज्वारभाटे की बहुत शक्ति व्यय होती है, फिर भी पृथ्वी के घूर्णन को कम करने के इसके प्रभाव का पता कदाचित् ही चल सकता है।

ज्वारभाटे की शक्ति का उपयोग अभी तक परीक्षण की अवस्था में है। सोलहवी शताब्दी के बाद से ज्वारभाटे द्वारा चालित चक्कियो का विस्तृत उपयोग हुआ जो पानी पम्प करने में यथोचित सफल सिद्ध हुई। इंग्लैड के समुद्री तटों के चारों ओर समुद्र एक दिन में दो बार औसतन आठ से सोलह फुट तक उठता और गिरता है। कुछ मुहानों[2] में यह सीमा इससे भी अधिक है और सेवर्न मुहाने में तो ५२ फुट तक की ऊँचाई देखी जाती है।

ज्वारभाटे से प्राप्त होनेवाली शक्ति के विशाल संचय का उपयोग करने के लिए बहुत सी संरचनाओ (वर्क्स, स्ट्रक्चर्स) का निर्माण करना पड़ता है। स्पष्ट समझ में आनेवाली एक योजना तो यह है कि मुहाने पर बाँध बना दिया जाय। जब ज्वार आये तो बाँध को पानी से भरने दिया जाय और जब भाटा आये तो बाँध से पानी को निकल जाने दिया जाय। जिस समय बाँध के जल और उसके बाहर के जल के तल में पर्याप्त अन्तर हो, उस समय जल द्वारा प्रतिक्रिया-वरीवर्त चलाये जा सकते है। ऐसी योजनाओं के सम्बन्ध में मुख्य आपत्ति यह की जाती है कि इनसे दिन के कुछ समय में ही विद्युत् मिल सकती है; तथापि इसका महत्त्व कम हो जाता है यदि विद्युत् को ग्रिड-पद्धति से संचारित किया जाये। इस प्रकार जब ज्वारभाटा केन्द्र कार्य करता है तो भाप और जल-विद्युत् केन्द्रो पर भार कम किया जा सकता है।

एवेनमाउथ[3] घाट (गोदी) पर १९३० ई० में एक प्रायोगिक संयंत्र स्थापित किया गया था, जिससे २८० अश्व-शक्ति उत्पन्न होती थी और जो सफल सिद्ध हुआ। समय-समय पर और भी बहुत-सी आशाप्रद योजनाओं के प्रस्ताव रखे गये है। सेवर्न बाँध की जो योजना बनी थी, उसका एक सरकारी समिति ने सावधानी से अध्ययन किया था और उसने १९४५ ई० में एक अनुकूल रिपोर्ट दी थी। इसकी प्ररचना से २,००० किलोवाट घंटों के उत्पादन की संभावना बतायी जाती थी जो देश की आवश्यकता का सत्ताईसवाँ भाग है, इस पर व्यय $\frac{1}{5}$ से $\frac{1}{4}$ पैनी प्रति यूनिट (इकाई) आता

1. Rotation 2. Estuaries 3. Avonmouth

था। पूर्ण व्यय ४ से ५ करोड़ पाउण्ड कूता गया था जो अब और अधिक बढ जा सकता है। फिर भी यह एक व्यावहारिक और आर्थिक दृष्टिकोण से लाभदायक प्रस्ताव है। किन्तु संभव है कि देश में ईंधन की उपलब्धि बढाने का यह सर्वोत्तम उपाय न हो। बाँध-योजना[1] से दस लाख टन कोयले की प्रतिवर्ष बचत की आशा थी; कोयले की एक नयी खान पर कदाचित् इस व्यय का केवल दसवाँ भाग व्यय हो और उससे कोयले की लगभग इतनी ही मात्रा का उत्पादन भी हो सकेगा, यदि किसी तरह खनक भी यथेष्ट संख्या में मिल सकें।

तात्पर्य यह है कि कुछ अनुकूल स्थानों में ज्वारभाटे से चलनेवाले जनित्र स्थापित तो किये जा सकते है जहाँ उन पर होनेवाले व्यय का यथेष्ट प्रतिफल मिल सकता है, किन्तु इस समय शक्ति के अन्य साधन भी प्राप्य हैं जिनसे अपेक्षाकृत कम व्यय पर उत्पादन किया जा सकता है।

भूगर्भीय[2] उष्मा का उपयोग

भूमि का अभ्यन्तर[3] गर्म है, इसका प्रमाण एक तो इस तथ्य से मिलता है कि ज्वालामुखी प्रदेशों में, और कभी-कभी दूसरे स्थानों पर भी, इसमे से गर्म पदार्थ निकलते हैं और दूसरे, गहरी खानों की उष्णता से। सामान्यत. भूपटल[4] का ताप एक किलोमीटर गहराई बढ़ने पर ३०° से० की दर से बढता है; इस दर पर गहरे से गहरे छिद्रण, जो अभी तक सम्भव हो सके है, केवल पानी के क्वथनांक तक पहुँच सकते है। अतः इस प्रकार अधिक स्थानो में इतनी गहराई तक छिद्रण करना, जहाँ से एक उपयोगी ताप पर उष्मा की उपयोगी मात्रा मिल सकेगी, सर्वथा अव्यवहार्य होगा।

किन्तु विश्व में कुछ ऐसे असाधारण प्रदेश है जहाँ भूपटल से थोडे नीचे ही तप्त द्रव्य मिलते है। साधारणतः ये प्रदेश ज्वालामुखियों के निकट होते है और भूमि से निकलते हुए गर्म प्रस्रवण[5] और भाप की प्रधार उनकी विशेषता होती है। ये गर्म प्रस्रवण बड़े आकार के हो सकते है और एक उदाहरण ऐसा है जब कि उनका बहुमूल्य उपयोग किया गया है—जैसे कि दूसरे विश्व-युद्ध में आइसलैंड में स्थित ब्रिटिश सेना ने हेकला के समीपवर्ती ज्वालामुखी प्रदेशो से नलो द्वारा गर्म पानी रेक-जाविक शहर तक पहुँचाया था। पृथक्कृत[6] नलों के उपयोग से उष्मा का अत्यधिक भाग बचाया गया और केन्द्रीय-तापन[7] और धोने, दोनों, के लिए पानी का उपयोग किया गया।

1. The Barrage Scheme 2. Subterranean 3. Interior 4. Earth's crust
5. Springs 6. Insulated 7. Central heating

भूगर्भीय उष्मा का बडे पैमाने पर दूसरा उपयोग इटली मे फ्लोरेंस के निकट लारडारेलो के समीपवर्ती प्रदेश मे किया गया है। इस क्षेत्र मे कितने ही धुआँ निकलने के छिद्र है जहाँ भाप की प्राकृतिक प्रधाराएँ निकलती है जिनमें बोरिक अम्ल[1] का थोडा अनुपात रहता है जो कि एक मूल्यवान् उपजात[2] है। १,००० से २,००० फुट तक छिद्रण करने से, जो प्राय: उसी ढग से किया जाता है जैसे कि तैल के लिए, और अधिक भाप-प्रधारो को प्राप्त किया जा सकता है। एक ही धुआँ निकलनेवाले छिद्र से अढाई लाख पौड भाप प्रतिघटा मिल सकती है और १९५० ई० में इसका उपयोग भाप-वरीवर्तो मे करने से लगभग २,५०,००० किलोवाट का उत्पादन किया गया था। सघनित जल को बोरिक अम्ल और अमोनिया के लिए पिघलाया जाता है।

यह सम्भाव्य है कि दूसरे प्रदेशो जैसे न्यूजीलैड, आइसलैड या अलास्का, में भाप के लिए छिद्रण करके लाभ उठाया जाये; किन्तु यह असभाव्य प्रतीत होता है कि इस प्रकार उत्पन्न होनेवाली शक्ति विश्व के प्रदाय का कोई बडा अश हो सकेगी।

सौर[3] ऊर्जा

यद्यपि यह सत्य है कि हमारी प्राय सारी शक्ति सचित सौर ऊर्जा ही है, फिर भी पृथ्वी पर सूर्य का विकिरण[4] जिस रूप मे होता है उसी रूप में उसका उपयोग किया जा सके, यह सरल नही है। शक्ति की वह मात्रा जो विकिरण के रूप मे पृथ्वी के धरातल पर पहुँचती है बहुत अधिक है और इसकी गणना इस प्रकार की जा सकती है कि सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित प्रति वर्गगज को एक अश्व-शक्ति के तुल्य शक्ति मिलती है। किन्तु इस शक्ति को एक उपयोगी ताप पर उष्मा या कार्य में परिवर्तित करना तनिक भी सरल नही है, और यदि इसका आधा अश उपयोगी उष्मा मे या इसका दसवाँ अश कार्य मे परिवर्तित हो जाये तो एक अच्छी सफलता मिली समझना चाहिए। निश्चय ही, सौर-विकिरण केवल दिन मे ही प्राप्य होता है और बहुधा बादलों के कारण यह भी बहुत कम रह जाता है। किन्तु इन त्रुटियो के होते हुए भी प्राय: १०० वर्षो से इसका उपयोग परीक्षणो का विषय रहा है। यह स्मरण रखना है कि विश्व मे ऐसे प्रदेश है जिन्हे धूप प्राय. निरन्तर मिलती है और जहाँ ईधन बहुत ही दुर्लभ है, जसे भारतवर्ष के कुछ भागो मे सूखा गोबर ही एकमात्र प्राप्य ईधन है; इसके जलाने का अर्थ है कि भूमि नाइट्रोजन-यौगिको से निरन्तर खाली होती जा रही है जो फिर

1. Acid 2. By-product 3. Solar 4. Radiation

इसे वापस नही मिलते। ऐसी परिस्थितियो मे सौर-शक्ति का उपयोग बहुत लाभदायक होगा।

सौर-ऊर्जा को एकत्र करना

अत्यधिक अनुकूल परिस्थितियों में एक पूर्णत: श्याम[1] तल[2] को प्रकाशित करके सूर्य की रेखाएँ इसके ताप को इतना बढायेंगी कि इसमें और जल के क्वथनांक में कुछ डिग्रियो का ही अन्तर रहेगा। यदि एक समथल काली टकी[3] को, जो सूर्य के सामने पूर्णतः खुली हो, काँच से सुरक्षित और नीचे से पृथक् कृत[4] किया जाय, आवागमन नलों द्वारा संग्रह करनेवाले हौज से उसे जोडा जाय, तो एक गृहस्थी की आवश्यकता के लिए पर्याप्त जल पर्याप्त मात्रा तक गर्म किया जा सकता है। निश्चय ही, यह केवल ऐसे स्थानों पर उपयोगी हो सकता है जहाँ सूर्य के प्रकाश की नित्यता पर विश्वास किया जा सकता है और कैलीफोर्निया मे इसका विस्तृत उपयोग किया जा चुका है। इस प्रकार प्राप्त किया हुआ ताप रसोई बनाने लायक ऊँचा नही होता और जब तक किसी विशेष प्रकार के मोटर का आविष्कार नही होता इसका उपयोग शक्ति के उत्पादन के लिए भी न हो सकेगा।

शक्ति के उत्पादन के लिए पर्याप्त ताप प्राप्त करने की दृष्टि से बहुत से उद्भावकों[5] ने वक्र[6] या समतल[7] शीशो द्वारा एक भाप-इजन से जुडे हुए भाप-वाष्पित्र[8] पर सौर प्रकाश के विकिरण को सांद्रित करने के साधनों का आविष्कार किया है। इस प्रकार का संयंत्र सफलतापूर्वक कार्य कर चुका है किन्तु अभी तक बहुत प्रगति नही कर पाया है। इसका मुख्य कारण यह है कि इससे उत्पादित प्रति अश्व-शक्ति पर पूजी का व्यय कोयले या तैल जलानेवाले शक्ति-सयत्रो द्वारा उत्पादित एक अश्व-शक्ति के व्यय की अपेक्षा दस गुना होता है। इसमे लाभ यह है कि ईधन पर कोई व्यय नहीं आता। यह सभाव्य है कि बीस वर्ष या ऐसे ही काल के बाद कोयला जलानेवाले और सौर-शक्ति का उपयोग करनेवाले सयत्रो के व्यय मे बहुत अन्तर न रहेगा।

भारत के उन भागो मे उपयोग करने के लिए जहाँ ईधन बहुत ही दुर्लभ है एक बहुत ही सरल चूल्हे का आविष्कार किया गया है। इसमें धातु का एक वक्र शीशा होता है जिसकी प्ररचना एक स्टैड पर रखे हुए भोजन के बर्तन पर सूर्य के प्रकाश को

1. Dead-black 2. Surface 3. Tank 4. Insulated 5. Inventors
6 Curved 7 Plane 8. Steam-boiler

केन्द्रित करने के लिए की गयी है। सूर्य के तीव्र प्रकाश में यह सफलतापूर्वक कार्य करता है।

सौर-ऊर्जा के क्षेत्र में परीक्षण किये जा रहे है और यह प्रतीत होता है कि एकलित स्थानों में जहाॅ ईधन दुर्लभ है शक्ति की थोडी मात्रा देने में इसका उपयोग हो सकेगा। किन्तु यह विचार करना कठिन है कि बडे पैमाने पर शक्ति उत्पादन करने के लिए इसका उपयोग किया जायेगा जब तक कि ऐसा समय न आ जाये कि संसार के कोयले और तैल का मूल्य अत्यधिक बढ़ जाये और उसके स्थान पर कोई उत्तम साधन न मिले।

अध्याय ९

उष्मा-पम्प[1]

साधारण सिद्धान्त

यह स्पष्ट है कि वायु, नदियों और समुद्रों इत्यादि की अपार उष्मा का उपयोग करना कठिन है। इनमे उष्मा है किन्तु इनका ताप[2] इतना नही है जो किसी व्यावहारिक या औद्योगिक उद्देश्य के लिए उपयोगी हो सके । एक ठंडे प्रदेश से उष्ण प्रदेश को उष्मा स्वयं नही बहेगी। जब उष्मा एक गर्म पदार्थ से अपेक्षया एक शीत पदार्थ में जाती है तब इसका कुछ अंश कार्य में परिवर्तित किया जा सकता है और विलोमतः कार्य करने से उष्मा को अपेक्षया एक ठंडी वस्तु से अधिक गर्म वस्तु में स्थानापन्न करना सम्भव है। इस दशा में, यद्यपि ऊर्जा में कुल मिलाकर कोई वृद्धि नहीं होती, फिर भी प्राप्त होनेवाली उपयोगी उष्मा व्यय किये हुए कार्य की तुलना में अधिक होती है। यही उष्मा-पम्प का सिद्धान्त है।

हममें से बहुतो के घरों में एक उष्मा-पम्प अर्थात् एक प्रशीतक[3] होता है। शीत-कक्ष[4] से कमरे की वायु को उष्मा देने के लिए यह मशीन कार्य करती है। चित्र के रूप मे हम इसे इस तरह समझ सकते है कि इसमे एक ठंडा छोर[5] होता है जहाँ से उष्मा ग्रहण की जाती है और एक गर्म छोर होता है जहाँ से उष्मा बाहर कर दी जाती है। अब एक वहुत बड़े प्रशीतक की कल्पना कीजिए जिसके ठंडे छोर को निरन्तर निम्न-कोटि[6] की उष्मा, मान लीजिये, एक नदी से मिलती है और जिसका गर्म छोर आपके गृह को तपाने मे लगा हुआ है। परिणाम यह होगा कि उस संपीडक[7] को चलाने में आपको कुछ ऊर्जा व्यय करनी पडेगी जिसके द्वारा प्रशीतक कार्य करता है और आपको वह उष्मा मिलेगी जो कि ठंडे छोर से स्थानापन्न हुई थी। इस प्रकार प्राप्त

1. Heat-pump 2. Temperature 3. Refrigerator 4. Cold-chamber
5. End 6. Low-grade 7. Compressor

हुई उष्मा की मात्रा दोनो छोरो के ताप के अन्तर और मशीनों की कार्यक्षमता पर निर्भर करती है, किन्तु व्यवहार में हमे उष्मा-पम्प के गर्म छोर से संपीडक को दी गयी यान्त्रिक-ऊर्जा[1] की अपेक्षा सदैव अधिक उष्मोर्जा मिलती है। एक उष्मा-पम्प से उसको दी गयी ऊर्जा की तुलना मे दो से आठ गुनी तक उष्मोर्जा प्राप्त करना व्यावहारिक रूप से सम्भव है।

यह पम्प ताप को एक बडी सीमा तक कार्य-क्षमता मे नही बढा सकता। यह देखा जाता है कि १००° फा० अत्यधिक उपयुक्त सीमा है; इस प्रकार ४०° फा० ताप पर, एक नदी ठडे छोर का ताप निश्चित कर देती है और तब पम्प का उपयोग एक केन्द्रीय-तापन-सयंत्र[2] के पानी का ताप १४०° फा० तक बढाने के लिए किया जा सकता है जो कि इस उद्देश्य के लिए पर्याप्त ताप है।

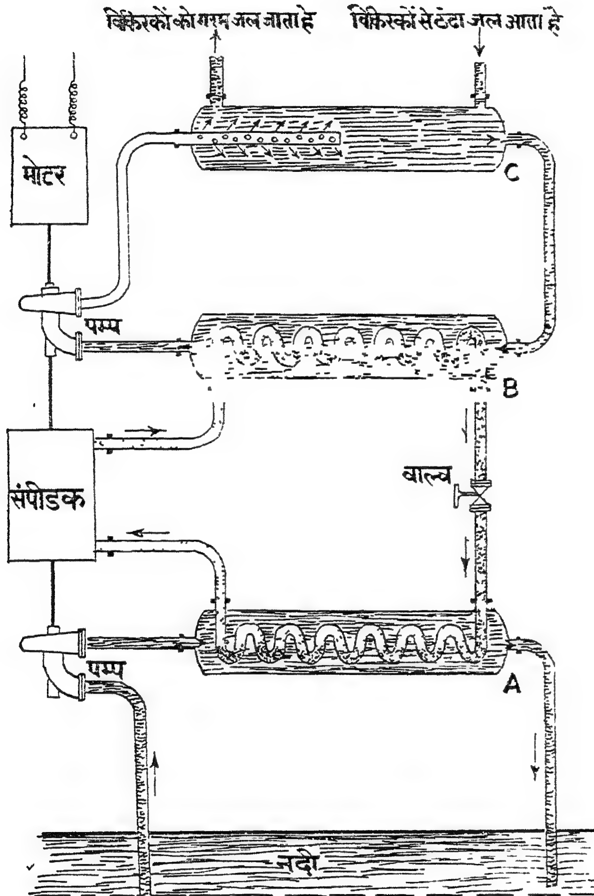
वास्तविक उष्मा-पम्प

प्रशीतक की भाँति सामान्य उष्मा-पम्प भी एक वाष्पशील[3] द्रव का ही कार्य-पदार्थ[4] के रूप में उपयोग करता है। उष्मा के निम्नताप-उद्गम के सम्पर्क मे एक वाष्पक[5] A होता है (चित्र २८) जिसमें एक द्रव होता है जो अपेक्षया अधिक निम्नताप पर उबलता है जैसे तरल अमोनिया, सल्फर-डाइ-आक्साइड या फ्रिओन (डाइ-क्लोरो डाइ-फ्लोरोमिथेन)। वाष्पक में दाब का विनियमन संपीडक द्वारा किया जाता है जिससे द्रव का क्वथनांक[6] निम्नताप-उद्गम (उदाहरणतः एक नदी) के ताप से कुछ कम रहता है। परिणामत नदी से मिलनेवाली उष्मा द्रव को उबालती है और इसका वाष्प संपीडक में पहुँचता है। पम्प मे जानेवाली पूर्ण उष्मा को वाष्पक की दीवार मे से निकलना पडता है। अतः इसकी सतह का बड़ा होना आवश्यक है। इसके संपर्क में जो जल रहता है उसे भी गतिमान रहना चाहिए जिससे वह अत्यधिक शीतल न हो पावे।

तब संपीडक वाष्प के दाब को बढाता है और इसे संघनित्र[7] B में जाने को बाध्य करता है जिसमें, इस उच्च दाब के कारण, इसका संघनन होता है। जब वाष्प का सघनन होता है तो इससे उष्मा निकलती है और ऐसी व्यवस्था की जा सकती है कि यह, मान लीजिए, १५० फा० पर द्रव मे संघनित होगा। केन्द्रीय तापन के लिए जिस जल का उपयोग होता है वह सघनित्र में चक्रण करता है, इस उष्ण द्रव से उष्मा

1. Mechanical energy 2. Central heating plant 3. Volatile 4. Working-substance 5. Evaporator 6. Boiling point 7. Condenser

लेता है और मान लीजिए, इसका ताप १४०° फा० तक बढ़ जाता है। संघनित द्रव अब एक दाब मुक्त-वाल्व[1] में से वाष्पक में लौट आता है और यह चक्र[2] एक वार फिर इसी तरह चलता है।



चित्र २८—एक उष्मा-पम्प की कार्य-विधि दिखानेवाला रेखा-चित्र

1. Release-valve 2. Cycle

उष्मा-पम्प का भविष्य

उष्मा-पम्प की कल्पना बहुत पुरानी है; क्योंकि लार्ड कैल्विन ने १८५४ ई० में इसकी चर्चा की थी। किन्तु उन्नीसवीं शताब्दी में और बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ काल में ईंधन के मितव्यय को अधिक महत्त्व नही दिया गया था। १९३९ ई० से पहिले कोई उष्मा-पम्प स्थापित नहीं किया गया था। आज जहाँ परिस्थितियाँ अनुकूल है वहाँ तापन के सबसे सस्ते साधन के रूप में इस पर सदैव विचार किया जाता है।

उष्मा-पम्प का एक बड़ा गुण यह है कि इसके द्वारा उष्मा दोनों ओर जा सकती है। एक उचित प्ररचनावाले इसके संस्थापन[1] मे ग्रीष्म ऋतु में इंजन का उत्क्रम[2] किया जा सकता है जिससे भवन से उष्मा खीचकर यह नदी में बाहर पहुँचाता है। इस कारण यह ऐसे स्थानों के लिए आकर्षक बन जाता है जहाँ जाड़ो में बहुत ठंड पड़ती है और गर्मी में गर्मी बहुत होती है। फिर इसके ठडे छोर द्वारा प्रशीतन कराया जा सकता है। इस प्रकार, लौ-सान[3] में एक उष्मा-पम्प हिम-मार्ग[4] को जमा देता है और इससे ली हुई उष्मा से वह नगर के जल-संस्थान[5] के अत्यधिक निम्नताप को वढाता है, जो कि हिम जैसे ठंडे पहाड़ी पानी से लिया गया है।

उष्मा-पम्प का एक महत्त्वपूर्ण कार्यक्षेत्र उन स्थानों में है जहाँ इसे चलाने के लिए विद्युत् सस्ती है और जहाँ उष्मा का एक बहुत बडा उद्गम है (जैसे नदी का जल) और जिसके प्रत्येक भाग का ताप प्रायः एक ही होता है। सभी सफल संयंत्रों में जल का उष्मा के उद्गम के रूप में उपयोग किया गया है। सैद्धान्तिक रूप से वायु द्वारा भी यह कार्य लिया जा सकता है किन्तु इसका ताप इतना विषम और परिवर्तनशील है कि सफलता प्राप्त नही हो सकती। इसलिए नदी के किनारे के संस्थापन उष्मा-पम्पों के लिए अत्यधिक अनुकूल हैं। इंग्लैड में अत्यधिक परिचित, यद्यपि प्राचीनतम नही, संस्थापन वह है जो टेम्स नदी के दक्षिणी किनारे पर रायल-फेस्टीवल-हाल[6] में स्थापित किया गया है।

संपीडक को चलाने के लिए शक्ति के किसी साधन की आवश्यकता होती है; यदि यह साधन विद्युत् है तो वास्तविक लाभ उतना अधिक नही होता जितना कि प्रतीत होता है। जैसे, मान लीजिए कि शक्ति-केन्द्र में जलाये गये कोयले की ऊर्जा का

1. Installation 2. Reversed 3. Lausanne 4. Icel-rink
5. Water-supply 6. Royal Festival Hall

केवल पाँचवाँ अंश वैद्युतोर्जा[1] में परिवर्तित होता है। यदि उष्मा-पम्प ने इसे केवल चार गुना बढ़ाया तब भी हमें उतनी ऊर्जा न मिलेगी जितनी कि कोयले को एक उत्तम वाष्पित्र सयंत्र में जलाने से मिलेगी। किन्तु वास्तव मे उष्मा-पम्प द्वारा सामान्यत: चार गुने से अधिक ऊर्जा में वृद्धि होती है, पर इस उदाहरण के सिद्धान्त से यह ज्ञात होता है कि वर्तमान समय में उष्मा-पम्प के उपयोग के लिए सर्वोत्तम क्षेत्र वही है जहाँ विद्युत् की अपेक्षा कोयला और तैल अत्यधिक मँहगे है जैसे कि जल-विद्युत् योजनाओं द्वारा कार्य करनेवाले बहुत से क्षेत्रों मे। इस प्रकार उष्मा की जो मात्रा प्राप्त होती है वह उस मात्रा से चार या अधिक गुनी होती है जो केवल विद्युत् से मिलती है। फिर भी जहाँ ईधन सरलता से प्राप्य होता है वहाँ उष्मा-पम्प से प्राप्त होनेवाला लाभ कम होता है क्योंकि पम्प में व्यय होनेवाली यांत्रिक-ऊर्जा पर व्यय इसके तुल्य उष्मोर्जा के व्यय से, जो सीधे ईधन को जलाने से व्युत्पन्न होती है, चार या पाँच गुना होता है। इन परिस्थितियों में, सर्वोत्तम विधि सम्भवत: उष्मा-पम्प को डीजेल-इंजन से चलाना और डीजेल-इंजन के निष्कासक[2] की व्यर्थ-उष्मा का जल को गर्म करने मे उपयोग करना है।

तो यह कहा जा सकता है कि एक उष्मा-पम्प को चलाने के लिए आवश्यक परिस्थितियों के मिलने पर इससे सामान्यत: कोयले को जलाने की अपेक्षा कुछ बचत दिखाई देगी और जहाँ ईधन दुर्लभ है और विद्युत् सस्ती है वहाँ यह लाभ अधिक होता है। इसके अतिरिक्त यदि पम्प के एक सिरे से प्रशीतन हो सकता है, जब कि दूसरे से उपयोगी उष्मा मिलती है, तो इससे दो कार्यो की सिद्धि हो सकती है और इसमें और अधिक मितव्ययिता दिखाई देती है; वास्तव में विद्युत् से चलनेवाले एक छोटे उष्मा-पम्प के व्यापारिक उत्पादन की योजनाएँ बनायी गयी है जिसकी प्ररचना खाने के भण्डार से लेकर गर्म-पानी के जलाशय मे उष्मा पहुँचाने तक के लिए की गयी है। यह हो सकता है कि एक या दो वर्ष में उष्मा-पम्प गृहस्थी की एक सुपरिचित वस्तु बन जाये।

1. Electrical energy 2. Exhauster

अध्याय १०

विस्फोटक पदार्थ[1] और राकेट का ईंधन

ऊर्जा का द्रुत-विमोचन[2]

इस अध्याय में उन ईंधनों पर विचार किया गया है जिनका मूल्य उस वेग के कारण है जिससे वे अपनी ऊर्जा का विमोचन करते है। जिस प्रकार के साधारण ईंधनो का अभी तक वर्णन किया गया है उनके चुने जाने का कारण है कम व्यय पर ऊर्जा का मिलना; किन्तु विस्फोटक पदार्थो और राकेट के ईंधनो के सम्बन्ध में विचार करते समय इस कारण को कदाचित ही कोई स्थान मिलता हो। एक गैलन नाइट्रोग्लिसरीन की अपेक्षा एक गैलन पेट्रोल अधिक ऊर्जा का उत्पादन करता है, किन्तु एक गैलन पेट्रोल को जलाने में एक बडे वायुयान के इजन को भी पचास सेकण्ड लगते है जब कि एक प्रस्फोटक[3] के प्रभाव से, एक गैलन नाइट्रोग्लिसरीन अपनी पूर्ण ऊर्जा को लगभग $\frac{१}{५०,०००}$ सेकण्ड में उष्मा के रूप मे विमोचित कर देता है और इस प्रकार उत्पादित अत्यधिक उष्ण गैसों का प्रसार अपना विध्वंस कार्य इससे थोड़े ही अधिक काल मे कर डालता है।

किये गये कार्य की मात्रा और उसके करने में जितना समय लगता है उनके अनुपात को हम शक्ति कहते है, अतः विस्फोटक पदार्थ ऐसे ईंधन होते है जो बहुत अल्प काल के लिए विशाल शक्ति का उत्पादन करते है।

विस्फोटक पदार्थो के विस्फोटन मे जितना कम समय लगता है, उसके अनुसार उनमें बहुत अन्तर होता है। अत्यधिक तीव्र प्रस्फोटक वे होते है, जैसे मरक्युरिक फलमीनेट और लेड-एजाइड, जिनका उपयोग केवल दूसरे विस्फोटक पदार्थों में विस्फोटन प्रारम्भ करना होता है। इनके पश्चात् नष्ट-भ्रष्ट करनेवाले विस्फोटक आते है जैसे नाइट्रोग्लिसरीन और इससे व्युत्पन्न विस्फोटक पदार्थ; उदाहरणार्थ,

1. Explosives 2. Quick liberation 3. Detonator

डाइनेमाइट और विस्फोटक[1] जिलेटन। ये विध्वंस करने और कठोर से कठोर चट्टानों को उडाने के लिए उपयोगी होते है। अपेक्षया धीमे जलनेवाले विस्फोटक पदार्थों का उपयोग बदूको मे गति-प्रेरकों[2] के रूप मे होता है क्योकि वहाँ इसके दाब का उस काल में निरन्तर लगे रहना आवश्यक है जिसमे कि नाल मे प्रक्षिप्त[3] का त्वरण[4] होता है; मन्थर वेग से जलनेवाले विस्फोटक पदार्थों का उपयोग अपेक्षया कोमल प्रस्तरो को उडाने के लिए भी होता है, विशेषकर कोयले को जिसको चकनाचूर न करके विदारण[5] करने की आवश्यकता होती है, मन्थर गति विस्फोटक पदार्थ अभी तक ठोस ईधन के रूप में राकेटों मे इस्तेमाल किये जाते है। आज विस्फोटक पदार्थो के ऐसे यौगिक तैयार करना कठिन नही है जो किसी भी आवश्यक गति से जलाये जा सकते है।

थोडी-सी भिन्न श्रेणी मे वे पदार्थ आते है जो मिश्रण करने पर बड़ी तीव्रता से जलते या संयोजित होते है और गैस का निकास करते है। उदाहरण के लिए यदि तरल आक्सिजन और पेट्रोल के एक मिश्रण का प्रस्फोटन किया जाये, तो वह बड़ी उग्रता से विस्फोटित होता है किन्तु तरल आक्सिजन और पेट्रोल को एक नियंत्रित गति पर भिन्न-भिन्न छिद्रों द्वारा दहन कक्ष मे ले जाने से एक अत्यन्त तीव्र, किन्तु विस्फोटक नहीं, दहन और गैसों का निकास प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार के तरल ईधनों का उपयोग कुछ रॉकेट-मोटरों में किया जाता है।

रॉकेट

हम वास्तविक विस्फोटको को सामान्यतः इधन नहीं समझने किन्तु ईधन शब्द के सामान्य अर्थो में रॉकेट का प्रभार[6] स्पष्टतया एक ईधन है। पिछले १०-२० वर्षों में ही रॉकेट ने अपना एक स्थान बनाया है, यद्यपि यह एक पुरानी चीज है जिसका उद्‌भव[7] भूतकाल में कमसे-कम १५४० ई० में, कदाचित् इससे भी पहले हुआ। यही पहला यांत्रिक साधन था जो स्वयं अपनी शक्ति से उड सका।

रॉकेट का सिद्धान्त प्रतिक्रिया[8] है। यदि बंदूक से कोई प्रक्षिप्त (प्रोजेक्टाइल) दागा जाता है तो बंदूक प्रतिक्षेप[9] करती है, अर्थात, यह विपरीत दिशा मे ऐसी चाल से हटती है कि प्रक्षिप्त की गति और उसके सहित[10] (पिण्ड) का गुणनफल उतना ही होता है जितना बंदूक की गति और उसके सहित का। रॉकेट अपनी पुच्छ[11] से गैस

1. Blasting 2. Propellants 3. Projectile 4. Acceleration 5. Split
6. Charge 7. Invention 8. Reaction 9. Recoil 10. Mass 11. Tail

की एक धारा निकालता है और इसलिए विपरीत दिशा में चलता है। इस प्रकार, रॉकेट का संहित×रॉकेट की गति=गैस का संहित×गैस की गति।

इससे स्पष्ट है कि रॉकेट अपनी अत्यधिक गति उस समय प्राप्त करेगा जब कि यह हलके से हलका हो और उससे गैस की अधिक से अधिक मात्रा उच्चतम गति से निकले। इसको चलाने के लिए बहुत कम कलों की आवश्यकता होती है या किसी भी कल[१] की आवश्यकता नही होती, अतः यह बहुत हलका बनाया जा सकता है; गैस का संहित राकेट मे ले जाये गये ईधन की मात्रा पर निर्भर करता है और गैस की गति जलने की गति और उस छिद्र[२] की प्ररचना पर निर्भर करती है जिससे यह निकलती है। इस प्रकार राकेट की गति अत्यन्त अधिक बनायी जा सकती है और इसमें अभिरुचि होने का यह पहला कारण है।

रॉकेट की कार्यक्षमता अलग-अलग होती है। पुरानी बारूद का उपयोग करनेवाला रॉकेट अपनी ऊर्जा के केवल तीन प्रतिशत को कार्य में परिवर्तित करता था, किन्तु आधुनिक प्रकार के रॉकेट बहुत अधिक अंकों तक पहुँच सके है। ज्यों-ज्यों रॉकेट की गति बढती है उसकी कार्यक्षमता भी तीव्रता से बढ़ती है, और कुछ आधुनिक रॉकेटों में ७० प्रतिशत या इससे भी अधिक की कार्यक्षमता सम्भव हो सकी है जो कि किसी भी दूसरे उष्मा-इंजनों[३] की कार्यक्षमता से अधिक है। किन्तु दूसरे मोटरों में कार्यक्षमता का जो महत्त्व होता है उसकी अपेक्षा राकेटों में इसका महत्त्व उससे भिन्न होता है। एक डीजेल-इंजन में कार्यक्षमता का महत्त्व इसलिए होता है कि इसमें कम व्यय से अधिक कार्य होता है; राकेट में कार्यक्षमता का महत्त्व इसलिए होता है कि इंधन के एक निश्चित भार से अधिक वेग मिलता है जिससे अधिक उँचाई या गति संभव होती है।

प्रणोदन[४] की दूसरी विधियो की अपेक्षा रॉकेटों में एक लाभ अनिवार्य रूप से होता है अर्थात् यह चारों ओर फैली वायु[५] या किसी दूसरे माध्यम पर निर्भर नहीं करता। इसे वायु को ढकेलने की आवश्यकता नही होती क्योकि यह अपनी ही गैसों को ढकेलकर आगे करता है। इसलिए यह ऊँची उपरि-वायु में चल सकता है और निस्सन्देह इसका उपयोग आकाश-यान[६] को शक्ति प्रदान करने में किया जा सकता है जिसे प्रायः निर्वात[७] में यात्रा करनी पड़ेगी। यह एक ऐसा विश्वास है जो व्यावहारिक बनने से पहिले, और सम्भवतः बहुत पहिले, सामान्य ज्ञान का विषय बन गया है।

1. Machinery 2. Orifice 3. Heat-engines 4. Propulsion
5. Upper-air 6. Space-ship 7. Vacuum

ठोस-ईधन रॉकेट

परम्परा से प्राप्त राकेट में आवश्यक रूप से एक नली होती है जिसमें बारूद के समान एक मिश्रण भरा रहता है जिसमें एक खोखला शंकु[1] बनाया जाता है, (चित्र २९)। जिस बारूद से इस शंकु की दीवारे बनी होती हैं वह तीव्रता से जलती है और गैसों की एक धारा का निक्षेप[2] करती है जिसमें अधिकतर कार्बन-डाइ-आक्साइड, सल्फर-डाइ-आक्साइड और नाइट्रोजन होते हैं। किन्तु बारूद के एक दिये हुए भार में



चित्र २९. राकेट

अपेक्षया कम ऊर्जा होती है, इसलिए लम्बी-यात्रा करनेवाले रॉकेटों और विशेषकर उन रॉकेटों के लिए जिनका उपयोग दूसरे विश्व-युद्ध में किया गया, बहुत से दूसरी प्रकार के प्रणोदकों (गतिप्रेरकों)[3] का आविष्कार किया गया।

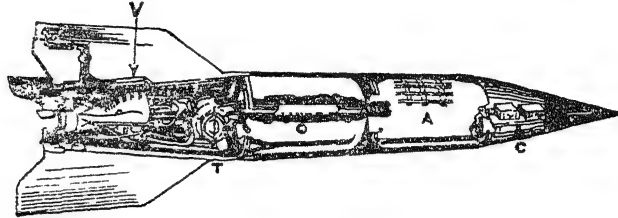
इनमें से कुछ रॉकेटों में ठोस-ईधनों का उपयोग होता है जो कि बहुत से नाइट्रो-यौगिकों जैसे नाइट्रो सैलूलोज, नाइट्रोग्लिसरीन, ग्लाइकोल डाइ-नाइट्रेट इत्यादि के मिश्रण से बने होते हैं और इनका उपयोग अब भी अपेक्षाकृत छोटे रॉकेटों में होता है। किन्तु इन संपरिवर्तित[4] विस्फोटक पदार्थों में से किसी से भी इतनी ऊर्जा और गैस नहीं मिलती जितनी कि आक्सिजन और कुछ चुने हुए ईधनों के मिश्रण के दहन से। आक्सिजन को रॉकेट में तरल आक्सिजन के रूप में या किसी आक्सीकारक[5] के रूप मे सचित किया जा सकता है, जैसे ८० प्रतिशत हाइड्रोजन-पर-आक्साइड, या शोरे का अम्ल[6]; इंधन एक साधारण हाइड्रो कार्बन भी हो सकता है जैसे पेट्रोल या यह अल्कोहल, अमीन[7] या कुछ प्रकार के कार्बनिक यौगिकों में से एक यौगिक हो सकता है। इन्हें एक दहन-कक्ष में भरने से, जहाँ इनका स्वतः[8] प्रज्वलन[9] होता है या किसी प्रकार इनका प्रज्वलन कराया जाता है, गैस के एक बहुत बड़े किन्तु नियमित आयतन का उत्पादन होता है।

1. Cone 2. Eject 3. Propellants 4. Modified 5. Oxidizing agent
6. Nitric acid 7. Amine 8. Spontaneous 9. Ignition

रॉकेट-मोटर

एक दहन-कक्ष[1], एक तुड[2] और इसमे इंधन या इंधनो को भरने की व्यवस्था—ये रॉकेट-मोटर के आवश्यक अंग होते है।

रॉकेट के लिए आवश्यक है कि यह ऊर्जा का उत्पादन तीव्र गति से करे; उदाहरण के लिए जर्मनी के V–२ राकेट के बारे में कहा जाता है कि वह अपनी ऊर्ध्व-मुख[3]

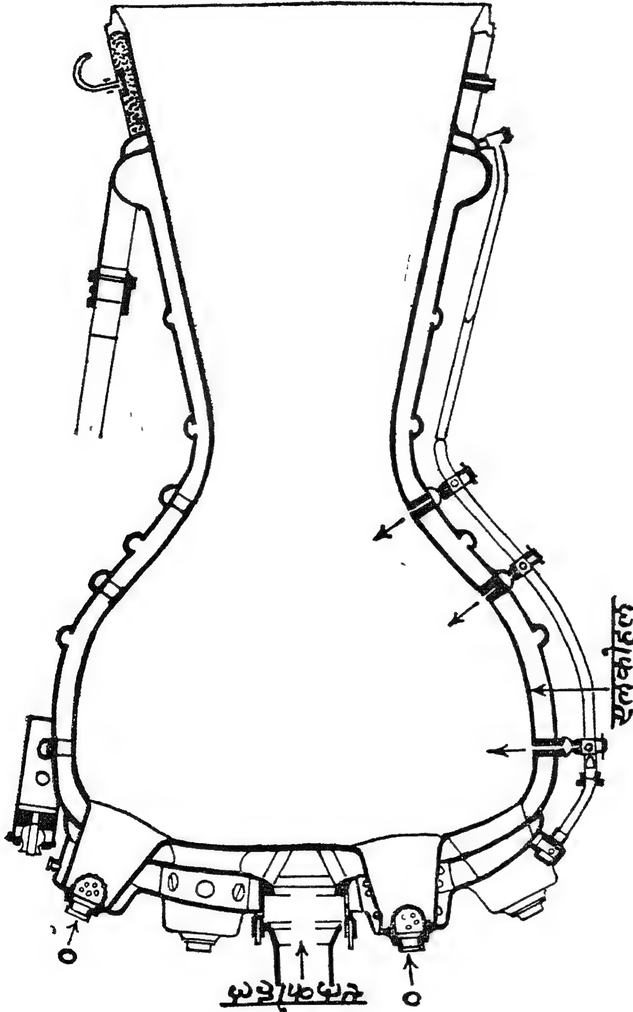


चित्र ३०—जर्मन V रॉकेट$_2$ V दहन; कक्ष (चित्र ३१) देखिए—तरल आक्सीजन टैंक O से और इंधन टैंक A, से इंधन पम्प करते हुए वरीवर्त, T; C नियंत्रण यंत्र

यात्रा में ५००,००० अश्व-शक्ति पर चलता था। यह ऊर्जा सर्वप्रथम उष्मा के रूप में विमोचित होती है और इसलिए अत्यन्त उच्च ताप, ३,०००° से० और इससे भी उच्च, की प्राप्ति होती है। इससे ऐसे दहन-कक्ष की प्ररचना करना कठिन हो जाता है जो बहुत ही थोडे समय को छोडकर अधिक देर तक उच्च ताप को सहन कर सके। जिसके द्वारा यह किया जा सके, ऐसी कोई धातु नही है और ऐसे दूसरे पदार्थ भी बहुत ही कम है। इसलिए दहन-कक्ष को ठडा करना आवश्यक हो जाता है जो बहुधा इसकी दीवारे दोहरी बनाने और उनके बीच छोड़ी हुई जगह मे से इंधन ले जाने से किया जा सकता है या विकल्प मे, दीवारों मे बने हुए छिद्रो में से इंधन को "खसोट निकालने[4]" से। चित्र ३१ मे दिखाये गये रूप के एक तुड में से अधिक दाबवाली गैस का प्रसार होता है। इस प्रकार यह बहुत अधिक वेग प्राप्त कर लेती है और ठडी भी बहुलांश मे हो जाती है। किन्तु वास्तव मे गैसे ५००°–६००° से० से नीचे ठंडी नहीं होती और उनका प्रसार भी वायुमण्डल के दाब के बराबर हो जाने पर समाप्त हो जाता है। परिणामत. उच्चतम कार्यक्षमता की परिस्थितियों में भी अर्थात् जब

1. Combustion chamber 2 Nozzle 3. Upward 4. Bleeding

राकेट ऐसी गति से चलता है कि पृथ्वी की गति को देखते हुए गैसें स्थिर-सी रहती हैं, उनमें कुछ ऊर्जा शेष रह जाती है।



चित्र ३१—V_2 राकेट मोटर का दहनकक्ष। तरल आक्सिजन इसमें o.o से प्रवेश करती है और अलकोहल दूसरी प्रधारों से।

यदि नये सैनिक प्रतिरूपों[1] की कार्यकृति[2] सम्बन्धी सूचनाओ से परिणाम निकाला जाय तो प्रत्यक्ष है कि राकेट-मोटरो से सम्बन्धित बहुत-सी समस्याएँ हल की जा चुकी है। किन्तु उनकी बनावट अभी अप्रकाशित है और एक सफल राकेट-मोटर का जो सर्वोत्तम उदाहरण दिया जा सकता है वह जर्मनी का V_2 है।

इस पुस्तक के उद्देश्यो को दृष्टि में रखते हुए हम प्रक्षिप्तों के निर्देशन[3] की आश्चर्यजनक व्यवस्था की उपेक्षा कर सकते है और अपना ध्यान मोटर की ओर देते है। चित्र ३० से एक साधारण अवलोकन प्राप्त होता है। प्रक्षिप्त का अधिक भाग ईधन-टैंकों[4] से बना हुआ था जिसमें साढ़े-तीन टन अलकोहल और पाँच टन तरल-आक्सिजन रखी हुई थी जिसकी पूर्ण मात्रा एक मिनट से थोडे अधिक समय में जल गयी ! इन टैंकों से ६५० अश्व-शक्ति वाले वरीवर्त जुडे हुए थे जिन्हें हाइड्रोजन-आक्सइड और पोटेशियम परमेगनेट से शक्ति मिलती थी, जो मिलकर भाप और आक्सिजन का एक बहुत तीव्र विकसित रूप उत्पन्न करते है। इन वरीवर्तो द्वारा ईधन एक प्रयोजनीय गति से दहन-कक्ष में पम्प किया जाता है। तरल आक्सिजन अगले छोर पर अठारह गुलाब-रूपी-तुडों[5] में से होकर दहन-कक्ष में प्रवेश करती है (चित्र ३१) जब कि अल्कोहल कक्ष के बाहर हर ओर ले जाया गया और बहुत सी प्रधारो के द्वारा कक्ष में इसका प्रवेश कराया गया। एक प्रकार के सूर्यमुखी-पहिये[6] द्वारा ईधन को प्रज्वलित किया गया। यह पहिया या चक्र दहन-कक्ष में रख दिया गया था और कुछ दूरी पर स्थित एक वैद्युत-सगलक[7] द्वारा इसे जलाया गया था।

मनुष्य द्वारा अभी तक आविष्कार किये गये इस अत्यधिक शक्तिशाली इंजन से, हमें कदाचित् राकेट-मोटर का एक प्रतिरूप मिल सकता है किन्तु इसमें कोई संदेह नहीं कि इसके निर्माण होने के दस वर्ष पश्चात् ही हम इससे बहुत आगे बढ चुके हैं।

रॉकेट का भविष्य

वह एक साहसी पुरुष होगा जो रॉकेट-मोटर द्वारा होनेवाले कार्य की सीमा निर्धारित करने का प्रयत्न करे, जब कि इसके व्यावहारिक उपयोग को अभी एक दशाब्द भी नहीं हो पाया है। यह स्पष्ट है कि इसके ईधनो पर अत्यधिक व्यय नहीं होगा क्योंकि तरल आक्सिजन काफी सस्ती है और इससे साधारण तरल ईधन जलाये जा सकते है।

1. Types 2. Performance 3. Directing 4. Fuel-tanks
5. Rose-nozzles 6. Catherine-wheel 7. Electrical-fuse

जब रॉकेट उच्च गति से उड़ता है तो इसकी कार्यक्षमता बहुत अधिक होती है किन्तु साधारण परिवहन के लिए यह गति बहुत ज्यादा है। इसके त्वरण और मार्ग-परिवर्तन से जो विकृति[1] उत्पन्न होंगी, उसका सामना करने में मानव प्राणी समर्थ होगा, इसमें सन्देह ही है।

इसी प्रकार अन्तर्ग्रहीय[2] यात्रा की प्रगति के बारे में भविष्य-कथन करना भी हास्यास्पद होगा; जिस साधन में आकाश-यान को शक्ति प्रदान करने की संभाव्यता है वह रॉकेट मोटर ही है, किन्तु २५० मील की उँचाई मे, जहाँ तक अभी पहुँचा जा चुका है, और चन्द्रमा की दूरी, २५०,००० मील, में बहुत अन्तर है। किन्तु यदि कोई मेरा तुच्छ मत जानना ही चाहता है तो मुझे विश्वास है कि यदि चंद्रमा तक पहुँचने से विश्व-युद्ध जीता जा सकता है तो पाँच वर्ष समाप्त होने से पहले ही कोई न कोई वहाँ पहुँच जायेगा; किन्तु जब तक राज्यों को अपने लाखों मनुष्यों से संबंधित कुछ और कार्य रहेगा, तब तक हम पृथ्वी पर ही रहेगे।

यह स्पष्ट है कि ऊपर की वायु में अनुसंधान करने का रॉकेट पहले ही एक बहुमूल्य साधन बन गया है। यह भी निश्चित है कि आगामी युद्ध का यह एक सर्वश्रेष्ठ शस्त्र होगा। इसका और भी बहुत कुछ परिणाम होगा, किन्तु वह क्या होगा, यह मैं नहीं कह सकता।

1. Strain 2. Interplanetary

अध्याय ११

नाभिकीय ऊर्जा

नाभिकीय ऊर्जा की उपयोगिता

विश्व की भविष्य की ऊर्जा-पूर्ति के बारे में प्रमुख प्रश्न यह है कि क्या परमाणवीय नाभिक[1] से किसी विशेष उपयोगी ढंग से या दूसरे साधनों की अपेक्षा कम लागत पर ऊर्जा का उत्पादन हो सकेगा ? प्रायोगिक[2] संयंत्रों[3] द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका है कि इस साधन से ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है और विद्युत्-ऊर्जा का उत्पादन करने में इसका उपयोग किया जा सकता है किन्तु, विशेष उद्देश्यों के अतिरिक्त, विश्व को कोयले या जलशक्ति से प्राप्त होनेवाली ऊर्जा की अपेक्षा अधिक महँगी ऊर्जा की आवश्यकता नहीं है; कोयला, यदि इसको प्राप्त करना सरल हो जाये, कदाचित् उतने काल के लिए और पर्याप्त होगा जितना कि सभ्यता का अभी तक बीत चुका है; जलशक्ति की उपलब्धि[4] अनन्त है यद्यपि इसका आकार सीमित है।

अतः नाभिकीय ऊर्जा के सम्बन्ध में पूछे जानेवाले प्रश्न ये है—

(१) क्या हम दूसरे साधनों की अपेक्षा परमाणवीय नाभिकियो से कम व्यय पर ऊर्जा के उत्पादन और इसका उपयोग करने की विधियाँ निकाल सकते है ?

(२) यदि नहीं, तो जो ऊर्जा इस प्रकार प्राप्त की जा सकती है क्या उससे दूसरे लाभ उठाये जा सकते हैं ? क्या इसके द्वारा वे कार्य किये जा सकते है जो दूसरे प्रकार की ऊर्जा नहीं कर सकती ?

नाभिकीय ईंधन

सारे द्रव्य की रचना परमाणुओं से हुई है और प्रत्येक परमाणु में इलेक्ट्रोनों की एक बाह्य घटा और एक केन्द्रीय नाभिक रहती है जो ऐसे कणों से बनी हुई समझी

1. Nucleus 2. Experimental 3. Plants 4. Supply

जा सकती है जिन्हें हम प्रोटॉन और न्यूट्रॉन कहते हैं। परमाणु का प्रायः पूर्ण संहित[1] नाभिक में होता है; पूर्ण परमाणु की तुलना में भी नाभिक का आकार अति सूक्ष्म होता है। इसके अवयव[2] प्रोटॉन और न्यूट्रॉन, अत्यन्त शक्तिशाली बलों द्वारा एक दूसरे से संयोजित रहते है। यदि सचमुच ही नाभिक की कोई रचना या स्वरूप[3] है तो अभी हमें इसका बहुत ही कम ज्ञान है। जब परमाणुओं की नाभिकियों में परिवर्तन होता है—विदारण[4] होता है या सयोजन[5] जिससे वे अपेक्षया हलकी हो जाती है, तो ऊर्जा का उत्पादन होता है। वास्तव में यह उनके संहित के कुछ भाग के ऊर्जा में परिवर्तित होने का परिणाम होता है। इस परिवर्तन का सूत्र है—ऊर्जा (अर्गों[6] में) $= १०^{२०} \times$ सहित (ग्रामों[7] मे)। यदि सहित का एक ग्राम ऊर्जा में परिवर्तित होता है तो इससे $१०^{२०}$ अर्ग पैदा होंगे अर्थात् २५,००० अश्व-शक्ति के एक इंजन द्वारा एक सप्ताह कार्य करने से उत्पादित ऊर्जा के बराबर।

अभी हम द्रव्य के किसी टुकड़े को ऊर्जा मे पूर्णतया परिवर्तित नही कर सकते किन्तु जो नाभिकीय परिवर्तन हम पैदा कर सकते है उनमें से कुछ में भाग लेनेवाले पदार्थों की अपेक्षा उनसे उत्पादित पदार्थ कुछ हलके होते है और सहित का जो थोड़ा अनुपात अदृश्य हो जाता है वह ऊर्जा की एक बहुत बड़ी मात्रा के रूप में प्रकट होता है।

परमाणवीय नाभिकियों को निश्चित संहित के कणों, न्यूट्रॉनों और प्रोटॉनों से बना हुआ माना जा सकता है किन्तु नाभिक का भार उतना नहीं होता जितना कि इसकी रचना करनेवाले न्यूट्रॉनों और प्रोटॉनों का था बल्कि (सिवाय हाइड्रोजन की नाभिक के) उसमें मापने योग्य कमी हो जाती है। नाभिक और प्रोटॉनो व न्यूट्रॉनो के भार का अन्तर इन कणो की बंधन[8]-ऊर्जा को व्यक्त करता है और इसे सहित-दोप[9] कहते है।

अत्यधिक स्थायी[10] नाभिकियाँ अत्यधिक बलों द्वारा संयोजित रहती है और उनका सहित-दोप भी सबसे होता है। अल्पतम स्थायी नाभिकियाँ अपेक्षया तुच्छ बलों द्वारा सयोजित रहती है और उनका सहित–दोष भी अपेक्षाकृत कम होता है। इसलिए यदि परमाणवीय नाभिकियों का विदारण या सयोजन करने से उनकी पुनर्व्यवस्था इस प्रकार की जा सके कि अधिक सहित-दोपवाली नाभिकियों की रचना हो सके (अर्थात् ऐसी नाभिकीयों की, जिनका भार अपेक्षया कम होता है) तो संहित का अवशेप ऊर्जा के रूप में प्रकट होगा।

1. Mass 2. Parts 3. Structure 4. Split 5. Combination
6. Ergs 7. Grammes. 8. Binding energy 9. Mass-defect 10. Stable

सरलतम उदाहरण जिससे कुछ मिलती-जुलती क्रिया हाल में ही पृथ्वी पर की जा चुकी है और जो तारो की ऊर्जा का मुख्य साधन है, ऐसा विश्वास किया जाता है, हाइड्रोजन का हीलियम मे तत्वांतरण[1] है।

हाइड्रोजन परमाणुओ की ४ नाभिकियाँ——→हीलियम की एक नाभिक
इनका भार है इसका भार है
संहित की ४'०३२ इकाइयाँ——→सहित की ४.००० इकाइयाँ

इस प्रकार संहित की ०.०३२ इकाई (हाइड्रोजन के पूर्ण सहित का ० ८ प्रतिशत) ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है।

यदि एक पौड हाइड्रोजन का हीलियम में रूपान्तर किया जाये तो विद्युत की १० करोड़ इकाइयों के तुल्य ऊर्जा का निकास[2] होगा। यदि ऊर्जा का यह निकास उष्मा के रूप मे प्रकट हो और एक कार्यक्षम शक्ति-केन्द्र[3] मे इसे विद्युत में परिवर्तित किया जाये तो एक टन हाइड्रोजन से (हाइड्रोजन की वह मात्रा जो ९ टन जल मे होती है) ग्रेट ब्रिटेन को एक वर्ष के लिए पर्याप्त विद्युत् प्राप्त होगी। सैद्धान्तिक रूप से हलकी नाभिकियो मे परिवर्तित हो सकनेवाली और ऊर्जा के रूप में संहित मुक्त करनेवाली केवल हाइड्रोजन नाभिकियाँ ही नहीं है; और व्यावहारिक रूप से तथा वर्तमान समय में दूसरे दो पदार्थ, यूरेनियम २३५ और प्लुटोनियम, ही केवल ऐसे पदार्थ है जिनके द्वारा यह क्रिया तीव्र गति और नियंत्रित रूप से की जा सकती है। इनसे उत्पादित ऊर्जा की मात्रा हाइड्रोजन से प्राप्त होनेवाली ऊर्जा की मात्रा के बराबर नहीं होती किन्तु यह प्रतीत होता है कि १० टन यूरेनियम से ग्रेट ब्रिटेन को एक वर्ष के लिए पर्याप्त विद्युत् प्राप्त हो सकेगी, यद्यपि इन दस टनों से ऊर्जा प्राप्त करने के लिए बहुत अधिक यूरेनियम को उपयोग में लाना पड़ेगा, भले ही यह खर्च न होगा।

किन्तु हम बहुत आगे जा रहे है; सर्वप्रथम हमें देखना चाहिए कि यूरेनियम से किस प्रकार ऊर्जा का विमोचन[4] हो सकता है—जो एक अत्यधिक कठिन कार्य है जिसका आंशिक हल भी वैज्ञानिक निपुणता और सहयोग की महानतम सफलता है।

नाभिकीय ऊर्जा का विमोचन

यूरेनियम नामक धातु जो असामान्य है किन्तु अत्यधिक दुर्लभ नहीं है, दो मुख्य प्रकार के परमाणुओं से बनी है। इसका अधिकांश यू-२३८ (यूरेनियम २३८) है जो ऐसे परमाणुओं से बना है जिनकी नाभिकियों में ९१ प्रोटॉन और १४७ न्यूट्रॉन होते

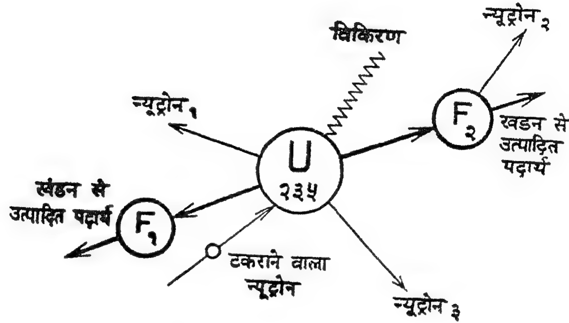
1. Transmutation 2. Evolution 3. Power station 4. Liberation

है। किन्तु इसका लगभग .०७ प्रतिशत अश यू-२३५ (यूरेनियम २३५) है जो ऐंसे परमाणुओं से बना हुआ है जिनकी नाभिकियों मे ९१ प्रोटॉन और १४४ न्यूट्रॉन होते है। यह दूसरी प्रकार का परमाणु, एक न्यूट्रॉन द्वारा टकराये जाने पर अधिक छोटे परमाणुओ में विदारित हो जाता है तथा इससे कोई तीन और न्यूट्रॉन और ऊर्जा की एक बड़ी मात्रा प्राप्त होती है। यदि दूसरे तत्त्व विद्यमान होते है तो उनकी नाभिक इन न्यूट्रॉनों को अवशोषित कर लेती है। यू-२३८ इस कार्य को कर लेता है और कुछ दूसरे तत्त्व तो इसे और भी अधिक सरलता से करते है। किन्तु, मान लीजिए कि यू-२३८ और दूसरे सभी तत्त्वों से पूर्णतया पृथक् हमारे पास यू-२३५ का एक भार है जिसका आकार ऐसा है कि इसके भीतर मुक्त हुए एक न्यूट्रॉन की, इससे पहिले कि यह बाहर निकल सके, इसके एक परमाणु से सफलतापूर्वक टकराने की संभावना है। ऐसी दशा में ये तीन न्यूट्रोन यू-२३५ के और तीन परमाणुओं से टकरायेंगे और उन्हे विदारित कर देंगे। इस प्रकार ९ न्यूट्रान मुक्त होंगे जो और ९ परमाणुओ को विदारित कर देंगे और इसी प्रकार यह क्रम चलता रहैगा। अतः इन परिस्थितियो मे एक सेकण्ड के अल्पांश में ही यू-२३५ न्यूट्रॉनों और दूसरे तत्त्वों के परमाणुओं मे विदारित हो जाता है जिनका भार प्रारम्भिक यूरेनियम के भार से कम होता है और ऊर्जा की एक बहुत बड़ी मात्रा उष्मा[१] और विकिरण[२] के रूप में विमोचित होती है। इसीलिए यू-२३५ को विदारणशील[३] या खडनशील[४] द्रव्य कहा जाता है। एकमात्र दूसरा खंडनशील तत्व जो अब कुछ मात्रा में प्राप्य है, प्लुटोनियम है जो परमाणवीय[५] पुंज[६] में कृत्रिम रूप से बनाया जाता है। ऊपर जिस प्रक्रम की व्याख्या की गयी है वह परमाणवीय बम[७] की प्रक्रिया[८] है; इस ऊर्जा को एक नियंत्रित गति और उचित लागत पर उत्पादन करना, यही वह समस्या है जिसे इंधन-विशेषज्ञों को हल करना है।

यू–२३८ और यू–२३५ को पृथक् करने की कठिनाई सचमुच ही वहुत बड़ी है। फिर यू–२३५ के बनाने में इतना श्रम लगाना पड़ता है कि दूसरा कोई भी पदार्थ इतना महँगा नही पड़ता। इसीलिए शुद्ध यू–२३५ का उपयोग किये बिना ऊर्जा का उत्पादन करने का प्रयत्न किया गया है, या यदि यह प्राप्य हो, तो इसी के द्वारा इसकी मात्रा को बढ़ाने और साथ ही साथ ऊर्जा उत्पादन करने का प्रयत्न किया गया है। ये

1. Heat 2. Radiation 3. Splittable 4. Fissile 5. Atomic 6. Pile
7. Atomic bomb 8. Mechanism

दोनों समस्याएँ हल की जा चुकी है, यद्यपि बहुत संतोषजनक ढंग से नहीं। वास्तव में अब हम एक ऐसी व्यवस्था बनाने योग्य हो गये है जिसमें नाभिकीय खंडन द्वारा नियंत्रित रूप से ऊर्जा उत्पादित होती है और जिसे न्यूट्रॉन-रिऐक्टर कहते है।



चित्र ३२—जब एक यूरेनियम २३५ के परमाणु की नाभिक विदारित होती है तो क्या होता है। जो ऊर्जा उत्पादित होती है, उसका अधिकांश नये परमाणुओं F, F_2 के संवेग से मिलता है।

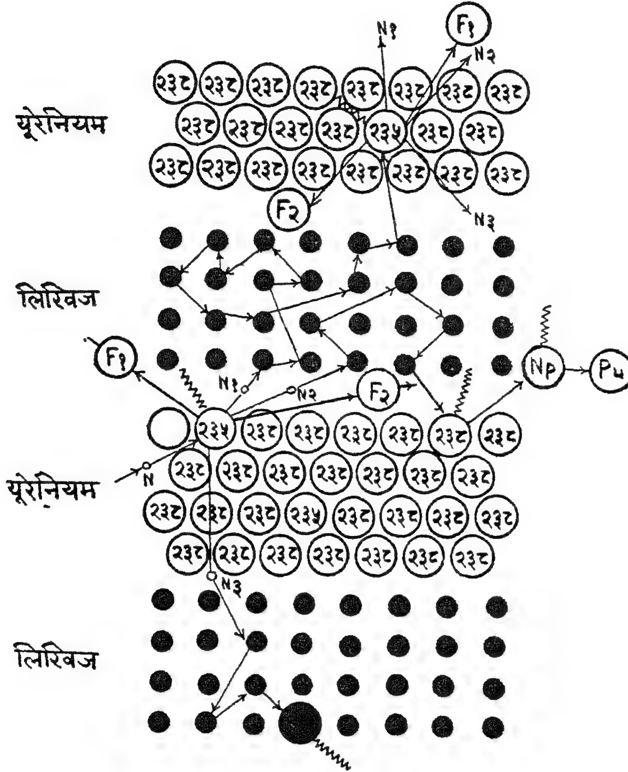
इससे पहिले कि यूरेनियम और इससे उत्पादित खंडनशील पदार्थों को किसी प्रकार उपयोग में लाया जाये, इसे और रिऐक्टर में उपयोग होनेवाली प्रत्येक वस्तु को इस हद तक शुद्ध करना होता है कि रसायनज्ञ[1] भी अभी तक उससे अनभयस्त है। अधिकतर तत्त्व न्यूट्रॉनों को अवशोषित कर लेते है जो कि रिऐक्टरों के कार्य करने का माध्यम होते है; कुछ, जैसे बोरोन और कैडमियम, उनको बड़े वेग से निगल जाते है। अतः इस कार्य का प्रारम्भ यूरेनियम अयस्क[2] को बहुत शुद्ध यूरेनियम में परिवर्तित करने से होता है जो कि इस्पात[3] जैसी भूरी और अत्यन्त भारी धातु है।

मन्द न्यूट्रॉन-रिऐक्टर

यूरेनियम में विद्यमान यू–२३५ के अल्पांश को जलाने का एक उपाय मंद रिऐक्टर है जिसमे यू–२३८ से पृथक् करने का व्ययसाध्य कार्य करने की आवश्यकता नही पड़ती। यह इस तथ्य पर निर्भर करता है कि जब कि यू-२३८ द्रुतगामी न्यूट्रॉनों को सरलता से अवशोषित कर लेता है, यह मन्दगामी न्यूट्रोनों का अवशोषण नही करता। अतः हम

1. Chemists 2. Ore 3. Steel

शुद्ध प्राकृतिक यूरेनियम के दंडो[1] का एक बड़ा ढाँचा बनाते हैं, जो शुद्ध लिखिज[2] के टुकड़ों के बीच मे दृढ़ता से आस्तरित[3] रहता है या भारी-जल[4] मे डूबा रहता है। ढाँचे का आकार निश्चित रूप से बडा होना चाहिए जिससे बाहर निकलनेवाले



चित्र ३३—मंद रिएक्टर में होनेवाली घटनाओं का प्रदर्शक रेखा-चित्र

न्यूट्रॉनो का अनुपात कम रह सके। अब मान लीजिए कि यू-२३५ की एक नाभिक से एक भूला-भटका न्यूट्रॉन टकराता है (चित्र ३३, N)। यह विदारित हो जाती है, ऊर्जा का निकास करती है और तीव्रता से, यों कहना चाहिए, तीन अधिक द्रुतगामी न्यूट्रोनों, N^1, N^2, N^3, को अपने भीतर से निकालती है। ये लिखिज

1. Rods 2. Graphite 3. Embedded 4. Heavy-water

मे कार्बन के परमाणुओं के संहित में प्रवेश करते है किन्तु उनसे संयोग नहीं कर पाते वल्कि उनसे प्रत्यास्थ-सघात[1] करने से ये क्रमशः मंद हो जाते है और तत्पश्चात् यू-२३८ की नाभिकियों से संयोग करने के योग्य नहीं रहते। कार्बन और यूरेनियम के आकार और स्थिति को उचित अनुपात मे रखकर, न्यूट्रॉनों की गति इस प्रकार मन्द की जाती है कि उनमें से कुछ (N^1) (चित्र ३३) पुंज के चारों ओर भटकते रहते है जब तक कि उनकी टक्कर यू-२३५ की किसी नाभिक से नहीं होती जिससे वे अधिक न्यूट्रॉनो को मुक्त कराते है जो अपनी बारी से विस्फोटन[2] करने के लिए यू-२३५ के और परमाणुओं की खोज करते है। दूसरे न्यूट्रॉनो को (N^2) यू-२३८ अवशोषित कर लेता है और इससे प्लुटोनियम की रचना होती है जो एक दूसरा विदारणशील तत्त्व है। कुछ दूसरे न्यूट्रोनों का (N^3) अवशोषण लिखिज या अशुद्धियों द्वारा होता है जब कि और दूसरे न्यूट्रॉन बाहर निकल जाते है। पूर्ण प्रभाव का फल यह होता है कि यू-२३५ के एक आकस्मिक साद्रित[3] विस्फोटन के स्थान पर, जो कि परमाणवीय बम में होता है, एक भवन जितने बड़े परमाणवीय पुंज के पूर्ण आकार से मन्थर और स्थिर रूप से ऊर्जा का निकास होता है। जिस वेग से परमाणु विदारित होते हैं और उष्मा का उत्पादन होता है वह न्यूट्रॉनो के प्रवाह पर निर्भर करता है। बोरोन या कैडमियम के दंडो को निवेषित[4] करके न्यूट्रोनों के किसी भी इच्छित अनुपात को अवशोषित किया जा सकता है और उसी के अनुसार प्रक्रम को मंद किया जा सकता है। पुंज में उत्पादित उष्मा की मात्रा बहुत अधिक हो सकती है किन्तु ताप को बहुत अधिक नही बढ़ने दिया जा सकता वरन् धातु के उस पट्टन[5] के नष्ट होने की संभावना रहती है जो अति प्रतिक्रियाशील[6] यूरेनियम की संक्षारण[7] से रक्षा करता है। पुंज में चक्रण करती हुई गैसों, सर्वोत्तम कार्बन डाइआक्साइड या हीलियम, द्वारा उष्मा का अवशोषण किया जाता है। अतः प्राप्त होनेवाली उष्मा बहुत उष्ण गैसो की उष्मा नही बल्कि निम्न श्रेणी की उष्मा होती है जिसे कार्य-क्षमता से शक्ति में परिवर्तित नहीं किया जा सकता।

मन्द न्यूट्रान-रिऐक्टर में और भी त्रुटियाँ है। परमाणुओं के खण्डन से अत्यन्त विकिरणशील[8] तत्त्व पैदा होते है जो स्वयं कुछ न्यूट्रानों का अवशोषण करते हैं और

1. Elastic collision 2. Explosion 3. Concentrated 4. Inserting
5. Plating 6. Reactive 7. Corrosion 8. Radioactive

परिणामतः कुछ कालान्तरो से यूरेनियम को हटाना तथा विशुद्ध करना पड़ता है और इन अत्यन्त खतरनाक उत्पादित तत्वों का व्यवस्थापन करना होता है और वास्तव में कोई ऐसा स्थान नहीं है जहाँ उनको रखा जा सके। इसके अतिरिक्त पुंज केवल यू-२३५ को ही जलाता है और इसकी मात्रा के अल्पांश के कम होने से ही पुंज की क्रिया रुक जाती है क्योंकि इस स्थिति में उत्पादित न्यूट्रॉनो की सख्या इतनी नही होती जो न्यूट्रॉनो के बाहर चले जाने, खडन से उत्पादित पदार्थों द्वारा अवशोषित होने, इत्यादि से होनेवाली हानि को पूरा कर सके।

मन्द न्यूट्रान रिऐक्टर मे स्पष्टतया ही बहुत बडी कठिनाइयों का सामना करना पडता है। निस्सन्देह ये कठिनाइयाँ हल की जा सकती है या इनकी जटिलता घटायी जा सकती है किन्तु अभी यह नही कहा जा सकता कि एक मन्द रिऐक्टर को बनाने और क्रियाशील करने में जो परिश्रम और सामग्री लगेगी वह इससे उत्पादित शक्ति के अनुपात में होगी या नहीं।

अभिजनक[1] रिऐक्टर

अभिजनक रिऐक्टर की प्ररचना[2], इसमें खंडनशील तत्त्व की जितनी मात्रा व्यय होती है उससे अधिक का उत्पादन करने के लिए की गयी है। इस प्रकार न केवल यू-२३५ को जलाया जा सकता है बल्कि अधिक प्रचुरता से विद्यमान यू-२३८ को और थोरियम को भी जो एक दूसरा भारी किन्तु अधिक मात्रा मे मिलनेवाला तत्त्व है। इसके प्रायोगिक प्रतिरूप[3] सफलतापूर्वक कार्य कर रहे है और इस समय ऐसा समझा जाता है कि अभिजनक रिऐक्टर द्वारा नाभिकीय ऊर्जा का सफल उपयोग हो सकेगा।

अभिजनक रिऐक्टर के दो भाग होते हैं, एक द्रुतगामी न्यूट्रॉन रिऐक्टर, जो यू-२३८ या थोरियम के एक मंजूषन[4] या 'कम्बल' से घिरा रहता है। द्रुतगामी रिऐक्टर में एक क्रोड[5] होती है जो एक खंडनशील तत्त्व, यू-२३५ या यू-२३५ को अधिक अनुपात में रखनेवाले यूरेनियम या प्लुटोनियम की बनी होती है जिसका आकार और रूप ऐसा होता है कि इसके ऊर्जा-विमोचन[6] मे निरन्तर किन्तु परमाणवीय बम में ऊर्जा-विमोचन की अपेक्षा बहुत धीमे-धीमे वृद्धि होती है; प्रतिक्रिया के अत्यधिक तीव्र होने या ताप को अत्यन्त उच्च होने से रोकने के लिए इसमें एक युक्ति[7]

1. Breeder 2. Design 3. Model 4. Casing 5. Core
6. Energy-release 7. Device

लगायी जायगी। यह कार्य नियंत्रण-दंडों द्वारा या खंडित होनेवाले तत्त्व के एक भाग को अवशेष से बाहर निकाल कर किया जा सकता है। क्रोड का आकार कदाचित् एक तरबूज के आकार के बराबर हो सकता है। इसमें यू-२३५ के परमाणु विस्फोटित होते है और न्यूट्रॉनो को पैदा करते है। यदि यह मान लिया जाय कि प्रत्येक परमाणु तीन न्यूट्रोन पैदा करता है तो संहित इस अनुपात में लिया जाता है कि क्रोड में औसतन एक न्यूट्रोन यू-२३५ के एक दूसरे परमाणु को खंडित करता है और क्रोड से दो न्यूट्रॉन निकलकर कम्बल मे पहुँचते है जो यूरेनियम–२३८ को प्लुटोनियम में परिवर्तित करते है। इस प्रकार यू-२३५ के खंडित होनेवाले प्रत्येक परमाणु के बदले में विदारणशील तत्त्व, प्लुटोनियम, के दो परमाणु बन जाते है। ये प्रतिक्रियाएँ क्रोड और "कम्बल" दोनो मे तीक्ष्ण उष्मा का उत्पादन करती है जिसे पृथक् करना और उपयोग में लाना होता है। वर्तमान योजना क्रोड के चारो ओर और कम्बल में बने मार्गो में से एक द्रव-धातु, पोटेशियम और सोडियम की एक मिश्र-धातु,[1] का चक्रण करने की है। श्रेष्ठ चालक होने के कारण यह धातु उष्मा को अवशोषित कर लेती है और इसे ले जानेवाले नल एक उष्मा-विनिमायक[2] से जुड़े रहते है जहाँ इस उष्मा को एक भाप इंजन के वाष्पित्र या एक गैस-वरीवर्त[3] के ऊर्जा के साधन के रूप में उपयोग कर सकते है। इन सब वस्तुओं को वेधी-विकिरण[4] से बचाने के लिए कंक्रीट के मोटे आवरण मे रखना पड़ता है।

जब प्लुटोनियम का विशिष्ट अनुपात "कम्बल" में एकत्र हो जाता है तो इसे हटाने के लिए रासायनिक प्रक्रमो का उपयोग करना होता है। यूरेनियम को कम्बल मे लौटाया जा सकता है और प्लुटोनियम का उपयोग क्रोड ही में हो सकता है। इस प्रकार अन्त में यूरेनियम की पूर्ण मात्रा प्लुटोनियम मे परिवर्तित हो जायगी, जिसके परमाणुओं को ऊर्जा पैदा करने के लिए विखडित किया जायेगा।

निस्सन्देह कठिन समस्याओ की एक बड़ी संख्या को हल करना होगा और कुछ किलोवाट का उत्पादन करनेवाले वर्तमान अभिजनक रिऐक्टर और भविष्य के नाभिकीय शक्ति-केन्द्र मे एक बड़ा अन्तर है। स्काटलैंड मे एक अधिक बड़े पैमाने पर प्रायोगिक संयंत्र बनाने की योजना है और संयुक्त-राष्ट्र-अमेरिका में उद्योगों द्वारा शक्ति के साधन के रूप में अभिजनक रिऐक्टरों की स्थापना पर गम्भीर विचार किया जा रहा है।

1. Alloy 2. Heat-exchanger 3. Gas-turbine 4. Penetrating radiations

नाभिकीय ऊर्जा के स्रोत के रूप में हाइड्रोजन

जैसा कि पहले भी चर्चा की जा चुकी है, तारों में ऊर्जा का मुख्य स्रोत हाइड्रोजन है, और पृथ्वी पर हाइड्रोजन बमो का विस्फोटन हो चुका है जो एक ऐसा तथ्य है जिससे पता चलता है कि इस स्रोत से भी ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। किन्तु वर्तमान हाइड्रोजन बम में साधारण हाइड्रोजन का उपयोग होता है, ऐसा प्रतीत नही होता, बल्कि हाइड्रोजन समस्थानको,[1] डियुटैरियम और ट्राईटियम, का उपयोग होता है। जल जैसे प्राकृतिक हाइड्रोजन योगिकों से बनाये हुए हाइड्रोजन के एक हजार अशों में लगभग पाँच अंश डियुटैरियम या भारी हाइड्रोजन के होते हैं। हाइ-ड्रोजन से डियुटैरियम को पृथक् करना और तत्पश्चात् परमाणवीय पुज में प्रविकिरण[2] द्वारा ट्राइटियम में परिवर्तित करना एक व्ययसाध्य प्रक्रम है। फिर भी हाइड्रोजन इतनी प्रचुर मात्रा में मिलता है कि डियुटैरियम का प्रदाय प्राय. अनन्त है और एक पौड यूरेनियम से पैदा होनेवाली ऊर्जा की अपेक्षा इसके एक पौड से हमें दस गुनी ऊर्जा प्राप्त हो सकती है। किन्तु अभी ऐसा कोई सकेत नही मिला है कि हाइड्रोजन या डियुटैरियम रिऐक्टर बनाया जा सकता है। फिर भी ऐसी आशा करना उचित ही है कि अगली अर्द्ध-शताब्दी में, और कदाचित् बहुत शीघ्र ही, मानवीय निपुणता इसे वनाने का कोई न कोई मार्ग खोज निकालेगी।

नाभिकीय शक्ति के उपयोग

अभी हम यह नहीं जानते कि नाभिकीय ऊर्जा कोयले, तैल, पवन और जल से मिलनेवाली ऊर्जा से कभी होड़ लेगी या नही। किन्तु यह प्रायः निश्चित है कि इस ऊर्जा के विशेष उपयोग किये जायेंगे। इस दृष्टिकोण से द्रुतगामी-न्यूट्रॉन रिऐक्टर एक अनोखी चीज है क्योंकि लम्बे काल के लिए इसे ईंधन के दुबारा प्रदाय की आवश्यकता नही होती। जलपोत और कदाचित् वायुयान इसके द्वारा अपने ईंधन के बोझ से छुटकारा पाने के योग्य हो सकेंगे; ध्रुव प्रदेशों जैसे एकलित स्थानों को इससे शक्ति मिल सकेगी; अन्तर्ग्रहीय[3] यात्रा के अनुरागियों का विश्वास भी इसी पर केन्द्रित है।

हम कदाचित् यह कह सकते है कि नाभिकीय शक्ति आज उसी स्थिति में है जिसमें भाप शक्ति १,७०० ई० मे या विद्युत्-शक्ति १८४० ई० में थी। अभी प्रविधियों[4] की खोज करनी है, किन्तु उस प्रगति को स्मरण करते हुए जिसमें अग्रसर रहना विज्ञान ने कभी वंद नहीं किया है, हम बड़े मूर्ख होंगे यदि हम उनके विकास की सीमा निर्धारित करें।

1. Isotopes 2. Irradiation 3. Inter-planetary 4. Techniques

अध्याय १२

वैद्युत शक्ति

विद्युत् के प्रभाव

जब एक वैद्युतधारा अर्थात् इलैक्ट्रोनों की एक धारा, द्रव्य के किसी टुकडे से प्रवाहित की जाती है तो यह कुछ लाभदायक प्रभाव उत्पन्न कर सकती है। इनमे से पहिला उष्मा है जैसा कि एक वैद्युत चूल्हे में देखने में आता है। दूसरा चुम्बकत्व[1] है जो वैद्युत-मोटर और विद्युत् द्वारा चालित प्राय: प्रत्येक मशीन में देखा जाता है। तीसरा प्रभाव जो द्रव्य के केवल विशेष ही रूपों में प्रकट होता है रासायनिक क्रिया है जिसका सर्वोत्तम उदाहरण एक विद्युल्लेपन-उष्मक[2] या एलूमीनियम का कारखाना है।

इस प्रकार विद्युत् एक साधन है और वह भी बहुत ही सुविधाजनक जिससे उष्मा और यान्त्रिक[3] ऊर्जा का उत्पादन हो सकता है; इसके द्वारा कुछ रासायनिक प्रभाव भी उत्पन्न किये जा सकते है। तात्पर्य यह है कि उष्मोर्जा,[4] यान्त्रिक ऊर्जा या रासायनिक ऊर्जा में विद्युत् का रूपान्तर किया जा सकता है; अतः विद्युत् को ऊर्जा का ही एक रूप होना चाहिए और स्वयं इसका उत्पादन भी ऊर्जा से ही किया जा सकता है।

ऊर्जा के दूसरे रूपो के असदृश, विद्युत् तारों में से सरलतापूर्वक संचरित हो जाती है, इस तथ्य के कारण बड़े पैमाने पर दूसरे साधनों द्वारा उत्पादित ऊर्जा का वितरण करने का विद्युत् एक आदर्श साधन है; इसलिए ऊर्जा के दूसरे रूपो को विद्युत् में परिवर्तित करना स्पृहणीय है।

विद्युत् के स्रोत

मनुष्य के उपयोग के लिए किसी भी प्राकृतिक प्रक्रम द्वारा पर्याप्त मात्रा में विद्युत् का उत्पादन नही होता, परिणामतः ऊर्जा के दूसरे जरियों से इसका बनाना अनिवार्य

1. Magnetism 2. Electro-plating bath 3. Mechanical 4. Heat-energy

है। विश्व की विद्युत् की अधिकतम मात्रा ईंधन और आक्सिजन की रासायनिक ऊर्जा से बनायी जाती है और अवशेष प्रायः पूर्णत. सूर्य द्वारा उद्वेलित[1] जल की स्थितिज[2] ऊर्जा से। अल्प मात्राओं में विद्युत् ऐसे पदार्थो की रासायनिक ऊर्जा से बनायी जाती है जिन्हें साधारणतया ईंधन नही कहा जा सकता जैसे बैटरियों का जस्ता। वहनीय[3] होने के कारण ये स्रोत सुविधाजनक है किन्तु इनसे ससार की उष्मा और शक्ति का केवल एक नगण्य भाग ही मिलता है।

अनुमान लगाया जाता है कि विद्युत् के पूर्ण उत्पादन का ६० प्रतिशत ईंधन से और ४० प्रतिशत जलशक्ति से व्युत्पन्न किया जाता है। अत. प्रथम स्रोत ही सबसे महत्त्वपूर्ण स्रोत है और कुछ दशाब्दों तक इसके ऐसा ही रहने की संभावना है, किन्तु समस्त संभावनीय जलशक्ति के पूर्ण विकास से, विद्युत् की उतनी मात्रा मिल सकेगी जो वर्तमान समय में उपयोग होनेवाली विद्युत् की मात्रा के बराबर होगी यद्यपि जहाँ इन दिनों इसकी माँग है उन्ही स्थानों मे इसका उत्पादन होगा, यह निश्चित नही है।

ईंधन से विद्युत् का उत्पादन

ईंधन से विद्युत् का उत्पादन करने के लिए यह आवश्यक है कि ईंधन को एक इंजन में जलाया जाये और इससे उत्पादित उष्मा को यांत्रिक ऊर्जा में रूपान्तरित किया जाये, तत्पश्चात् इस ऊर्जा को वैद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करना होता है।

इस उद्देश्य के लिए प्रामाणिक सयत्र एक वरीवर्त-जनित्र[4] है। सर्वप्रथम भाप का उत्पादन करना होता है जिसे करने में ईंधन की केवल लगभग ९ प्रतिशत ऊर्जा की हानि होती है। इसके पश्चात् वरीवर्त के भीतर भाप की उष्मा को यांत्रिक ऊर्जा मे परिवर्तित करना होता है और इसकी ३० प्रतिशत उष्मा को कार्य* में परिवर्तित कर लेना एक अच्छी औसत कृति है। तत्पश्चात् जनित्र में इसे विद्युत् में परिवर्तित करना होता है जो एक बहुत ही कार्यक्षम प्रक्रम है और जिसमें केवल २ प्रतिशत उष्मा की हानि होती है। सक्षेपतः यदि हम कोयले से विद्युत् का उत्पादन करना चाहते है तो हम कोयले की ऊर्जा के ७३ प्रतिशत को निम्न श्रेणी की उष्मा के रूप में खो देते है और इसके केवल २७ प्रतिशत को ही वैद्युत ऊर्जा में परिवर्तित कर पाते हैं। एक बहुत ही कार्यक्षम संयंत्र द्वारा जो अत्यधिक कार्य हो सकता है यह लगभग उतना ही है, किन्तु

1. Raised 2. Potential 3. Portable 4. Turbo-generator

*संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में एक नये सयंत्र द्वारा प्राप्त किया गया सर्वोत्तम अंक ३७ प्रतिशत है।

विद्युत् में परिवर्तित होनेवाली उष्मा का औसत अनुपात केवल २२ प्रतिशत के लगभग होता है और इसके दूसरे २-३ प्रतिशत की हानि उपभोक्ताओं को वितरण करने में होती है। यह उतना व्ययावह नही है जितना कि देखने में लगता है। यदि कारखानो या यातायात के लिए शक्ति पैदा करने के लिए छोटे भाप इंजनो मे कोयला जलाया जाये तो इसकी ऊर्जा का २७ प्रतिशत से भी बहुत कम अंश कार्य मे परिवर्तित होगा। अत यांत्रिक ऊर्जा प्राप्त करने के लिए विद्युत् अत्यधिक मितव्ययी साधनों में से एक साधन है। हाँ, विद्युत् का उपयोग उष्मा के अविरत प्रदाय के लिए अवश्य कम लाभदायक है क्योकि केन्द्रीय-तापन संयत्र को चलाने के लिए कोयला ७५ प्रतिशत या इसके लगभग की कार्यक्षमता से जलाया जाता है और विद्युत् इसके साथ होड़ नहीं ले सकती; फिर भी आन्तरायिक[1] कार्यो के लिए जैसे भोजन बनाने या घरेलू काम-काज मे, विद्युत् के प्रदाय को इच्छानुसार स्विच द्वारा बन्द करने की मितव्ययिता से वैद्युत उत्पादन की निम्न कार्यक्षमता की पर्याप्त मात्रा में हानि-पूर्ति हो जाती है।

शक्तिकेन्द्र[2] को कोयले के क्षेत्रों के निकट होना चाहिए क्योकि कोयले की अपेक्षा विद्युत् का परिवहन साधारणतया सस्ता होता है। इसे किसी नदी या नहर के भी निकट होना चाहिए जिससे संधारित्रो[3] को शीतल करनेवाले जल का एक स्रोत मिल सके; इससे नौकाओं द्वारा कोयले का लाना और राख का हटाना भी सम्भव हो जाता है।

सयंत्र बडा होता है और ५०,००० से ५००,००० अश्व-शक्ति[4] तक का उत्पादन कर सकता है। इस प्रकार उष्मा के मितव्ययी उपयोग के लिए वाष्पित्र-संयंत्र[5] मे प्रत्येक प्रकार के साधन[6] लगाये जा सकते है। उष्मा का वह अनुपात जो उपयोगी कार्य में परिवर्तित किया जा सकता है वरीवर्त में प्रवेश करनेवाली और उससे बाहर निकलनेवाली भाप के ताप के अन्तर पर निर्भर करता है। इसीलिए भाप को बहुत उच्च ताप और दाब पर, पानी के क्रान्तिक-बिन्दु[7] (३,००० पौड प्रति वर्ग इंच और ३६६ सें०) तक, उत्पादित किया जाता है और वरीवर्तो के भीतर से प्रवाहित किया जाता है, जो अन्त में घटाकर इसके दाब को आधे पौड प्रतिवर्ग इंच के लगभग और इसके ताप को संधारित्रों के ताप के बराबर कर देती है।

वरीवर्तो को जनित्रो से जोडा जाता है, जिन्हें शीतल करनेवाली वायु के प्रचुर प्रदाय की आवश्यकता है जिससे उन्ही के द्वारा उत्पादित उष्मा को हटाया जाता है जो कि उनके द्वारा जनित वैद्युत ऊर्जा के २ प्रतिशत या अधिक के निकट होती है।

1. Intermittent 2. Power-station 3. Condensers 4. Horsepower
5. Boiler-plant 6. Contrivance. 7. Critical point

समूचे उत्पादन-केन्द्र में कार्य करनेवाले मनुष्यों की संख्या बहुत कम होती है। नियंत्रण-कक्ष में बैठकर थोड़े से इंजीनियर ही विशाल, स्वच्छ और अपेक्षया शान्त मशीनों पर नियंत्रण रख सकते हैं।

शक्ति-केन्द्र की प्ररचना किसी भी प्रकार का इंधन जलाने की दृष्टि से की जा सकती है। बहुसंख्यक केन्द्रों में तो कोयले का उपयोग किया जाता है, किन्तु विशेप प्ररचनावाले भ्राष्ट्रों में लिग्नाइट या पीट को भी उपयोग मे लाना सम्भव है। इस प्रकार निम्न-श्रेणीवाले[१] ईधनों की ऊर्जा जिसका उपयोग उद्योगों में अत्यन्त असुविधाजनक है, थोडे से आवश्यक घाटे के साथ विद्युत् में परिवर्तित हो जाती है जो औद्योगिक उद्देश्यो के लिए ऊर्जा का अत्यधिक सुविधाजनक रूप है।

छोटे संयंत्रों में वरीवर्त-जनित्र के स्थान पर एक पश्चाग्र-पिस्टन[२] भाप-इंजन या एक डीजेल तैल-इंजन का उपयोग किया जा मकता है, किन्तु केवल वरीवर्त-जनित्र द्वारा ही उस विशाल शक्ति का उत्पादन हो सकता है जो बडे केन्द्र के लिए आवश्यक होती है।

इंधन-केशिकाएँ[३]

इंधन और वायु की रासायनिक ऊर्जा को उष्मा में, उष्मा को गति में, और गति को विद्युत् मे परिवर्तित करने के प्रक्रम की अक्षमता[४] के कारण ऐसा उपाय ढूढ़ निकालने के लिए बहुत गवेषणा[५] की गयी है जिससे यह रासायनिक ऊर्जा सीधे विद्युत् मे परिवर्तित की जा सके। यदि एक प्रकार की वैद्युत बैटरी बनायी जा सकती जिसमें कोशिकाओं की परिचित किस्मों में उपयोग होनेवाले जस्ते के स्थान पर इंधन के कार्बन का उपयोग किया जाता, तो सैद्धान्तिक रूप से केवल २७ प्रतिशत के स्थान पर इंधन की ऊर्जा का ४० से ४५ प्रतिशत तक विद्युत् में परिवर्तित हो जाता। इस प्रकार की इंधन-कोशिकाएँ बनायी जा चुकी है। इनमें से एक में जिसे बौर[६] कोशिका कहते है, कार्बन (इंधन) एक ठोस चालक के संस्पर्श में रहता है जिसमें मिट्टी से बँधी टंगस्टैन और सीरियम आक्साइडें होती है। यह फिर लोहे की चुम्बकीय आक्साइड के संस्पर्श मे रहता है। एक काफी ऊँचे ताप पर इस संयोजन[७] से विद्युत् उत्पन्न होती है किन्तु इसकी कार्यक्षमता केवल २ प्रतिशत के लगभग होती है। फिर भी इस इंधन केशिका

1. Low-grade 2. Reciprocating 3. Fuel-cells. 4. Inefficiency
5. Research 6. Baur-cell 7. Combination

को एक दिन सिद्ध किया जा सकता है और इधन की एक दी हुई मात्रा से अधिक विद्युत् उत्पादन करने का यह एक साधन बन सकती है।

जल-शक्ति से विद्युत् का उत्पादन

जलते हुए इंधन के अतिरिक्त, वैद्युत ऊर्जा का एक मात्र अन्य उपयोगी साधन हमें गिरते हुए जल की ऊर्जा से मिलता है।

सूर्य, पृथ्वी और समुद्र दोनो से ही समान रूप से जल का वाष्पण करता है। इससे संवहन[1] धाराएँ पवनो के रूप मे व्यक्त होती है जो कवोष्ण[2] और नम वायु को ऊँची तुगता[3] तक ले जाती है। सूर्य इसे शीत वायु के भार से मिश्रित करता है। जल वर्षा और हिम के रूप में संघनित हो जाता है और इसका वह अंश जो ऊँची भूमि पर गिरता है अन्त मे समुद्र मे जा पहुँचता है। ऊर्जा जल के भार और उसके गिरने की उँचाई से मापी जाती है।

जिन साधनों के द्वारा गतिमान जल से मशीनें चलायी जाती है उन्हें वरीवर्त[4] कहते है, जिनका वर्णन पहिले ही सातवे अध्याय में किया जा चुका है। उनकी प्ररचना इस प्रकार की जाती है कि वे स्वयं जल द्वारा गतिमान हो जाये किन्तु जल को गतिहीन बना दे और यदि यह उद्देश्य पूरा हो जाये तो उनकी कार्यक्षमता १०० प्रतिशत के लगभग होगी। बड़े पैमाने के संस्थापनों में वास्तविक कार्यक्षमता ८५ प्रतिशत और ९१ प्रतिशत के मध्य रहती है। सामान्यत: उच्च कार्यक्षमता वहीं प्राप्य होती है जहाँ जल का प्रवाह तीव्र होता है और यह स्वयं तभी सम्भव है जब कि शक्ति-केन्द्र पर जल ज्यादा ऊर्ध्वाधर[5] ऊँचाई से, ५० से ५,००० फुट तक से, गिरता हो। इसीलिए वरीवर्त्तो मे मन्द प्रवाह जल का फलप्रद उपयोग नही हो सकता और अमेज़न तथा मिसीसिपी जैसी विशाल धाराओं के समुद्र तट के निकटवाले फैलाव का विद्युत् के उत्पादन के लिए उपयोग नही हो सकता।

अत: एक जल-विद्युत्[6] केन्द्र के लिए ऐसे स्थान की आवश्यकता होती है जहाँ कभी समाप्त न होनेवाले जल-प्रदाय[7] को ५० फुट या अधिक की ऊँचाई से गिराया जा सके। जल जितनी अधिक ऊँचाई से गिरेगा, शक्ति की एक निश्चित मात्रा का उत्पादन करने के लिए उतने ही कम जल की आवश्यकता होगी। यही कारण है कि वही स्थान चुने जाते है जहाँ बड़ी नदियों में प्राकृतिक जल-प्रपात होते है या जहाँ

1. Convection 2. Warm 3. Altitude 4. Turbine. 5. Vertical
6. Hydroelectric 7. Supply of water

प्राकृतिक, या बहुत ढलान से गिरनेवाली नदियों पर बाँध बनाकर कृत्रिम पहाडी झीलें होती है। तो इससे यह परिणाम निकलता है कि एक समथल देश में कोई जल-शक्ति नही होती।

गिरते हुए जल की शक्ति पर कुछ भी व्यय नही होता; बाँधों और शक्ति-केन्द्रों पर आरम्भ में बहुत व्यय करना पड़ता है किन्तु उनकी अधिक देखरेख की आवश्यकता नही होती। परिणामतः ज्यों-ज्यों निर्माण करने में लगे हुए धन की पुनः प्राप्ति होती है जल-विद्युत्-केन्द्रों के निकट की औद्योगिक संस्थाओ को सचमुच ही बहुत सस्ती दर पर विद्युत् बेची जा सकती है। इस प्रकार युद्ध के पश्चात् बनाये गये एक आधुनिक जल-विद्युत्-केन्द्र से विद्युत् के उत्पादन की लागत एक यूनिट पर आधे पैसे से कुछ कम आती है जब कि कोयले से उत्पादित एक यूनिट पर एक पेस से कुछ कम आती है। ज्यों-ज्यों शक्ति-केन्द्र से उपभोक्ता की दूरी बढती है उसी प्रकार वैद्युत-प्रदाय का व्यय भी बढ़ता है। इस प्रकार शक्ति ले जानेवाले तारों पर अधिक व्यय होता है और उनकी देख-रेख भी आवश्यक हो जाती है तथा मार्ग में विद्युत् का काफी च्याव[1] हो जाता है। इसलिए अब यह व्यावहारिक नही है कि पहाडो में विद्युत् का उत्पादन किया जाये और १,००० मील दूर एक नगर को इसका संचरण किया जाये। प्रायः उद्योगों की प्रवृत्ति उन प्रदेशों को गमन करने की होती है जहाँ जल-शक्ति प्राप्य होती है। ये प्रदेश कच्चे पदार्थो के क्षेत्रों और जनसंख्या के केन्द्रों से असुविधाजनक दूरी पर हो सकते है और ससार की उपयोग हो सकनेवाली जलशक्ति का अधिकांश अभी तक अविक-सित है, इसका एक कारण यह भी है।

ग्रिड-पद्धति

विद्युत् योजना में कुछ समय पूर्व ऐसे ही चालक रहते थे जिनके द्वारा एक ही शक्ति-केन्द्र से बिजली का विकिरण होता था। आज अधिक से अधिक उपभोक्ताओं को अधिक से अधिक शक्ति-केन्द्रों से शक्ति देना एक सामान्य व्यवहार बन गया है। इस पद्धति के बहुत से लाभ हैं। किसी शक्ति-केन्द्र का उत्पादन बंद हो जाने पर शेष केन्द्रो द्वारा इसका भार उठाया जा सकता है। शक्ति के आन्तरायिक साधनों से प्रदाय को अशदान मिल सकता है। इसके अतिरिक्त देश के भिन्न-भिन्न भागों के शिखर-भार[2] भिन्न-भिन्न समय पर आ सकते है जिससे उनका औसत निकल आता है। अन्त मे, शिखर-भार के समय के अतिरिक्त शेष समयों पर अत्यधिक कार्यक्षम शक्ति-केन्द्र पर

1. Leakage 2. Peak-loads

उत्पादन का केन्द्रीयकरण संभव हो जाता है और इस प्रकार उनका चालन-व्यय न्यून-तम हो जाता है।

विद्युत् का संचरण

विद्युत् की बडी उपयोगिता का एक कारण यह है कि इसका संचरण सरलता से हो जाता है, किन्तु यह नही सोचना चाहिए कि इसके संचरण में कोई हानि नही होती। जहाँ कही यह किसी चालक से प्रवाहित होती है विद्युत् आवश्यक रूप से कुछ उष्मोर्जा की उत्पत्ति करती है। यह ऊर्जा C_2 Rt के समानुपाती होती है जहाँ C विद्युत् धारा है, R चालक का प्रतिरोध है और t विद्युत् धारा के बहने का समय। अत. उष्मा के रूप में वैद्युत ऊर्जा की हानि के अनुपात को कम करने के लिए वैद्युत इजीनियर का यह प्रयत्न रहता है कि विद्युत् धारा और प्रतिरोध[1] को जितना सम्भव हो कम रखा जाये।

विद्युत् की बहनेवाली मात्रा को विद्युत्धारा कहते है किन्तु वैद्युत ऊर्जा की मात्रा की माप—और इसी का उपभोक्ताओं को दाम चुकाना होता है—विद्युत्धारा और विद्युत्गामकबल[2] या विभव के गुणनफल से की जाती है। इसलिए एक मिलियन वाट ऊर्जा का संचरण करने के लिए एक मिलियन एमपीयर की विद्युत्धारा और एक वोल्ट विद्युद्गामक-बल का उपयोग किया जा सकता है या १,००० एमपीयर और १,००० वोल्ट या एक एमपीयर और एक मिलियन वोल्ट का। तापन-प्रभाव केवल एमपीयरो पर निर्भर करता है, वोल्टो पर नही। अत: इस तर्क से हमें ज्ञात होता है कि संचरण मे होनेवाली विद्युत् की हानि का अनुपात उस समय न्यूनतम होता है जब कि संचरण सम्भाव्य अत्यधिक वोल्टता[3] पर किया जाता है। किन्तु सम्भाव्य वोल्टता की भी सीमाएँ होती है। वोल्टता के बढने के साथ-साथ पृथक्कारियो[4] के ऊपर और हवा इत्यादि में से विद्युत् के च्यवन करने की प्रवृत्ति बढ़ती है, और संचरण मे ३२,००० से ४००,००० तक की वोल्टता का उपयोग किया जाता है। इतने अधिक तनाव पर विद्युत् का चरण केवल प्रस्तम्भो[5] से लटकाये गये शक्ति-तारो या बहुमूल्य उच्च-तनाववाले[6] केबिलो द्वारा हो सकता है। इसका उपयोग उद्योगों मे नहीं हो सकता, घरो मे तो और भी कम होगा। प्रथम उद्देश्य के लिए परिणामित्रों[7] द्वारा ४०० से ६०० वोल्ट पर और घरेलू कार्य के लिए २०० से २४० वोल्ट पर इसको

1. Resistance 2. Electro-motive-force 3. Voltage 4. Insulators
5. Pylons 6. High-tension 7. Transformers

अपचायी[1] किया जा सकता है। परिणामित्रों की कार्यक्षमता लगभग ९९ प्रतिशत होती है और उन्हें प्रदान की गयी वैद्युत-ऊर्जा का शेष एक प्रतिशत उष्मा में बदल जाता है।

हमारे सूत्र का दूसरा तत्त्व चालक का प्रतिरोध है। हमारे पास केवल धातु ही है जिनका उपयोग चालको के रूप में किया जा सकता है और उनमें सर्वोत्तम चाँदी, का प्रतिरोध काफी होता है। चालक की मोटाई जितनी अधिक होती है उसका प्रतिरोध उतना ही कम होता है; इसके विपरीत चालक जितना मोटा और परिणाम-स्वरूप भारी बनाया जाता है, उतना ही इसका और इसके आधारो का व्यय बढ़ जाता है। वास्तव में मुख्यतः उपयोग मे आनेवाले चालक ताँबा और एलूमीनियम है। यदि बराबर आयतन की तुलना की जाये तो द्वितीय प्रथम से बुरा चालक है किन्तु बराबर भार लेने पर एलूमीनियम ताँबे से अच्छा चालक सिद्ध होता है। यदि चालकों को अत्यन्त शीतल किया जाये, परम-शून्य[2] से केवल कुछ डिग्री अधिक तक, तो उनके प्रतिरोध में प्रचुर कमी हो जाती है। क्या इंजीनियर कभी अपने मुख्य चालकों को द्रव-हीलियम द्वारा ठंडा करने और इस प्रकार ऊर्जा की एक बडी मात्रा को एक छोटे चालक मे से प्रवाहित करने में सफल हो सकेगा, अभी हम यह नही कह सकते। वर्तमान स्थिति में यह मितव्ययी न होगा।

संक्षेप में, विद्युत् के संचरण में इसकी कुछ हानि होती है और उपभोक्ता तक पहुँचनेवाले तार जितने लम्बे होते है, उतना ही इस हानि का अनुपात बढ़ जाता है।

विद्युत् के उपयोग

किसी उद्देश्य-पूर्ति के लिए क्या विद्युत् ही ऊर्जा का सर्वोत्तम रूप है, यह विद्युत और ऊर्जा के दूसरे रूपो के व्यय पर निर्भर करता है। ससार के भिन्न-भिन्न भागों मे विद्युत् की लागत भिन्न-भिन्न होती है जैसे औद्योगिक उपभोक्ताओ के लिए एक पेस के दसवें भाग से एक पेस प्रति यूनिट तक। कोयले, कोक, गैस और तैल इत्यादि की लागत भी उनके या उनके कच्चे पदार्थो के उत्पादन और परिवहन की परिस्थितियो के अनुसार बहुत भिन्न-भिन्न होती है। इसलिए यह कहना प्रायः असम्भव होता है कि किसी विशेष कार्य के लिए विद्युत् का उपयोग अलाभदायक है जब तक कि कार्य-स्थान पर पायी जानेवाली परिस्थितियो का ज्ञान न हो। इसके अतिरिक्त हमें न केवल ऊर्जा की लागत का बल्कि किस मितव्ययिता से इसका उपयोग किया जाता है, उसका भी

1. Step-down 2. Absolute-zero

विचार करना होता है और यह एक ऐसी दिशा है जिसमें विद्युत् सर्वोत्तम है। इस प्रकार लन्दन में १९५३ ई० में विभिन्न साधनो से उत्पादित ऊर्जा की १००,००० ब्रिटिश-उष्मा-मात्रक[1] की लागत इस प्रकार है।

ऊर्जा की १००,००० ब्रिटिश-उष्मा-मात्रक की लागत
लन्दन, १९५३ ई०

कोयला ६ पौंड प्रति टन	५.४ पेंस
गैस १९.१ पेंस प्रति थर्म	१९.१ पेंस
विद्युत १ पेंस प्रति मात्रक	२९.३ पेंस

इस प्रकार कोयले से प्राप्त होनेवाली ऊर्जा वैद्युत-ऊर्जा की अपेक्षा पाँच-छः गुनी सस्ती है। किन्तु यदि हम जानना चाहें कि कोयले से उत्पादित अग्नि का उपयोग किया जाये या वैद्युत-तापक का, तो हमें याद रखना चाहिए कि कोयला-अग्नि की उष्मा का, यों कहिए, एक चौथाई भाग ही कमरे मे पहुँचता है जब कि वैद्युत अग्नि की पूर्ण उष्मा कमरे में पहुँचती है। फिर, वैद्युत या गैस-अग्नि का उपयोग केवल आवश्यकता होने पर ही किया जाता है जब कि कोयला-अग्नि सारा दिन जलती रहती है। अपेक्षया कौन सस्ती है, इसका सीधा उत्तर यह जाने बिना नही दिया जा सकता कि अग्नि का उपयोग किस ढग से किया जायेगा।

किन्तु कितने ही कार्य ऐसे हैं जिन्हें विद्युत् द्वारा किया जा सकता है, दूसरे इंधनों द्वारा नही। कालीन झाड़ने की मशीन को आप कोयले या गैस से नहीं चला सकते। इसी तरह कम शक्तिवाले मोटरो का क्षेत्र विद्युत् के लिए प्रायः सुरक्षित रखा गया है।

अतः हम देख सकते है कि कुछ कार्य ऊर्जा की लागत और उसके उपयोग की कार्यक्षमता के अनुसार विभिन्न इंधनों या विद्युत् द्वारा किये जा सकते हैं जब कि बहुत से कार्य केवल विद्युत् द्वारा किये जा सकते है।

उष्मा के स्रोत रूप में विद्युत्

उष्मा में विद्युत् का परिवर्तन पूर्व कथित नियम के अनुसार होता है। यह बात स्मरणीय है कि विद्युत् से प्राप्त होनेवाली उष्मा कोयले से मिलनेवाली उष्मा के बराबर सस्ती तभी हो सकती है जब कि विद्युत् की एक इकाई का मूल्य एक पेंस के छठवें भाग

1. British-Thermal-units

के लगभग हो। यह ऐसी दर है जो अभी जल-विद्युत्-केन्द्रों में भी सम्भव नहीं हो पायी है। परिणामतः विद्युत्-तापन केवल उसी समय उपयोग में लाया जाता है जब इसमें कोई विशेष लाभ दिखाई देता है।

उद्योग-धंधों में विद्युत्-तापन के उपयोग का पहिला कारण यह है कि किसी भी इंधन से जलाये गये भ्राष्ट्र की अपेक्षा इसके द्वारा बहुत अधिक उच्च ताप प्राप्त किया जा सकता है। गैस के एक पुनरुत्पादक-भ्राष्ट्र द्वारा १,३५० सें० तक पहुँचा जा सकता है किन्तु वैद्युत-भ्राष्ट्र का ताप प्रायः केवल उस उष्णता-सह[1] पदार्थ के गलन-बिन्दु[2] तक सीमित रहता है जिससे कि वह बनाया जाता है। इसी कारण वैद्युत-भ्राष्ट्रों का उपयोग लिखिज[3] और अपघृषों[4] को बनाने और प्लैटीनम तथा दूसरे उष्णता-सह (उष्मा-सह) धातुओ को पिघलाने के लिए किया जाता है।

फिर, विद्युत् द्वारा गरम करने में भ्राष्ट्र मे से उष्ण नाइट्रोजन और कार्बन डाई-आक्साइड की प्रचुर मात्रा को प्रवाहित करने की आवश्यकता नही होती। वास्तव में, इस प्रकार तपाने से भ्राष्ट्र-कक्ष[5] मे किसी वस्तु का प्रवेश नही होता। इसके दो गुण है। इससे गर्म होनेवाली धातु शुद्ध रहती है, क्योंकि उच्च तापो पर कितनी ही धातुओं और भ्राष्ट्र की गैसो में प्रतिक्रिया होती है। और इसमें धूममार्ग में से जाने-वाली गैसों द्वारा, जो कि एक पुनर्जनित्र[6] मे से प्रवाहित होने के पश्चात् भी अपने साथ उष्मा ले जाती है, उष्मा की हानि नहीं होती। अतः विशेष इस्पात जैसी मूल्यवान् धातुओं को विद्युत् द्वारा पिघलाना साधारण व्यवहार बन गया है। यह एक कार्बन-शलाका[7] से धातु पर और धातु से फिर दूसरी कार्बन-शलाका पर एक चाप[8] उत्पन्न करके किया जा सकता है या उष्मा स्वय धातु मे ही उत्पादित की जा सकती है। यदि एक घूर्णन[9] करते हुए चुम्बकीय क्षेत्र मे एक घड़िया[10] रखी जाये तो धातु में भँवर-धाराएँ[11] प्रेरित[12] हो जाती है और उनकी उष्मा ऊर्जा मे परिवर्तित हो जाती है। धातु पिघलती है और चुम्बकीय क्षेत्र का प्रभाव पिघली हुई धातु को जिसमें से विद्युत धारा बहती है, गतिमान कर देता है जिसके कारण धातु प्रबलता से विक्षोभित[13] हो उठती है।

स्कैंडीनेविया में जहाँ कोयला और कोक महँगे है और विद्युत् सस्ती है, वात-भ्राष्ट्रों[14] को विद्युत् द्वारा गर्म करने में लाभ रहता है और कार्बन की केवल उतनी

1. Refractory 2. Fusion-point 3. Graphite 4. Abrasives 5. Furnace-chamber 6. Regenerator 7. Carbon-rod 8. Arc 9 Rotating 10. Crucible 11. Eddy-currents 12. Induced 13. Stirred 14. Blast-furnaces

मात्रा का उपयोग किया जाता है जो लोह-अयस्क[1] का अवकरण[2] करने के लिए पर्याप्त होती है। तो यह कहा जा सकता है कि वैद्युत-भ्राष्ट्र द्वारा गरम करने का उपयोग बढ़ रहा है किन्तु यह अधिकतर बहुमूल्य पदार्थो से सम्बन्धित छोटी क्रियाओ के लिए ही उपयोग में लाया जाता है।

विद्युत् द्वारा तपाने से प्रायः सदैव श्रम की बचत होती है, क्योकि कोई विशेष दहन-कक्ष न होने से इसमे न अग्नि में इंधन झोकना पडता है और न इसे जगह की आवश्यकता है।

विद्युत् द्वारा घरेलू तापन उष्मा की एक मात्रक (इकाई) उत्पन्न करने की निस्सन्देह अत्यधिक महॅगी विधि है किन्तु वैद्युत-संस्थापनो[3] में साधारणतया ईधन-संस्थापनो की अपेक्षा एक ही कार्य को करने के लिए कम उष्मा की आवश्यकता होती है, क्योकि वैद्युत-तापन बड़ी सरलता से नियंत्रित किया जा सकता है। एक कमरे मे एक तापस्थापी[4] लगाया जा सकता है जो ६०° सें० या किसी दूसरे निश्चित किये हुए ताप के पहुँचने पर विद्युत् के बहने को बन्द कर देता है और ताप कम हो जाने पर विद्युत को फिर से प्रवाह देता है। दूसरे, अधिकतर साधनो में इंधन लगातार जलाना पडता है जब कि कमरा पहले ही गर्म हो चुका होता है। इंधन जलानेवाले अधिकतर साधनों को एक धूममार्ग की आवश्यकता होती है जिसमें से बहुत उष्मा बाहर निकल जाती है, पर बिजली पूर्ण उष्मा को वहीं उत्पन्न करती है जहॉ उसकी आवश्यकता होती है। जिस रसोई घर में एक गैस का चूल्हा[5] उपयोग मे लाया जाता है वह उस रसोई घर की अपेक्षा बहुत अधिक गर्म रहता है जिसमें वैद्युत-चूल्हे द्वारा वही कार्य किया जाता है। जहाँ तक रसोई बनाने का सम्बन्ध है, उष्मा की यह मात्रा व्यर्थ जाती है। लागत की तुलना तभी सम्भव है, जब कि उपयोग किये गये इंधनो की मात्रा और उनकी कीमत को हिसाब में लिया जाये। सामान्यतः विद्युत् द्वारा तापन पर अधिक व्यय होता है, किन्तु यह तथ्य कि यह और गैस-तापन दोनो ही साधारण उपयोग मे लाये जाते है, बताता है कि वैद्युत-तापन में हानि-पूर्ति करनेवाले लाभ भी है।

शक्ति के स्रोत के रूप में विद्युत्

शक्ति के स्रोत के रूप में विद्युत् लगातार कारखानों में भाप-इंजन और अन्तर्दहन-इंजन का स्थान ले रही है। एक केन्द्रीय इंजन से शक्ति-संचरण करने के लिए ईषा[6]

1. Iron-ore 2. Reduction 3. Electrical-installations 4 Thermostal
5. Gas-cooker 6. Shaft

और पट्टिका[1] की आवश्यकता न होना इसका सर्वोत्तम गुण है। यह अधिक खर्चीला और खतरनाक था और इससे मशीनों की तरतीब बहुत सीमित हो जाती थी क्योंकि ईषा के अनुसार ही मशीनें लगानी पड़ती थीं। आज हर मशीन मे इसका अपना एक वैद्युत-मोटर होता है जिसे इच्छानुसार चलाया या बन्द किया जा सकता है। दूसरी प्रकार के प्रथम-गति-कारकों[2] का उपयोग विद्युत् के उत्पादन, पम्पो के भारी कार्य, परिवहन और दूसरे बाह्य कार्यो तक जहाँ वैद्युत-प्रदाय प्राप्य नहीं है, अधिक सीमित होता जा रहा है। इससे उच्च कार्यक्षमता भी प्राप्त हो जाती है। इस प्रकार उपभोक्ताओं को मिलनेवाली विद्युत् शक्ति-केन्द्र में जलनेवाले कोयले की ऊर्जा का अधिक-से-अधिक २७ प्रतिशत होती है और इसका लगभग ८५ प्रतिशत लाभदायक कार्य मे परिर्वतित हो जाता है। इस प्रकार कोयले की ऊर्जा का लगभग २३ प्रतिशत कार्य में परिर्वतित हो जाता है। यदि कोयला एक छोटे भाप इंजन के वाष्पित्र[3] के नीचे जलाया जाये, तो इसकी उष्मा का कार्य में परिर्वतित होनेवाला अनुपात निश्चित रूप से २० प्रतिशत से अधिक न होगा। इस प्रकार विद्युत् के उपभोक्ता को एक उत्पादन-केन्द्र के अत्यन्त कार्यक्षम शक्ति-सयंत्र[4] के प्रायः सभी लाभ मिल जाते है। दूसरी किसी भी प्रकार की मशीनों की अपेक्षा वैद्युत मशीनों को नियंत्रित करने की सरलता के वर्णन करने का प्रयास करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

परिवहन के लिए विद्युत्

निस्सन्देह विद्युत् द्वारा यातायात का सबसे सस्ता साधन मिलता है किन्तु उपरि[5] चालको या विद्युतित[6] पटरियों की आवश्यकता होने के कारण, इसका उपयोग रेलवे और नगरो तक सीमित रह गया है। वैद्युत-रेलों में शीघ्र वेग-वर्धन और विमन्दन संभव होने से वे उपनगरीय[7] यात्रा का आदर्श साधन है।

यदि विद्युत् को अधिक अच्छे ढग से सग्रह किया जा सकता तो सडको के यातायात के साधनो के चलाने का यह आदर्श साधन होती। इससे धूमों[8] से छुटकारा मिलेगा, गतिवाहक-बक्सा[9] अनावश्यक हो जायेगा, और वेग-वर्धन वहुत सुधर जायेगा। दुर्भाग्यवश एक कार को १०० मील चलाने के लिए पर्याप्त संचायक-बैटरियों[10] का भार कार के भार से अधिक हो जाता है और एक शताब्दी की उपज्ञा[11] सीसा-

1. Belting 2. Prime-movers. 3. Boiler 4. Power-plant 5. Overhead 6. Electrified 7. Suburban 8. Fumes 9. Gear-box 10. Storage-batteries 11. Invention

सचायक[1] में कुछ अधिक सुधार नही कर पायी है। क्षारीय-संचायक[2] अपेक्षया हलके होते है और अधिक शीघ्रता से चार्ज किये जा सकते है किन्तु उनकी धारिता[3] कम होती है।

विकिरण[4] के लिए विद्युत्

प्रकाश उत्पन्न करना इधनों के अत्यन्त पुराने उपयोगों में से एक है। ज्वाला का उपयोग अभी तक प्रकाश के साधन के रूप में किया जाता है—रीति-रस्मों और आडे समय के लिए मोमबत्ती अभी तक जीवित है और नगरों में रहनेवाले जितना अनुमान लगाते हैं तैल-दीपों की संख्या उससे अधिक है। थोरिया और सीरिया की आक्साईडो से बनी गैस-दीपावार[5] अभी तक गलियों में उजाला करने और आधुनिक तैल-दीपों में उपयोग में लायी जाती है, किन्तु प्रकाश उत्पन्न करने का मुख्य साधन विद्युत् द्वारा मिलता है। प्रकाश उत्पन्न करने का तरीका बहुत ही कम कार्यक्षम है। एक मोमबत्ती की ऊर्जा का आधे प्रतिशत से भी कम अंश प्रकाश के रूप मे प्रकट होता है। वैद्युत तन्तु-दीप[6] द्वारा, उसको प्रदत्त की गयी ऊर्जा का, लगभग २.५ प्रतिशत प्रकाश में परिर्वातित हो सकता है जब कि कई प्रकार की प्रतिदीप्त[7] नलियाँ ७ प्रतिशत तक परिर्वातित कर सकती है। इस कारण चाहे वे प्रकाश-उत्पत्ति का सबसे सुहावना साधन न हों, किन्तु अधिक सस्ता साधन अवश्य है।

विकिरण के और बहुत से रूप, जैसे रेडियो-तरंगें,[8] पारनील लोहित[9] प्रकाश और ऐक्स-रे, केवल वैद्युत साधनो से ही उत्पादित किये जा सकते हैं, किन्तु क्योंकि इनके उत्पादन के लिए आवश्यक ऊर्जा की पूर्ण मात्रा बहुत थोड़ी होती है, शक्ति से सम्बन्धित पुस्तक के लिए उनकी चर्चा करना कदाचित् ही प्रासंगिक हो।

विद्युत् के रासायनिक प्रभाव

कुछ यौगिकों, विशेषकर अत्यन्त प्रतिक्रियाशील धातुओं के यौगिकों को विच्छेदित[10] करने का सर्वोत्तम साधन विद्युत् से ही मिलता है। यही कारण है कि एलुमीनियम-कारखाने पूर्णत. विद्युत्-शक्ति पर ही निर्भर करते है जब कि सारे संसार के क्षार[11] और क्लोरीन इसी ढंग से बनाये जाते हैं। सयुक्त-राज्य-अमेरिका में रासायनिक उद्योग अकेले ही वैद्युत ऊर्जा का सबसे बड़ा उपभोक्ता है।

1. Lead-accumulator 2. Alkaline accumulator 3. Capacity 4. Radiation 5. Gas-mantle 6. Filament 7. Fluorescent 8. Radio-waves 9. Ultra-violet 10. Decompose 11. Alkali

वैद्युत-उत्पादन में वृद्धि

आँकड़े,[१] जो दुर्भाग्यवश सम्पूर्ण नहीं हैं, दिखाते है कि संसार अपनी शक्ति का उपयोग विद्युत् के रूप में बढ़ा रहा है और हर तर्क से यह माना जा सकता है कि यह जारी रहेगा। इंग्लैड में यह परिवर्तन विशेष उल्लेखनीय हुआ है जैसा कि नीचे दी हुई सारिणी से विदित होता है।

वर्ष	उत्पादित विद्युत्, मिलियन किलोवाट घंटों में	खनित कोयला हजार टनों में
१९२५	६,६१९	२४३,१७६
१९३०	१०,९४७	२४३,८८२
१९३५	१७,९७१	२२२,२४९
१९४०	२९,२०४	२२४,२९९
१९४५	३७,५३३	१८४,७५८
१९५०	५४,९६५	२१६,३३९

स्पष्ट है कि कोयले का शीघ्रता से बढ़ता हुआ अनुपात वैद्यु-शक्ति में परिवर्तित किया जा रहा है। ऊर्जा के जो साधन आज उपयोग में लाये जा रहे है उनके सम्पूरक रूप में या उनका स्थान लेनेवाले चाहे जिन-जिन साधनों का—पवन-शक्ति हो, या ज्वारभाटा या नाभिकीय ऊर्जा का–प्रयोग क्यों न किया जाय, यह निश्चित दीख पडता है कि उद्योगों और घरों में कार्य करने के लिए विद्युत् का उत्पादन करने में ही उनका उपयोग किया जायेगा।

1. Statistics

अध्याय १३

घर में ईंधन और शक्ति

ईंधन और शक्ति के घरेलू उपयोग

निजी घरों में इंधन का प्रदाय, वह कोयला, कोक, गैस के रूप में हो या विद्युत् के रूप में, एक बहुत बडा उद्योग है और इंग्लैड में इसमें लगभग ६ करोड़ टन कोयला खप जाता है जो वहाँ खोदे गये कोयले के एक चौथाई से अधिक है। इसमें से बडी मात्रा गैस या विद्युत् के रूप में जलायी जाती है, किन्तु लगभग ३॥ करोड़ टन कोयले के रूप में, अधिकतर घरेलू अँगीठियों में जलाया जाता है। यह एक भारी अपव्यय का कारण है और ऐसा है जिसमें वहुत कमी की जा सकती है।

औद्योगिक सस्था में ऊर्जा का उपयोग जनता की सेवा करने और हिस्सेदारो के लिए लाभ पैदा करने के लिए किया जाता है किन्तु घरों में इसका उपयोग मुख्यत. गृहिणी को, जो गृह का संचालन करती है, संतोष देने के लिए किया जाता है। इसलिए वहुत से इंधनों और साधनो मे से किसी एक को चुनने का आधार उसके लिए यह कार्यक्षमता ही नही होती कि कुछ रुपयों में अधिक-से-अधिक कितनी उष्मा और शक्ति मिल सकती है बल्कि बहुत हद तक उसकी पसन्द इस परभी निर्भर करती है कि कार्य करने मे वे साधन कितने सक्षम है और उनको उपयोग में लाना कितना सरल है।

स्थान में गरमी पहुँचाने, पानी गर्म करने, भोजन पकाने और छोटी मशीनो को चलाने के लिए अपने घरों में हमें उष्मा और शक्ति की आवश्यकता होती है। छोटी मशीनो को केवल विद्युत् द्वारा चलाया जा सकता है, इसीलिए हर आधुनिक परिवार में विद्युत् की आवश्यकता होती है, किन्तु तपाने का कार्य विद्युत् द्वारा किया जा सकता है, या ठोस, द्रव या गैस इंधनों से जिनमें से प्रत्येक की कई किस्में हैं।

इन इंधनों के बारे में जानने योग्य कदाचित् पहली बात यह है कि हमें अपने पैसे के बदले मे कितनी उष्मा मिलेगी। यह जान लेना बहुत सरल नही है क्योंकि इनकी दर हर स्थान पर एक नहीं है, वे एक अनुपात में भी नहीं हैं और न ही एक व्यापारी

द्वारा बेचे गये इंधन, जैसे "लकड़ी", का उष्मीय-मान[1] दूसरे व्यापारी द्वारा बेचे गये इंधन के उष्मीय-मान के बराबर होता है। किन्तु नवम्बर १९५३ ई० में इंग्लैंड की होम काउन्टीज[2] में प्रचलित भाव पर एक पौड में भिन्न-भिन्न इंधनो की जो मात्रा मिल सकती थी वह इस प्रकार है।

इस इंधन पर एक पौड खर्च करने पर		थर्म की नीचे दी हुई मात्रा मिलेगी, यदि ंधन को पूर्णतया जलाया जाये
अंथ्रे साइट	९ पौड प्रति टन	४०
घरेलू-कोयला	६ पौड प्रति टन	४७
कोक	६ पौड प्रति टन	४७
इंधन-तैल	१ शि० १$\frac{३}{४}$ पेंस प्रति गैलन	३०
बोतल में भरी गैस	१ पौड ३ शि० में ३२ पौड	६
लकड़ी	४ पौड १० शि० प्रति टन	४०
पीट, ३५ प्रतिशत नमी, डबलिन के भाव के आधार पर	३ पौड १५ शि० प्रति टन	३६
नगर-गैस	१९.१ पेंस प्रति थर्म	१२
विद्युत्	१ पेंस प्रति मात्रक	८

किन्तु इससे भी किसी परिणाम पर नहीं पहुँचा जा सकता क्योंकि ग्राहक को यह भी सोचना है कि उसकी उष्मा का किस प्रकार उपयोग किया जायेगा। यदि कोक को एक मन्द-दहन[3] अग्नि में जलाया जाये तो इसकी उष्मा का लगभग २५ प्रतिशत कमरे में फैलेगा जब कि वैद्युत-अग्नि या विकिरक[4] से विद्युत् अपनी उष्मा का १०० प्रतिशत कमरे में फैलायेगी।

घरों में चीजें गरम करने के लिए संसार में प्रायः हर प्रकार के इंधन का उपयोग किया जाता है, फिर भी यहाँ हमें गाय के गोबर और ह्वेल मछली के तेल के उपयोग के आपेक्षिक गुणो की चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है (यद्यपि गाय के गोबर से भारतवर्ष की ७८ प्रतिशत आवश्यकता पूरी होती है), बल्कि हम अपने को उन्हीं इंधनों तक सीमित रख सकते है जिन्हें औद्योगिक देशों के रहनेवाले साधारणतया अधिक पसन्द करते है। कोयला और इससे उत्पादित पदार्थ, गैस और विद्युत् और इंधन-तैल उद्योग-विकसित प्रदेशों में रहनेवालों के द्वारा उपयोग में लाये जाते हैं और इस अध्याय में इन्हींकी चर्चा की जायेगी। दूसरे इंधनों, जैसे लकड़ी, पीट, बोतल में

1. Calorific value 2. Home counties. 3. Slow-combustion 4. Radiatior.

भरी गैस और मिट्टी के तेल के विशेष परिस्थितियो में विशेष लाभ हैं, किन्तु उनके बारे मे यहाँ और चर्चा नही की जायेगी।

जगह को तपाना

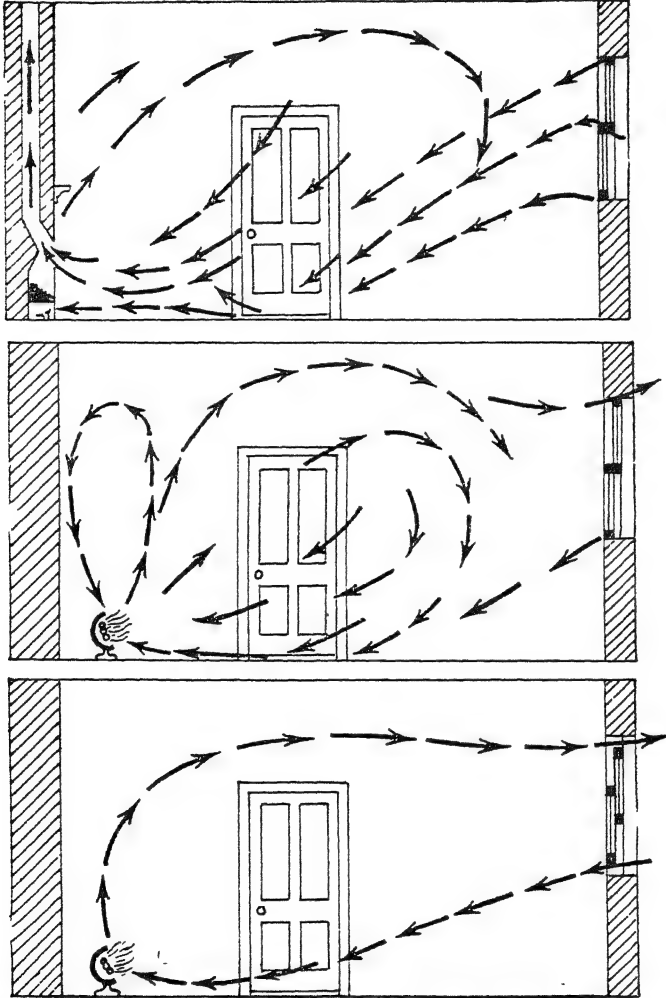
जगह को तपाने का सामान्य आशय घर में रहनेवालो को ऐसे ताप पर रखना होता है जिसे वे सुखप्रद समझते हैं। उष्मा-विकिरण को उनके ऊपर निर्देशित करके या वायु को गर्म करके या दोनों ही प्रकार से यह कार्य किया जाता है। इसमें व्यय होनेवाली उष्मा की अत्यन्त अल्प मात्रा ही घरो में रहनेवालो को गर्म करने के उपयोग मे आती है और एक अमेरिकन लेखक ने १०० पौड (१ मन ९ सेर) की दादी को तपाने के लिए १०० टनों के भवन को आवश्यकता से अधिक तपाने की बात कही है; अतः अपने से यह प्रश्न पूछते हुए कि सारी उष्मा कहाँ जाती है, हमें आरम्भ करना चाहिए। सर्वप्रथम, भवन के ढाँचे और उसके भीतर की वायु, दोनों का ही ताप बाह्य वायु के ताप से कुछ डिगरियो तक अधिक हो जाता है। इस प्रकार दीवारो और खिड़कियो का भीतरी भाग उनके बाहरी भाग से अधिक गर्म हो जाता है और उनमें से उष्मा का चालन होता है और इस प्रकार उष्मा भवन से बाहर भी चली जाती है। फिर भवन मे वायु का आवागमन नहीं रोका जा सकता, क्योंकि इसमें संवातन[1] का होना आवश्यक होता है। इस प्रकार कही-न-कही शीत वायु प्रवेश करती है और गर्म हो जाती है, जब कि गर्म वायु बाहर निकल जाती है।

तो स्पष्ट है कि मितव्ययिता के दृष्टिकोण से भवन की दीवारों को बुरा चालक होना चाहिए और भवन में केवल उतनी वायु का आवागमन होना चाहिए जितना कि स्वास्थ्य और सुख के लिए आवश्यक होता है। प्रायः ऐसे मकान की दीवारें जिसमे लोग रहते है कुछ सीमा तक कुचालक होती हैं, किन्तु बहुत से उद्योग-गृह जिनमें मनुष्य कार्य करते है, धातु के बने होते हैं जो उत्तम चालक है। एक बड़ी लोह-चादर निर्माण-शाला के भवन को तपाने के लिए उष्मा की आवश्यक मात्रा को, भवन के भीतरी भाग का धातुमल-ऊन[2] या किसी दूसरे बुरे चालक द्वारा पृथक्करण[3] करके, घटाकर एक तिहाई किया जा सकता है। एक साधारण भवन के बाह्य भाग में सर्वोत्तम चालक खिड़कियाँ होती हैं। वास्तविक रूप से ठंडे देशों में शीतकाल के लिए दोहरी खिड़कियाँ लगायी जाती है जिनके बीच की हवा की परत उष्मा के चालन को मन्द कर देती है।

वायु के चक्रण का नियंत्रण अपेक्षया बहुत अधिक कठिन है। खुली अग्निवाले

1. Ventilation 2. Slag-wool 3. Insulation

किसी भी कमरे की चिमनियों में से गर्म वायु निरन्तर और शीघ्रता से बाहर जाती रहती है और उसके स्थान पर द्वार के नीचे से या फर्श में पड़ी दरारों या खिडकियो मे से शीत



चित्र ३४—कमरों में वायु का चक्रण। ऊपर—कोयला-अग्नि। मध्य—बन्द खिड़की के साथ वैद्युत-अग्नि। नीचे—खुली खिड़की के साथ वैद्युत-अग्नि।

वायु प्रवेश करती रहती है। वायु के इस प्रवाह के बिना अग्नि जल ही नहीं सकती। तो कमरे में मनुष्यों को गर्म रखने के लिए पर्याप्त विकिरण मिल सके, इसलिए खुली अग्नि में इंधन की बहुत मात्रा का जलाना आवश्यक हो जाता है और साधारणतया ऐसा कमरा केवल अग्नि के निकट ही सुखकर होता है किन्तु वहाँ यह सचमुच ही सुखकर होता है क्योंकि वहाँ शीतल वायु के चक्रण के साथ उष्णता मिली रहती है। स्टोवों को खुली अग्नि की अपेक्षा बहुत कम वायु की आवश्यकता होती है क्योंकि इंधन के स्तर के ऊपर बहुत ही कम वायु प्रवेश कर पाती है। परिणामतः गर्म वायु की हानि कम होती है और मितव्ययिता अधिक। केन्द्रीयतापन, वैद्युत-अग्नि, वहनीय-विकिरक और तैल-स्टोव इत्यादि वायु को कमरे से बाहर जाने पर विवश नही करते और इसलिए उनमे ऊर्जा का और भी कार्यक्षम उपयोग होता है किन्तु उसीके अनुरूप वायुचलन और परिणामतः आराम में भी कमी हो जाती है।

रहने के कमरों के लिए तपाने के साधनों की पसन्द

एक पूर्ण मितव्ययी नागरिक अपना तापन का साधन निस्सन्देह पहले राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के हित मे और फिर अपना पैसा बचाने के विचार से चुनेगा और केवल अन्त मे वह इधन की प्राप्यता तथा अपने घराने की साधारण सुविधा का विचार करेगा।

जो मनुष्य समाज-सेवा के भावो से इतना पूर्ण हो कि अपने लिए तापन के साधन खरीदते समय देश की आवश्यकताओं पर विचार करे, उसे यह जानने में अभिरुचि होगी कि जो कोयला जलाने या कोक, गैस या विद्युत् में बदलने के उपयोग में आता है उसकी उष्मा का कितना अनुपात विभिन्न प्रकार के साधनों द्वारा उपयोग में लाया जाता है और यह नीचे दी गयी सारिणी में व्यक्त किया गया है।

साधन	उपयोग की गयी उष्मा का अनुपात
वैद्युत-अग्नि	२०
गैस-अग्नि, विकीर्ण	२३–२८
गैस-अग्नि, विकीर्ण संवाहक[1] के साथ	२८–३२
आधुनिक खुली अग्नि मे कोक संवाहक के साथ	४०–५०
कोक-स्टोव	६०–७०
कोयला-अग्नि, पुराने ढंग की	२०–३०
आधुनिक कोयला-अग्नि सवाहक के साथ	३५–४५
केन्द्रीय-तापन	७०

1. Convector

तापन के सामान्य साधनो के चलाने का व्यय एक सारिणी में नीचे दिया गया है। यह केवल सन्निकट (एप्रॉक्सिमेट) ही हो सकता है, क्योंकि यह नहीं सोचना चाहिए कि सभी स्टोवों या अँगीठियों की कार्यक्षमता बराबर है। इसके अतिरिक्त यह भी नही भूलना चाहिए कि गैस और विद्युत् जितना दीख पड़ते है उससे अधिक सस्ते है क्योंकि आवश्यकता न होने पर उनका प्रदाय बन्द किया जा सकता है—यह विशेष-कर उन वैद्युत विकिरणो के बारे में सत्य है जो तापस्थापी[1] द्वारा नियंत्रित किये जाते है। इस प्रकार यह देख पड़ेगा कि एक गैस-अग्नि और एक मन्द-दहन स्टोव पर बराबर ही व्यय आता है यदि प्रथम को पाँच या छः घंटे प्रति दिन जलाया जाये जब कि द्वितीय दिन-रात जलता है।

इन बातों को ध्यान में रखते हुए, उष्मा की एक ही मात्रा के उत्पादन की आपेक्षिक लागत को दिखाने के लिए नीचे दी गयी सारिणी का उपयोग किया जा सकता है।

पिछले कुछ वर्षो से गृहस्थ को एक दूसरी बात का भी विचार करना पड़ता है और वह है प्राप्यता। इंग्लैड में ठोस इंधन का कडा राशन किया जा चुका है, किन्तु विद्युत् और गैस का प्रदाय उसी समय सीमित किया गया है जब कि शिखर-माँग[2] प्रदाय से अधिक हो जाती है और बुद्धिमान् अँग्रेजों ने कोई भी इंधन न जलाने से महँगा इंधन जलाना अधिक अच्छा समझा है।

तापन के साधनों के चुनने के बारे में विज्ञान आपको जितना बता सकता है वह सब सचमुच इतना ही है और मुझे डर है कि आप न तो अत्यधिक मितव्ययी साधन चुनेंगे और न उसे चुनेंगे जो दिये हुए इंधन का सर्वोत्तम उपयोग करता है, बल्कि उसे चुनेंगे जिसमे अधिक-से-अधिक सुख और कम-से-कम श्रम का संयोग होता है।

साधन और इंधन	इंधन का भाव (१९५३)	आपेक्षिक लागत प्रतिघंटा
कोयला जलानेवाली खुली अग्नि	१२० शि० प्रति टन	६४
कोयला जलानेवाली गहरी द्रहन अँगीठी	१२० शि० प्रति टन	५५
केन्द्रीय तापन या कोक जलानेवाला बंद स्टोव	१२० शि० प्रति टन	५७
केन्द्रीय तापन या अंथ्रेसाइट जलानेवाला बन्द स्टोव	१८० शि० प्रति टन	४९
धूम-मार्ग के साथ गैस-अग्नि	१९.१ पेंस प्रति थर्म	११०
धूम-मार्ग बिना तापक गस	१९.१ पेंस प्रति थर्म	६६
वैद्युत अग्नि या दूसरा तापक	१ पेस प्रति मात्रक	१००

1. Thermostat 2. Peak-demands

जल गर्म करना

विभिन्न स्नानागारो, सोने के कमरों, शौचालयों और रसोईघरों में गर्म पानी के प्रदाय पर पिछले कुछ समय से बहुत विचार किया गया है। किसी भी स्थान पर किसी-न-किसी प्रकार नल ले जाना, रसोईघर मे जहाँ रसोई बनायी जाती है वहाॅ की अॅगीठी से पानी गर्म करना और यदि पानी गर्म न हुआ तो १५ शि० प्रति टन का और कोयला जलाना तथा नल की टोटी खोल देना, पुराना ढंग था। मेरे बचपन के जमाने में हर समय गर्म पानी मिलता था और मेरे पिताजी कोयले के बिलो पर बड़बड़ाते हुए कभी नही सुने गये।

किन्तु पिछले चालीस वर्षो से रसोईघर की अॅगीठी का उपयोग कम होता जा रहा है और पिछले पन्द्रह वर्षो से ठोस इंधन की कमी हो रही है; इसलिए गृहस्वामी को सोचना पडता है कि क्या वह निरन्तर गरम पानी का उपयोग कर सकता है और यदि कर सकता है तो इसका सर्वोत्तम साधन कौन है।

समस्या अधिकतर अपव्यय की है। अनुमान लगाया गया है कि एक औसत परिवार में प्रतिदिन ३५ गैलन गरम पानी का उपयोग किया जाता है। ३५ गैलन पानी को ४०° फा० से १४०° फा० तक गरम करने के लिए ३५,००० ब्रिटिश-उष्मा-मात्रक की आवश्यकता होती है। वास्तव में ब्रिटिश प्रमाप[1] एक ऐसा वाष्पित्र निर्धारित करते है जिससे ७०,००० ब्रिटिश-उष्मा-मात्रक प्राप्त किये जा सकते है—पहली मात्रा से दुगुना, जिसका अर्थ है कि उष्मा की आधी मात्रा, वाष्पित्र से पृथक्, गरम-जल-पद्धति में व्यर्थ व्यय होती है। इससे परिणाम निकाला जा सकता है कि एक अत्यधिक कार्यक्षम वाष्पित्र मे (७० प्रतिशत) एक टन कोक से आठ महीने का कार्य होना चाहिए। वास्तव मे, गरम-जल पद्धति की निन्दनीय प्ररचना के कारण बहुत से गृहस्थ इसे आठ सप्ताह भी नहीं चला पाते।

गरम जल का प्रदाय करने के दो मुख्य ढंग है, किसी केन्द्रीय स्थान पर जल गरम करना और फिर उसका वितरण करना या जहाॅ आपकी आवश्यकता हो, वहीं इसे गरम करना। पहला पुराना ढंग है।

१९१४ ई० के पूर्व बनायी गयी अधिकतर गरम-जल-पद्धतियों की प्ररचना अरुचिकर है। मेरे घर में, जब मैंने इसे खरीदा था, ऐसा उदाहरण था जो औसत मकानों में देख पड़ता है। इसमें एक सुविख्यात कारीगर का बनाया हुआ एक कोक-स्टोव है,

1. Standard

जो सम्भवतः दस वर्ष से अधिक पुराना नही है और जिसने निस्सन्देह रसोईघर की अँगीठी का स्थान ले लिया है। चर्चा करने योग्य वायु के दुबारा प्रवेश का इसमें कोई साधन नही है, इस कारण कार्वन-मोनोक्साइड की एक बड़ी मात्रा बिना जले चिमनी मे से निकल जाती है। इसमें राख हटाने की एक युक्ति है; निपुण भट्ठी झोंकनेवाला इसे सप्ताहों जला सकता था किन्तु मेरी पत्नी किसी वाष्पित्र-गृह में प्रशिक्षित नहीं हुई थी और एक सप्ताह के पश्चात् ही आधा दहन-कक्ष झाँवों से भर जाता है।

स्टोव से प्रथम चक्रण कितने ही गज लम्बे बिना ढँके नलों में से बरतन रखने की एक हवादार अल्मारी में रखे हुए गरम पानी के जलाशय तक की अपनी लम्बी-यात्रा[1] प्रारम्भ करता है। पहले इस जलाशय का पृथक्करण नहीं किया गया था और इसे भंडार की छत के निकट लटकाया गया था। हवादार एडवर्डियन ढंग के मकान के चारो ओर इसमें से नल जाते है। यदि शौचालय में मुझे एक चौथाई गैलन गरम पानी की आवश्यकता होती है तो मुझे नल में से ठंडा पानी निकालना होता है, और इसके स्थान पर जो गरम पानी आता है उसे कदाचित आधे हंड्रेड-वेट (लगभग सवा मन) लोहे को गर्म करना पडता है। इस प्रकार टोटी के गरम होने से पहले मुझे पाँच या छः क्वार्ट (१ या १½ गैलन) ठंडा और गरम पानी नल में से निकालना होता है। नल में लगभग चार क्वार्ट (एक गैलन) पानी रह जाता है जो मेरे टोटी बन्द करने के पश्चात् व्यर्थ में ठंडा होता रहता है।

निजी घर के केन्द्रीय गरम-जल प्रदाय की इन त्रुटियों मे से कई एक को मिटाया नहीं जा सकता, फिर भी उन साधनों का अध्ययन लाभदायक है जिनसे इस प्रक्रम की कार्यक्षमता बढायी जा सकती है।

आधुनिक गरम-जल पद्धति

आधुनिक गरम-जल पद्धति का आरम्भ वास्तुकार[2] के साथ होना चाहिए क्योंकि वाष्पित्र, जलाशय, स्नानागार और बेसिन इत्यादि का एक दूसरे के निकट होना, जिससे नलों में उष्मा की अनावश्यक हानि रोकी जा सके, केवल उसी के द्वारा सम्भव हो सकता है। वह नये कार्यक्षम वाष्पित्रो के अनुकूल एक धूममार्ग की भी व्यवस्था कर सकता है। पद्धति की एक उचित प्ररचना हो जाने पर, हमें एक कार्य-क्षम वाष्पित्र की आवश्यकता होती है। आज ऐसे बहुत से वाष्पित्र प्राप्य हैं जिनमें से कुछ की कार्य-क्षमता ७५ प्रतिशत तक पहुँचती है। सर्वप्रथम वाष्पित्र के पार्श्वो और

1. Odyssey 2. Architect

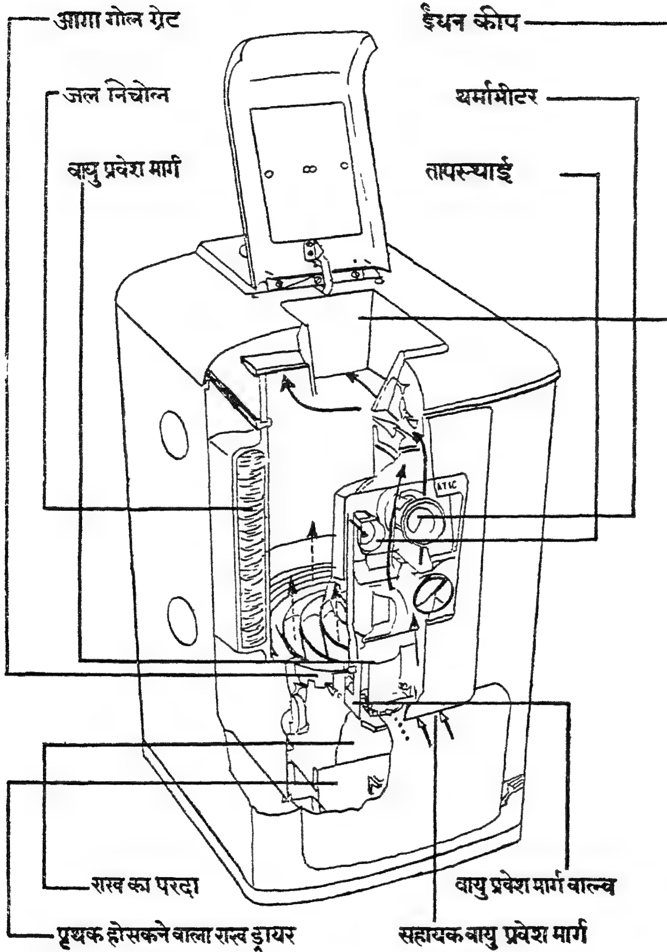
उसके ऊपरी भाग को आच्छादित करना चाहिए जिससे रसोईघर में उष्णता की बहुत कम मात्रा का च्याव[1] हो। यदि रसोईघर को वाष्पित्र द्वारा गरम करना है तो एक विकिरक लगाना चाहिए जिससे सर्दियों के अतिरिक्त कार्य करना बन्द किया जा सकता है। वायु के प्रदाय का ताप-स्थायी द्वारा स्वतः-नियमन करके इंधन को कार्य-क्षमता से जलाना सम्भव हो जाता है (चित्र नम्बर ३५ देखिए)। एक बार पानी गरम हुआ कि हवा का प्रदाय स्वतः कम हो जाता है; जब गरम पानी बह जाता है और ठंडा पानी उसका स्थान ले लेता है, तो हवा का प्रदाय स्वतः बढ़ जाता है। इस प्रकार पानी का आवश्यकता से अधिक गरम न होना और अग्नि का भी इतना गरम न होना कि वह राख को पिघलाकर झाँवा बना दे, निश्चित हो जाता है। फिर हिलानेवाली एक युक्ति के द्वारा अल्पतम ध्यान देकर राख हटाना सम्भव हो जाता है। साधारणतया वाष्पित्र में एक प्रकार की कीप[2] जैसी युक्ति होती है जिसे दिन मे एक या दो बार इंधन से भरना पड़ता है और जो गुरुत्व के कारण नीचे को दहन-स्थान पर पहुँचता है। इसमें उतनी वायु के दुबारा आने का प्रबन्ध रहता है जितनी कि निर्धूम इंधन से निकलनेवाली कार्बन मोनोक्साइड को जलाने के लिए आवश्यक होती है, किन्तु इसमें कोयला जैसे वाष्पशील पदार्थो के उत्पादक इंधनों का उपयोग करने की व्यवस्था नहीं हो सकती। अतः इन स्टोवों में से अधिकतर कोयले को कार्यक्षमता से नहीं जला सकते किन्तु वे एंथ्रेसाइट, कोक, कोलाइट इत्यादि से प्रशंसनीय ढग से कार्य करते है। साधारणतः उनके निर्माताओ द्वारा उनकी कार्य-क्षमता प्रकाशित होती रहती है और यह ७५ प्रतिशत तक पहुँच सकती है जो यंत्रशास्त्र की युक्तियो, से अनभिज्ञ मनुष्य द्वारा उपयोग किये जानेवाले एक छोटे संयंत्र के लिए अत्यधिक कार्य-क्षमता के निकट होती है।

वाष्पित्र से वे नल, जिनके द्वारा जल का आवागमन होता है, जलाशय तक पहुँचते हैं। इनकी लम्बाई कम होनी चाहिए और काँच-ऊन या ऐस्बस्टस जैसे पृथक्कारी पदार्थो द्वारा इन्हें अच्छी प्रकार लिपटे रहना चाहिए।

जलाशय की बनावट विलोम प्रकार की होनी चाहिए; अर्थात् आवागमन नलों का सम्बन्ध गरम किये जानेवाले पानी से घिरे हुए धातु के एक बेलन से होना चाहिए। वही पानी बार-बार वाष्पित्र में से गुजरता है इससे गरम करने पर कठोर जल से नीचे बैठे हुए केलसियम कार्बोनेट का निक्षेप वाष्पित्र के भीतर एकत्र नहीं हो

1. Leakage 2. Hopper

सकता। जलाशय को अचालकों से लिपटे रहना चाहिए; किन्तु जलाशय से टोटियों तक जानेवाले नलों को अचालकों से लपेटने से कोई अधिक लाभ नही होता जब तक



चित्र ३५. ऐगमैटिक वाष्पित्र

कि इससे बार-बार पानी न लिया जाये। गरम जल वाष्पित्र से केन्द्रीय-तापन करने का प्रयत्न साधारणतया अच्छा कार्य नही समझा जाता, क्योंकि इसके लिए ऐसा

वाष्पित्र लगाना पड़ेगा जो गरमी के अपने भार से इतना बड़ा होगा कि उसका पूर्ण उपयोग न हो सकेगा।

ठोस इंधन से हो सकनेवाला प्रायः यह सर्वोत्तम कार्य है। इस पर व्यय बहुत कम आता है, देखने में स्टोव अच्छा लगता है और इसको इंधन से भरने और राख हटाने में कोई विशेष कष्ट नही होता। फिर भी यह स्मरणीय है कि यदि घर मे एक डॉवाडोल और कार्य-अक्षम पुरानी उष्ण-जल पद्धति है तो उत्तम प्रकार का वाष्पित्र लगाने से आप कोई विशेष बचत नही कर पायेंगे।

दूसरा विकल्प यह है कि वाष्पित्र मे इंधन-तैल से अग्नि जलायी जाये। इस पद्धति में एक बड़ा गुण यह है कि लगातार कई सप्ताह तक इस पर ध्यान देने की आवश्यकता नही होती और इंधन-तैल का राशन भी नहीं किया गया है। इन संस्थापनों में बहुत सुधार किया जा चुका है किन्तु घरेलू रसोईघरों में इनका कुछ अधिक उपयोग नहीं किया जाता। हाँ, नानबाइयों, होटलों, दफ्तरों की पंक्तियो और शेष रहे बड़े घरों के वाष्पित्रों और तन्दूरो को जलाने के लिए इनका उपयोग बढ़ रहा है।

या फिर गृहस्वामी अपने पानी को गैस या विद्युत् से गरम करना अधिक पसन्द कर सकता है। गैस से जलनेवाले वाष्पित्रो में इंधन का अधिक व्यय होता है, किन्तु तापस्थायी द्वारा जिस सरलता से विद्युत् का नियंत्रण किया जाता है उसके कारण निमज्जन-तापक[1] लोक प्रिय बन गया है। तापक को जलाशय में लगाया जा सकता है और जब पानी ठंडा होगा तो यह उसे गरम करेगा किन्तु पानी गरम हो जायेगा तो यह स्वतः बन्द हो जायेगा। यदि जलाशय को अचालकों से अच्छी प्रकार लपेटा गया है तो उष्मा की कोई मात्रा व्यर्थ नही जायेगी; आधुनिक ठोस-इंधन से जलनेवाले वाष्पित्र की अपेक्षा गरम करने के इस ढंग पर अधिक व्यय आता है किन्तु इसका लाभ यह है कि इस पर किसी भी प्रकार से ध्यान देने की आवश्यकता नहीं है।

इस पद्धति का युक्तियुक्त परिणाम है एक वैद्युत-संचायक तापक[2], अचालको से अच्छी प्रकार लिपटा हुआ जलाशय और उसके साथ निमज्जन-तापक, जिसे स्नानालय या मोरी के ऊपर रखा जा सकता है और दूसरी टोटियों से नलों द्वारा जोड़ा जाता है। कार्यक्षमता १०० प्रतिशत के लगभग होती है और पानी सदा गरम रहता है किन्तु यदि इसमें उष्मा की कोई हानि न भी हो, तो भी इस पर सर्वोत्तम ठोस-इंधन पद्धति की अपेक्षा लगभग तीन गुना व्यय होगा।

1. Immersion-heater 2. Electric-storage heater

गेसर या उसके आधुनिक उन्नत रूपों की सहायता से पानी को गैस द्वारा गरम करने में यह सुविधा रहती है कि यह तभी कार्य करता है जब इसे खोला जाता है। इसमें दोष यह है कि इसे एक धूममार्ग की आवश्यकता होती है और जब पानी की थोड़ी मात्रा की आवश्यकता होती है तो इसकी कार्यक्षमता अधिक नहीं होती क्योंकि गरम पानी की थोड़ी मात्रा भी उपयोग करने से पहले सारी पद्धति को गरम करना पड़ता है और जब इसे बन्द करते है तो इसमें बची हुई सारी उष्मा व्यर्थ जाती है।

रसोई बनाने के लिए तापन

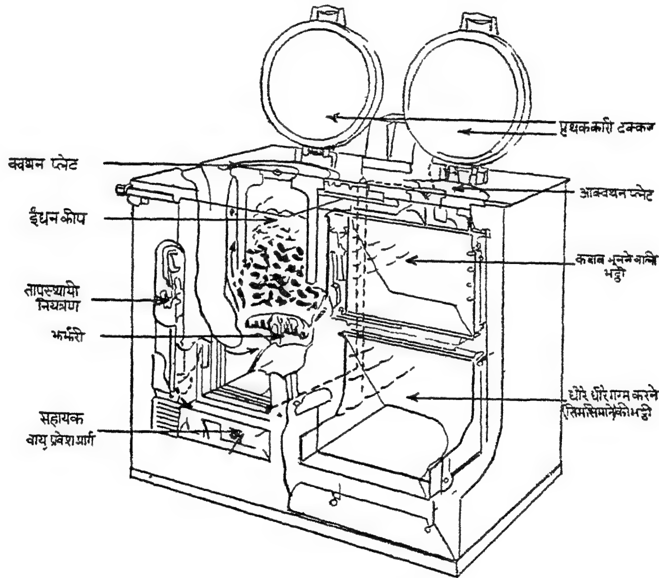
सर्वश्रेष्ठ गृहिणियो के दिन का अधिक भाग रसोई बनाने में लगता है। चूल्हा उनके कार्य का मुख्य साधन है और यह एक रोचक बात है कि जब कि मनुष्य एक अच्छी कार (सर्वोत्तम नही) के लिए २,००० पौड या अधिक दे सकता है, एक चूल्हे के लिए १०० पौड भी अधिक समझा जाता है।

चूल्हे की कार्यक्षमता का लेखा करना कदाचित ही सम्भव है, क्योंकि केवल भोजन द्वारा अवशोषित उष्मा का अनुपात अपेक्षया कम होता है। निश्चय ही, इसमे उष्मा का बहुत अधिक अपव्यय नहीं होना चाहिए; किन्तु इसका मुख्य गुण इसका अपरिमित रूप से व्यवस्थापन और इसमें उष्मा या धूम की अनुचित उत्पत्ति न होना है। निश्चय ही, कुशल रसोइये किसी साधन से भी भोजन बना सकते है—लकडी, लकड़ी का कोयला, या रसोईघर की खुली अँगीठी—किन्तु एक अच्छी प्ररचनावाले यंत्र द्वारा सहनशीलता की अधिक परीक्षा किये बिना ही, वे उतना ही अच्छा या उससे भी अच्छा भोजन बना सकते है। रेस्टोराँ[1] और दूसरे स्थान जहाँ रसोई वडे पैमाने पर बनायी जाती है, प्रायः गैस का ही इंधन के रूप में उपयोग करते है, किन्तु बड़े वैद्युत-चूल्हे भी लोकप्रिय होते जा रहे हैं।

घरेलू क्षेत्र ठोस-इंधन चूल्हो, गैस चूल्हों और वैद्युत चूल्हो मे विभाजित है। यह कहना कठिन है कि इनमें से कौन सबसे कम खर्चवाला है क्योकि रसोई बनाने मे कितना समय लगता है और किस प्रकार की रसोई बनती है, इस पर बहुत कुछ निर्भर करता है। ठोस-इंधन चूल्हों (चित्र नम्बर ३६ देखिए) में उसी सिद्धान्त से अग्नि जलायी जाती है जिससे ठोस-इंधन जल-तापक[2] में; अर्थात् एक ही दर से अग्नि जलाने और सरलता से राख निकालने के लिए उनमें तापस्थापी द्वारा नियंत्रित वायु-प्रवेश होता है। रसोई बनाने में इस सिद्धान्त का उपयोग करने में एक कठिनाई यह

1. Restaurant 2. Water-heater

आती है कि, जल-तापक के असदृश, चूल्हे का भार अस्थिर रहता है। जब रसोई नहीं बनायी जाती तो खर्च न बढ़ने देने के लिए जलने की गति बहुत कम होनी चाहिए; किन्तु यह सम्भव है कि स्टोव की गरम प्लेट पर देगची के रूप में अकस्मात् ही एक भारी भार रखा जाये या तंदूर में मांस का बड़ा टुकड़ा भूना जाये। गैस और विद्युत की भाँति इधन तुरन्त ही उस गति को नहीं बढ़ा सकता जिससे इसमें से उष्मा निकलती है क्योंकि ठोस-इंधन का गरम होना एक मन्द प्रक्रम है। कुछ चूल्हों में कड़ाही और तंदूर को उष्मा पहुँचानेवाले भागों को मोटी धातु का बनाकर नम्यता[1] की इस कमी की क्षति-पूर्ति की जाती है; इसमें उष्मा की एक बड़ी मात्रा संगृहीत हो जाती है और जब रसोई बनना आरम्भ होता है तब इससे उष्मा निकलती है और तापस्थापी द्वारा प्रदाय की गयी अधिक वायु के प्रभाव से इंधन जलता रहता है। ये ठोस-इंधन चूल्हे



चित्र ३६—आगा कुकर

पहले के किसी भी प्रकार के ठोस-इंधन चूल्हो से अधिक सुविधाजनक और मितव्ययवाले होते है। जहाँ गैस और विद्युत् प्राप्य नही होतीं वहाँ ये अमूल्य होते है और कुछ लोग

1. Flexibility

नों इन्हें गैस और विद्युत् के प्राप्य होते हुए भी अधिक पसन्द करते है। फिर भी गैस और विद्युत् चूल्हों की अपेक्षा, इनमे नम्यता की कुछ कमी रहती है और कबाव करने के लिए उच्च ताप की विकीर्ण उष्मा का साधन भी वे नहीं बन पाते। दूसरी ओर, इधन के दृष्टिकोण से वे बहुत मितव्ययी है और जहॉ बडी मात्रा में रसोई बनानी होती है वहॉ इंधन एक गम्भीर प्रश्न होता है। ठोस-इंधन चूल्हे और जल-तापक को एक ही यत्र मे मिलाया जा सकता है जिससे रसोईघर में संयत्रो की संख्या कम हो सके और ध्यान भी कम देना पड़े।

सैद्धान्तिक रूप से गैस चूल्हा नीली ज्वालावाले ज्वालकों[1] की एक श्रेणी है। क्षण भर ही में उपयोग में आने को तैयार हो जाना और उष्मा की कोई भी मात्रा लेने की व्यवस्था का होना, इसके बडे गुण है और रसोइये की दृष्टि मे इसके मुख्य लाभ यही है। गैस तन्दूरो मे, रैगूलो[2] युक्ति जैसे तापस्थापी लग जाने से, बहुत सुधार हो गया है जिससे कोई भी ताप स्थिर रखा जा सकता है। गैस चूल्हों के बारे में एक ही शिकायत रह गयी है कि यह धूम उत्पन्न करता है और इसकी सफाई करना कठिन है। इन धूमों से कोई हानि नहीं होती, इनमे कार्बन डाई आक्साइड, भाप और रसोई बनाते समय उत्पादित वाष्पशील पदार्थ होते है किन्तु ये रसोईघर को गरम और नम बना सकते है। रेस्टोराँ के रसोईघरों मे व्यर्थ के पदार्थों को हटाने के लिए एक टप और धूम मार्ग की व्यवस्था रहती है किन्तु निजी घरो में इन्हें बहुत ही कम लगाया जाता है।

गैस चूल्हा, इंधन चूल्हे की अपेक्षा, कमरे को अधिक गरम करता है क्योकि ठोस इंधन चूल्हे के दहन से उत्पादित पदार्थ धूममार्ग से निकल जाते है; यह वैद्युत-चूल्हे से भी अधिक गरम है क्योकि उससे गरम गैसे नही निकलती।

वैद्युत चूल्हे के अन्तिम सुधरे हुए रूप मे इसके पूर्व की बहुत ही कम त्रुटियाँ रह गयी है। सिमसिमाना-स्थापी[3] नियामक[4] द्वारा यह सम्भव हो गया है कि रसोई वनाने के ताप की सीमाओं के बीच गरम प्लेटो और तंदूर का कोई भी ताप नियत किया जा सकता है। तंदूर का बडा गुण यह है कि इसे पूर्णतः समावृत[5] और पृथक्कृत[6] किया गया है। पुराने प्रकार के वैद्युत चूल्हो में गरम होनेवाले अंशक[7] धातु की उन चपटी प्लेटो के नीचे गुप्त स्थानो में रखे जाते थे, जिनके ऊपर कड़ाही रखी जाती थी। कडाही की तली के चपटी न होने पर वायु की एक अल्प-चालक परत उष्मा को कड़ाही तक पहुँचने से रोकती थी। परिणामतः विशेष और बहुमूल्य

1. Burners 2. Regulo 3. Simmer-stat 4. Regulator 5. Enclosed
6. Insulated 7. Elements

कड़ाहियाँ उपयोग मे लानी पड़ती थीं जिनकी तलियों पर मशीनों द्वारा कार्य किया हुआ रहता था। आधुनिक चूल्हो में अंशक साधारणतया धातु की नलियो में रहते है जो रक्त-तप्त[1] हो जाती है और कड़ाहियों को उष्मा का विकिरण करती हैं, इसीलिए कड़ाहियों की तलियो का ठीक चपटा होना आवश्यक नही है। विद्युत् में बडी सरलता पूर्वक नियत्रित होने का लाभ है; इसी कारण आधुनिक चूल्हे मे समय की एक युक्ति लगायी गयी है जो मालिक की अनुपस्थिति में भट्ठी को जलाकर भोजन बनाना आरम्भ कर देती है।

वास्तव में बीसवी शताब्दी की कठिनाइयो के कारण घरेलू तापन-साधनों के सारे क्षेत्र का रूपान्तर हो गया है। दो युद्धो के परिणाम स्वरूप, गृहिणी अपनी रसोई स्वयं बनाती है और उसे अल्पतम इंधन मे बनाना होता है। विज्ञान और यंत्रशास्त्र[2] ने उसकी आवश्यकता को समझने का प्रयत्न किया है और रसोईघर को सचमुच एक निपुण शिल्पशाला बनाने के लिए जो कुछ सम्भव हो सका प्राय. वह सब उन्होंने किया है।

अमेरिका मे उच्च-आवृति[3] द्वारा रसोई बनाना उपयोग में आ रहा है। ऐसी तरंगों का उत्पादन सम्भव है जो वास्तव में बहुत अल्प तरंग-दैर्घ्यवाली[4] रेडियो तरंगें होती है और जो अधिकतर पदार्थो में से प्रवाहित हो जाती है और उनके अणुओ में कम्पन पैदा करके, उन्हें गरम करती है। भेड़ का एक पैर साधारण तदूर में बाहर की ओर से गरम किया जाता है और उसे पकाने के लिए लम्बे समय की आवश्यकता केवल इसलिए होती है कि उष्मा मध्य तक पहुँचानी पडती है। उच्च-आवृति तरंगे सारे खाने को, भीतर और बाहर, एक ही साथ गरम कर देती है और इसीलिए जिसे पकाने मे पहले घंटों लगते थे वह अब कुछ मिनटों ही में पक जाता है। कारखानो में सरलता से 'जलने'वाले पदार्थो को, अर्थात् जो बहुत कम ताप पर विच्छेदित हो जाते है, गरम करने या पिघलाने के लिए इस विधि का उपयोग होता है। इन तरंगो को उत्पादन करनेवाली वैद्युत-व्यवस्था गृहिणी को अत्यधिक जटिल लग सकती है किन्तु रेडियो और दूरवीक्षण[5] सेटो के साथ जो कुछ हुआ है, उसको स्मरण करते हुए हम आशा कर सकते है कि एक या दो वर्ष में इँग्लैड में उच्च-आवृत्ति द्वारा रसोई वनाना आरम्भ हो जायेगा। रसोई बनाने में समय कम लगने से आवश्यक ऊर्जा की मात्रा बहुत घट जायेगी यदि उच्च-आवृत्ति तरंगों की उत्पत्ति क्षमता से हो सकी।

1. Red-hot 2. Engineering 3. High-frequency 4. Wave-length
5. Television.

घर में शक्ति

घरों में शक्ति से चलनेवाली मशीनो का उपयोग वैद्युत युग की एक देन है क्योंकि केवल विद्युत् द्वारा ही छोटे और बिना कठिनाई कार्य करनेवाले मोटर चलाये जा सकते है। इंधन-प्रदाय की समस्याओ के साथ ये अधिक प्रसंगोचित नही है क्योंकि इनमें बहुत कम विद्युत् का उपयोग होता है। विद्युत् की एक इकाई एक अश्व-शक्ति के मोटर को कम-से-कम एक घंटा चलायेगी और घरेलू साधनों में लगे मोटर साधारणतया $\frac{1}{2}$ अश्व-शक्ति या इससे भी कम के होते है, और ऐसा बहुत ही कम होता है कि ऐसे दो मोटर एक ही साथ चलाये जायें। किन्तु इन श्रम बचानेवाले साधनों के कारण गृहिणी वहाँ रहने को अनिच्छुक होती है जहाँ विद्युत्-प्रदाय नही होता और यदि विद्युत् प्राप्य होती है, तो बड़ी सुविधाओं के कारण दूसरे कार्यो में इसका उपयोग करने की प्रवृत्ति रहती है। इसीलिए विद्युत् की घरेलू खपत बराबर बढ़ रही है। घरेलू और खेतों के अहातों मे विद्युत् का प्रदाय १९३१ से १९३६ तक दुगुना हुआ, फिर १९३६ से १९४४ तक दुगुना हुआ और एक बार फिर १९४४ से १९५० तक दुगुना हो गया।

घरों मे गैस की बिक्री १९४४ से १९५० तक केवल एक तिहाई बढ़ी है और कोयला तथा कोक की बिक्री में बहुत ही कम तबदीली हुई है।

अध्याय १४

मनुष्य और शक्ति

उद्योगों की उन्नति के लिए शक्ति का प्राप्य होना अत्यावश्यक है; संसार का कोई भाग औद्योगिक सभ्यता का केन्द्र बन सकता है या नही, यह शक्ति के प्रदाय द्वारा ही निश्चित होता है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि इस पुस्तक की समाप्ति स्थूल रूप से यह बताने की चेष्टा करते हुए करूँ कि किस प्रकार मनुष्य की सभ्यता की विशेषता, उसके महान् कार्य और विकास, शक्ति की प्राप्यता पर निर्भर करते रहे हैं और निर्भर करना क्यों आवश्यक है।

यह आदिम अवस्था की विशेषता है कि प्रत्येक मनुष्य अपनी शक्ति अपने ही स्नायुओं से प्राप्त करता है; बहुत पहिले ही मनुष्य ने घोडे और बैल के स्नायुओं की शक्ति मिलाकर इसमे वृद्धि कर ली थी। भोजन और चारा ही वे इंधन थे जिनसे शक्ति प्राप्त होती थी; लकडी और दूसरी वनस्पतियो तथा बहुधा सुखाये हुए गोबर से उष्मा मिलती थी। ऐसी परिस्थितियों में कोई महान् निर्माण नही हो सकता था।

सभ्यता के उषाकाल में थोडे से मनुष्यों ने बहुतों की शक्ति को नियन्त्रित करना आरम्भ किया और मिस्र के पुराने राज्य से लेकर रोमन साम्राज्य के पतन तक की शताब्दियों में जो महान् स्मारक चिह्न और बहुत बड़े-बडे कारखाने बनाये गये , वे दासों के स्नायुओ से प्राप्त ऊर्जा पर आधारित थे जिनके साथ मशीनो जैसा व्यवहार किया जाता था, जो अल्पतम भोजन को लाभदायक कार्य में परिवर्तित करते थे। अनेक बार यह पद्धति सैनिक प्रभुत्व पर निर्भर करती थी क्योंकि विजेताओं के लिए शक्ति संयंत्र[1] और मशीन के रूप में कार्य करने के लिए केवल इसीसे पराजितो की निरंतर उपलब्धि हो सकती थी।

पाश्चात्य संसार का क्रमशः ईसाई धर्म को अपनाना दास-प्रथा के ह्रास का एक मुख्य कारण बना। ईसाइयों ने एक दूसरे को दास बनाना बंद कर दिया। किन्तु

1. Power-Plant

पराजित देशों की आदिम जातियो को दास बनाने के लिए वे बहुत तत्पर रहते थे और उन्नीसवीं शताब्दी में ही ईसाई मत और उससे व्युत्पन्न प्रजातांत्रिक विचारधारा के कारण दास-प्रथा का विलोप हो सका।

किन्तु इससे बहुत पहले ही यूरोप मे जीवन का एक नया ढग, जो दासता या परतत्रता पर आधारित न था, पनप चुका था। मध्ययुग के उद्योग-धंधो मे जो शिल्पकार कार्य करते थे, वे स्वतत्र मनुष्य थे और उनके पास व्यय करने के लिए कोई मानवरूपी पदार्थ न था। अत. उन्होने ऐसे मार्ग खोजने आरम्भ किये जिनसे मनुष्य अपना उत्पादन वढ़ा सके और इस प्रकार अपने लिए प्राप्य वस्तुओ का वह और अधिक अंग पा सके। पहले यह मार्ग पनचक्की में मिला जो आरम्भिक मध्ययुग में लोकप्रिय हुई और अठारहवी शताब्दी के अन्त तक शक्ति का मुख्य साधन वनी रही। इन चक्कियो से पहले केवल अनाज पीसा जाता था किन्तु पन्द्रहवी शताब्दी मे इनका उपयोग खानों से पानी निकालने के लिए भी आरम्भ हुआ। इसी समय इन्ही कार्यो के लिए पवन-चक्कियाँ साधारण उपयोग मे आयीं। लोहारों द्वारा उपयोग मे आनेवाले भारी हथौड़ों से कार्य करने, आटा पीसनेवाले पहियो को चलाने और दूसरे वहुत से उद्देश्यों के लिए पानी द्वारा चलनेवाले पहियो से शक्ति मिली, किन्तु फिर भी उद्योगधंधों का यांत्रिकीकरण[1] धीरे-धीरे ही बढ़ा और शक्ति के साधनों के निकट जा बसने की प्रवृत्ति श्रमिकों में यदि हुई भी तो बहुत ही कम थी।

गरम करने के लिए इंधन की समस्या का हल होना अपेक्षया बहुत अधिक अवि-लम्बनीय था क्योंकि उद्योगधंधों में शक्ति का व्यय जितना कम किया जाता था, उष्मा उतनी ही बहुप्रद रूप से व्यय की जाती थी। धातुशोधन कार्य, चूना जलाने, काँच बनाने और मृत्तिका-उद्योग[2] सभी में इंधन की आवश्यकता थी। मध्यकाल मे और अठारहवीं शताब्दी तक लकडी और कोयला ही इंधन के रूप मे जलाये जाते थे। कोयले का उपयोग लकडी की अपेक्षा धीरे-धीरे बढ़ रहा था। इस प्रकार काँच बनाना जंगलों का उद्योगधंधा वना; काँच बनानेवाले इंधन के लिए पेड जलाते थे और लकड़ी की राख को अपने काँच मे एक अंश के रूप में उपयोग करते थे। जब किसी क्षेत्र में जंगल समाप्त हो जाते, वे वहाँ से चले जाते थे। जल-मार्गके सिवा भारी पदार्थो का परिवहन वहुत कठिन था, और उष्मा का उपयोग करनेवाले उद्योगधंधे प्रायः ऐसे स्थानो की खोज में रहते थे जहाँ लकड़ी और उनके व्यवसाय के लिए

1. Mechanization 2. Ceramics

आवश्यक खनिज पदार्थ साथ-ही-साथ मिलते हो (जैसे उदाहरण के लिए ससेक्स के लोहे के कारखाने); यदि ऐसा स्थान न मिलता था तो उनकी प्रवृत्ति ऐसे स्थानों मे बसने की होती थी जहॉ जल द्वारा परिवहन सम्भव होता था और सामान जहाजो द्वारा लाया जा सकता था। यही कारण है कि तेरहवी शताब्दी मे ही न्युकेसिल से कोयला जहाजो द्वारा लन्दन लाया जाता था और रंगरेजों, तथा चूना जलाने, मदिरा बनाने, धातु का कार्य और इसी प्रकार के दूसरे पेशे करनेवालो द्वारा उपयोग में लाया जाता था।

इग्लैड में लकड़ी नित्य अधिक दुष्प्राप्य होती गयी और सोलहवी शताब्दी के पश्चात् उद्योगपति कोयले के महत्त्व से बराबर अभिज्ञ होते गये। अठारहवी शताब्दी में समृद्धि के बढ़ने और बुने हुए कपड़े के लिए नये बाजारों के प्राप्त होने से अधिक उत्पादन की आवश्यकता हुई। इसलिए कपड़ा बुनने की मशीनों की प्ररचना ऐसी की गयी कि वे यांत्रिक शक्ति द्वारा चलायी जा सकें जिसका अर्थ उन दिनों पनचक्कियाँ थीं। यही कारण है कि कपड़ा बुनने के कारखाने यार्कशायर और लंकाशायर की घाटियों की तीव्र-प्रवाह नदियों के किनारे स्थापित हुए और लोगो ने नये कारखानों के निकट जाकर बसना आरम्भ किया जहाँ कि उनको जीविका मिलनेवाली थी। शीघ्र ही भाप-इंजन को जिसका उपयोग पहले ही पम्प करने में हो रहा था, इस प्रकार संपरिवर्तित[1] किया गया कि वह कपडा बुनने के कारखानो की मशीनों को चलाने योग्य बन गया और औद्योगिक क्रान्ति का प्रारम्भ हुआ। मशीने बनाने के लिए लोहे और लोहा बनाने तथा भाप इंजनो के वाष्पित्रो में अग्नि जलाने के लिए कोयले की आवश्यकता हुई; अतः जहाँ कोयला मिला और जहाँ, जैसा कि यार्कशायर में, लोह-प्रस्तर[2] भी था, वहाँ एक बडा औद्योगिक क्षेत्र बन गया। इस प्रकार उन्नीसवी शताब्दी मे इग्लैड में ही नही बल्कि दूसरे देशो में भी, उद्योगधंधों का केन्द्र जगलो और बन्दरगाहो से हटकर कोयले के क्षेत्रों में आ गया। काले देश, चाहे वे समुद्र से दूर और उत्तर में थे, या रुहर[3], सार[4] या पिट्सबर्ग मे, सभी जनसंख्या और सम्पत्ति के केन्द्र बन गये।

१८८० ई० के लगभग डाईनेमो के आविष्कार का प्रभाव प्रारम्भ हुआ। विद्युत का उत्पादन और प्रदाय होने लगा। इंग्लैड मे विद्युत् सर्वप्रथम केवल प्रकाश उत्पन्न करने का एक सुविधाजनक साधन थी। फिर १९०० ई० से पहले के दशाब्द में इससे

1. Modified 2. Ironstone 3. Ruhr 4. Saar

ट्रामें चलायी जाने लगी और इस प्रकार सड़को पर पहला सस्ता यातायात का साधन मिला। श्रमिकों को, जो कि कारखानों के आस-पास की अत्यधिक घनी बस्तियों की भयानक परिस्थितियो में पशुओ की भॉति रखे गये थे, कार्य करने के स्थान से दो या तीन मील दूर रहने का अवसर मिला और उनकी एक बडी संख्या के निवास में परिवर्तन हुआ। विद्युत् ने जल-शक्ति को उसके पहले महत्त्व को पुनः प्राप्त करने के योग्य बनाया। १८८० ई० से पहले जल-शक्ति के उपयोग का अर्थ तीव्र-प्रवाह धारा के किनारे एक शिल्पशाला का निर्माण करना होता था और ऐसे मिल से प्राप्त होनेवाली शक्ति बहुत ही कम होती थी। किन्तु १८८१ ई० मे न्यागरा प्रपात की महायोजना का प्रारम्भ हुआ। शीघ्र ही चकित करनेवाले निम्न व्यय पर विद्युत् का उत्पादन होने लगा और एक बार फिर, और अपेक्षा या अधिक बडे पैमाने पर, लोग उन क्षेत्रो में जाकर बसने लगे जहॉ जल-शक्ति प्राप्य थी।

इसी बीच विद्युत् शक्ति का वितरण करने का एक सामान्य साधन बन गयी, और इॅग्लैड में, लगभग १९१४ ई० से यह क्रमशः मशीनो को चलानेवाली शक्ति का नियमित साधन बनती गयी।

अब उद्योगधधे रेल की पटरियो या नहरों के किनारे जहॉ उन्हें कोयला मिलता था, सीमित नही रहे। छोटी मशीनोवाले उद्योग-धंधों की प्रवृत्ति कोयले के क्षेत्रों से हटकर दूर ऐसे प्रदेशों में बसने की हुई जहाँ भूमि सस्ती थी। पट्टिका[1] और ईपा[2] के स्थान पर पृथक्-पृथक् वैद्युत मोटरो के उपयोग, और इसके परिणाम स्वरूप एक बडे 'मिल' के स्थान पर एक दूसरे से बहुत दूरी पर बनाये गये एक-एक मंजिल के शिल्पशाला-भवनों के बनाने की प्रवृत्ति से, शिल्पशालाओं में रक्षा, प्रकाश और संवातन[3] में भारी सुधार हुआ। आज यद्यपि हमें इंधन और शक्ति के साधनों में समृद्धि की भीड़-भाड दिखाई नहीं देती, फिर भी समृद्धि अभी तक उनको घेरे हुए है। कोयले के क्षेत्रों में और उनके निकट, भारी उद्योगधंधे और कोयले से चलनेवाले शक्ति-केन्द्र फैल गये है। इनका परस्पर सम्बन्ध विद्युत्-ग्रिड के शक्ति-तारों द्वारा स्थापित किया गया है जो स्वयं जल-विद्युत् संयंत्र और शक्ति-केन्द्रों से सयोजित किये जा सकते है जिन्हे ऊर्जा किसी दूसरे साधन जैसे इंधन-तैल या प्राकृतिक-गैस से मिलती है। प्राकृतिक गैस, कोक-भ्राष्ट्र गैस या कोयला-गैस भी इसी प्रकार ग्रिड-पद्धति द्वारा सारे देश में भेजी जा सकती है। जहाँ प्राप्य हो, वहाँ तैल देश भर में नल-पाँतों[4] द्वारा ले जाया जा

1. Belting 2. Shaft 3. Ventilation 4. Pipe-lines

सकता है। कोयला रेलो द्वारा ले जाया जाता है और तैल से उत्पादित पदार्थ नित्य रेल-कारो और टैंक-लारियो द्वारा ले जाये जाते है।

जिन देशो में इस प्रकार खनिज पदार्थ पाये जाते है और जो शक्ति के प्रदाय से उपजाऊ बने है, उन्ही में संसार की सम्पत्ति पायी जाती है। शक्ति द्वारा कच्चे पदार्थ वस्तुओ मे रूपान्तरित होते है जिनका उपयोग वही हो जाता है या दूसरे देशो से उनका व्यापार किया जाता है। कई कमरों के घर, अच्छा फरनीचर, दूरवीक्षण-सेट,[1] मोटर बाईसिकिल, और कार श्रमिको की सम्पत्ति है; वे मांस खाते है और मदिरा पान करते है। खेतों को पेट्रोल, विद्युत् और सूर्य की किरणो के रूप में शक्ति मिलती है। शक्ति द्वारा वायु और जल से खाद बनाया जाता है जिससे मनुष्य भूमि के हर एकड से अधिक भोजन प्राप्त करने में सफल होता है। शक्ति की सहायता से एक मनुष्य कई एकड भूमि में खेती कर सकता है और सुख से रह सकता है।

जहाँ शक्ति नही आती, या जल और थल के ऊपर से बहुत दूरी से लाये जाने के कारण केवल स्वल्प मात्राओ में और उच्च व्यय पर आती है, वहाँ मनुष्य अपने हाथों द्वारा जो कुछ कर सकता है उसी पर उसे रहना पड़ता है। यही कारण है कि एशिया की विशाल जनसंख्या को सदैव अकाल का संकट बना रहता है, वहाँ अधिकतर मनुष्य झोपडियों और कुटियों में रहते है, उन्हें अल्पाहार ही मिलता है और उनकी सम्पत्ति बहुत ही कम होती है; अफरीका और ब्राजिल मे हमे बहुत सी भूमि अकृष्ट पडी दिखाई देती है जहाँ मनुष्य अभी तक प्रकृति को अपनी इच्छा के अधीन नही कर पाया है। ससार के शक्ति के साधनो के विकास का प्रक्रम अभी तक चल रहा है और दूसरा हर प्रकार का विकास इसके पीछे होगा।

किसी भी दूसरे समय शक्ति की समस्या उतनी तीक्ष्ण नही होती जितनी कि युद्ध-काल में। उस समय उद्योग-धधो मे उनकी अत्यधिक क्षमता के अनुसार कार्य होता है। परिवहन की आवश्यकताएँ बहुत अधिक हो जाती है और युद्ध के गमनशील शस्त्र-टैंक, वायुयान और जलपोत अपनी अधिकतम माँग करते है। संयंत्रो को नष्ट करके और परिवहन मे बाधाएँ डालकर विपक्षी तुरन्त एक दूसरे को शक्ति का उपयोग करने से रोकने का प्रयत्न करते है। अभी कोयले की खानें काफी सुरक्षित है और एक ग्रिड-पद्धति में किसी क्षेत्र से विद्युत् शक्ति को अधिक समय के लिए काटना कठिन है और न ही १९३९–४५ के युद्ध में थल-परिवहन में गंभीर विघ्न डालना संभव पाया गया।

1. Tel evision

इंग्लैण्ड जैसे देशो के लिए जिनके तैल-संसाधन कम है, तैल का प्रदाय अत्यावश्यक और साथ ही साथ बेधनीय[1] प्रतीत होता है। सश्लिष्ट[2] तैल युद्धकाल की मॉग कदाचित् ही पूरी कर सकता है और इसीलिए तैल को अशोधित या शोधित रूप में समुद्र पार से लाना पड़ेगा और पन-डुब्बी किश्तियो के खतरे का सामना करना होगा जब तक कि प्लूटो[3] योजना की अन्तर्जल[4] नल रेखाएँ उतनी दूरी तक न फैल जायँ जिसकी अभी कल्पना भी नहीं की गयी है। इस समस्या का हल खोजना अभी शेष है।

भविष्य

नये आविष्कारो के कारण जिनका पहिले से कोई अनुमान नही लगा सकता, विज्ञान और उद्योग-धंधों के भविष्य के बारे मे भविष्य वाणी करना मूर्खता होगी। फिर भी यह निरर्थक नहीं है, क्योंकि जितना ज्ञान हमारे पास है, हमें उमी से अनुमान लगाना है। अत: इंधन और शक्ति के क्षेत्र मे उस परिवर्तन की पूर्व-कल्पना का प्रयत्न सार्थक हो सकता है जिसकी एक ज्ञानवान मनुष्य वर्तमान राजनीतिक और वैज्ञानिक परिस्थितियों से अनुमान लगाने की आशा कर सकता है।

सर्वप्रथम, संसार की ऊर्जा की माँग दो शताब्दियों से बराबर बढ रही है और इसके बढ़ते रहने की निश्चित प्रत्याशा की जा सकती है। उद्योग–प्रधान देशों को प्रति वर्ष अधिकाधिक शक्ति की आवश्यकता पडती है और नये-नये देशों का औद्योगिकीकरण[5] हो रहा है। तो हमें न केवल शक्ति के वर्तमान उत्पादन को स्थिर रखने की बल्कि इसमें वृद्धि की भी आशा करनी चाहिए। वृद्धि की किस दर की हम आशा कर सकते है, इसका अनुमान लगाना कठिन है किन्तु यदि संसार का औद्योगिकीकरण अमेरिका के स्तर पर हो, तो इसके लिए प्रतिवर्ष सम्भवत: शक्ति की वर्तमान मात्रा की पाँच-गुनी शक्ति की आवश्यकता होगी और यदि यह सम्भव हो सके—मै यह नहीं कहता कि यह हो सकता है—तो संसार के संसाधन भी औद्योगिकीकरण के तदनुरूप, एक अधिक तीव्र दर से व्यय हो जायेगे और यदि दशाब्दियों में नही,तो कुछ शताब्दियों के काल में ही तैल और कोयले की अनुपूर्ति दूसरे साधनों द्वारा करनी पड़ेगी।

वर्तमान समय में संसार की शक्ति का मुख्य साधन कोयला है जिसका जखीरा इतना है कि वर्तमान दर पर वह कदाचित् २००० वर्ष तक संसार के लिए पर्याप्त हो सकता है। किन्तु संसार में इन ससाधनों का वितरण बहुत ही असमान रूप से है।

1. Vulnerable 2. Synthetic 3. Pluto scheme 4. Underwater. 5. Industrialization.

कुछ देशो में कोयला और तैल है ही नही या अल्प मात्रा मे है और उन्हें अपने पड़ोसी देशों से इन्हे मोल लेना पडता है, और कुछ देश इंधन के सभी स्रोतों से इतनी दूर हैं कि वे संभवतः इनका अधिक उपयोग कभी न कर पायेंगे। इसीलिए हम अपने २००० वर्ष के संसाधनों से संतोष नही पा सकते और उनके कारण शक्ति के दूसरे साधनो की खोज बन्द नही कर सकते। इसके अतिरिक्त कोयले का उत्पादन बढ़ाना भी कठिन है। कुछ समय से खनन के प्रति लोग अपनी बढ़ती हुई अरुचि प्रकट कर रहे है; खानें खाली-हो जाती है और नयी खानों के लिए बहुत पूँजी की आवश्यकता होती है। यही कारण है कि कोयले के भविष्य के बारे में एक बेचैनी है। ऐसी परिस्थिति में हमें दो विरोधी प्रवृत्तियाँ दिखाई देती हैं, एक ओर सिवाय उस अवस्था के जब कि उन्हें इतना अधिक प्रतिफल मिले कि उससे कोयले का उपयोग ही परिमित हो जाये, खानों में गहराई तक जाने की खनकों की अनिच्छा; दूसरी ओर खनन-कार्य में विज्ञान का उपयोग जिससे खनक इस योग्य हो जाये कि वह अधिक कोयला अधिक सरलता से काट सके और उसी के अनुरूप उसे अधिक मजदूरी मिले। यदि हम दशाब्दियों में सोचें, तो यह प्रवृत्ति कि कोयले के उद्योग का पतन हो रहा है, अनुचित है, किन्तु यदि शदाब्दियों मे सोचा जाय तो हमें यह प्रत्याशा अवश्य रखनी चाहिए कि कोयले का गर्त-खनन नित्य अधिक कठिन होता जायगा और उसकी किस्म नित्य अधिक घटिया होती जायेगी। किन्तु विज्ञान के पास अभी बहुत समय है जिसमें कोयले का अकाल पड़ने से पहिले ही न्ये साधनो को खोजा जा सकता है।

कोयले के ससाधनो की अपेक्षा तैल के संसाधनो के बहुत कम होनेका अनुमान सामान्यतः लगाया जाता है किन्तु इसकी खपत बड़ी तेजी से बढ़ रही है। इंधन के रूप मे तैल और प्राकृतिक गैस इतने सुविधाजनक है कि अब अमेरिका में कोयले की अपेक्षा उनसे अधिक शक्ति प्राप्त की जाती है; कोयले का उपयोग, खनन की अनुकूल परिस्थिति होते हुए भी, सचमुच ही कुछ घट गया है। जिस शीघ्रता से वर्तमान तैल-क्षेत्र खाली होते जा रहे है उसी शीघ्रता से नये तैल-क्षेत्रों की खोज हो रही है। तैल की विश्व-व्यापी खोज जिस परिमाण में हो रही है वैसी पहिले कभी नही हुई और तैल के परीक्षित जखीरे, विशेषकर मध्य-पूर्व में, निरन्तर बढ़ रहे हैं। यद्यपि तैल एक क्षय होनेवाली सम्पत्ति है, फिर भी यह कहना दुःसाहस न होगा कि आनेवाले बहुत समय के लिए संसार की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त मात्रा में तैल प्राप्य हो सकेगा। उदाहरणार्थ, यद्यपि परीक्षित जखीरो (अर्थात वे जखीरे निश्चित रूप से जिनकी खोज और माप हो चुकी है) से प्रत्याशा है कि खपत की वर्तमान दर पर वे अभी तीस वर्ष के लिए और पर्याप्त होंगे,

यह निश्चित है कि जिन जखीरों की अभी खोज नहीं हो पायी है, उनसे मिलनेवाला तैल कई गुने काल तक की आवश्यकता पूरी करता रहेगा। यदि फिर भी द्रव-इंधन की माँग रही, और यह मान लेना कठिन है कि मॉग न रहेगी, तो हम यह मान सकते हैं कि कोयले को तैल में परिवर्तित किया जायेगा और इस कारण कोयले के जखीरे अधिक तेजी से खाली होते जायेंगे।

हमारे पास प्राप्त ऊर्जा का एक दूसरा महत्त्वपूर्ण साधन, अर्थात् नाभिकीय ऊर्जा है और वर्तमान युगकी दृष्टि नाभिकीय प्रतिक्रिया से ऊर्जा के उत्पादनकी सम्भावनाओं पर लगी हुई है। वर्तमान समय मे ये यूरेनियम पर निर्भर करती है जिसके जखीरे अनन्त नही हैं और वे संसार को कई दशाब्दो तक शक्ति प्रदान नहीं कर सकते। किन्तु हाइड्रोजन बम अब एक तथ्य है और हम जानते है कि हाइड्रोजन के समस्थानिकों, डियुट्रियम और ट्राईटियम, से अपार ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है, जिनका प्रदाय अनन्त है। अभी तक हमें किसी ऐसे साधन का कोई संकेत नही मिला है जिससे इस ऊर्जा का निकास स्थिर और सुगम रूप से किया जा सके, किन्तु यह मान लेना कठिन है कि इस समस्या का हल नही हो सकता। यदि इसे हल किया जा सका, तो सूर्य के समान, पृथ्वी का शक्ति-प्रदाय भी अनन्त हो जायेगा। यदि इस साधन का उपयोग हो सका, तो प्रत्येक देश को सस्ती शक्ति का आशीर्वाद मिल जायेगा, क्योंकि हाइड्रोजन हर कहीं मिलता है। संसार के विशाल अकृष्ट प्रदेशो में कृषि करने के लिए शक्ति और खाद के उपयोग से संसार की वर्तमान जनसंख्या के कम-से-कम दुगुनी जनसंख्याको भोजन मिल सकेगा और दूसरी वस्तुएँ मिलेगी, तथा विज्ञान से जो कुछ सर्वोत्तम मिल सकता है, वह भी मिलेगा।

तो, इंधन की हमारी वर्तमान व्ययशील पूँजी के बारे में इतना कहना पर्याप्त है। जब तक हम हाइड्रोजन और इसके समस्थानकों[1] जैसे साधारण परमाणुओं की नाभिकियो से ऊर्जा का निकास नही कर सकते, हमारे साधन शीघ्र या कुछ देर से समाप्त हो जायेंगे और हमारी संतानो को वायु और जल से मिलनेवाली शक्ति पर जीवित रहना पड़ेगा।

फिर, यदि संसार की पूर्ण जलशक्ति को उपयोग में लाया जा सके, तो भी इससे कदाचित कुल उतनी ऊर्जा भी न मिलेगी जितनी कि इन दिनो हम व्यय करते है, उसका तो प्रश्न ही नही जिसकी हमारे वंशजो को आवश्यकता होगी। हम अनुमान लगा सकते हैं

1. Isotopes

कि ऐसी स्थिति में उद्योग-धंधे उन्ही क्षेत्रों को पसन्द करेंगे जहाँ जल-शक्ति का उपयोग हो सकेगा। हम यह देखने की प्रत्याशा करेंगे कि एशिया के बडे पर्वतीय 'समूह' जल-शक्ति के स्रोत बन जायेंगे जिन्हे भारतवर्ष, बरमा और चीन के वे करोड़ों मनुष्य उपयोग मे लायेंगे जो शीघ्र ही पश्चिम की प्रौद्योगिक-क्षमता प्राप्त कर लेंगे। एण्डीज के पूर्वी किनारे प्राय. निर्जन बने रहने के स्थान पर, बड़े औद्योगिक क्षेत्र बन जायेंगे और इमी के अनुरूप यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका में भी जल-शक्ति के साधनो की ओर लोगों का जाकर बसना आरम्भ हो जायेगा। किस समय तक वर्तमान क्षेत्र त्याग दिये जायेंगे, यह विद्युत् सचरण की प्रगति पर निर्भर करेगा। सम्भवत:, कोयले के घटते हुए जखीरो का उपयोग केवल रासायनिक उद्देश्यों के लिए किया जायेगा—धातुओ का प्रद्रावण[1] करने और कार्बन यौगिकों को जुटाने के लिए। निस्सन्देह वैद्युत-इंजीनियर विद्युत् के संचरण का मार्ग, कम घाटे के साथ, कदाचित द्रव-हीलियम में शीतल किये हुए **अति-**चालकों[2] में से खोज निकालेंगे। यदि ऐसा हुआ तो कच्चे माल को विद्युत् तक ले जाने की अपेक्षा विद्युत् को हजारों मील दूर कच्चे माल तक ले जाने में कम व्यय होगा।

फिर भी यदि यह मान लिया जाय कि ससार की सारी जल-शक्ति का उपयोग हो सकेगा, तो भी यह एक ऐसे संसार के लिए पर्याप्त न होगी जिसे हमारे ससार से बहुत अधिक शक्ति की तृष्णा होगी। अवशेष भाग को पवन, ज्वार भाटा, पार्थिव[3] और सौर उष्मा या परमाणुओं की नाभिकियो से लेना पडेगा। पहिले चार साधनो मे से आज कोई भी बहुत आकर्षक नही लगता, किन्तु यदि आवश्यकता हुई तो यह प्राय: निश्चित प्रतीत होता है कि पवन-शक्ति सरलतासे और ज्वार-भाटे की शक्ति अधिक कठिनाई से विकसित की जा सकेगी जिससे इनके द्वारा शक्ति का एक वास्तविक अश-दान मिल सकेगा। किन्तु हमारा अन्तिम प्रश्न निरन्तर यही रहना चाहिए कि "हलके परमाणुओं की नाभिकियों से क्या किया जा सकता है ?" और इसका उत्तर आने-वाले दशाब्द मे और अधिक स्पष्ट हो जायेगा।

अन्त में, यद्यपि संसार में इंधन और शक्ति की परिस्थिति वैज्ञानिक और औद्योगिक दृष्टिकोण से ऐसी नही है जिसके कारण चिन्ता उत्पन्न हो, फिर भी उन पर विस्तृत और निरन्तर गवेषणा की आवश्यकता है, और इसकी चेष्टा हो ही रही है। कुछ कठिनाइयाँ है और रहेंगी जो निस्सन्देह तीक्ष्णता से अनुभव की जाती हैं, किन्तु आवश्यक शक्ति प्राप्त करने और निरन्तर उसका प्रदाय बढ़ाने का साधन मनुष्य के अपने हाथों में है।

1. Smelting 2. Superconductors 3. terres-terial

वर्तमान बाधा उसके भूत की देन है, राष्ट्रीयता के कारण स्वार्थ और पृथक्ता की ऐसी भावना का उत्पन्न हो जाना जो संसार की आवश्यकता-पूर्ति के लिए ससार के ससाधनों के उचित उपयोग में बाधक है ।

पारिभाषिक शब्दावली

अ

अंकनीय dial
अंतर्दहन internal combustion
अक्रिय inert
अग्निकर्मा fireman
अग्निनलिका firetube
अणु molecule
(दे० परमाणु)
अणुवीक्षणीय microscopic
अतिचालक superconductor
अनावृत-क्षेपण-पद्धति open cast system
अनुकूलतम optimum
अनुवेधक injector
अनुवेधन injection
अनुवेधन करना inject
अन्वेषण prospecting
अपकेन्द्र centrifugal
अपचायी stepdown
अभिजनक रिऐक्टर breeder-reacter
अभिन्यास layout
अयस्क ore
अवकरण reduction
अवकृत reduced
अवक्षेप deposit
अवयव constituent ; fraction; parts
अशोधित crude ; raw
अशोधित अवस्था raw condition
अश्वशक्ति horse-power

आ

आन्तरायिक intermittent
आक्सिजन-इतरजीवी anacrobic
आक्सीकरण oxidation
आच्छादन lagging
आपरीक्षण survey
आवरण coating
आवेग वरीवर्त impulse turbine
आसवन distillation
आसवन यंत्र still
आसुत distilled
आस्तरण lining

इ

इंधनकीप fuel hopper
इक्षुशर्करा sucrose
इष्टक caking

ई

ईषा shaft

उ

उच्च आवृत्ति तरंग high frequency waves

उच्चालक हस्त jib
उत्खनन quarrying
उत्तोलक इंजन winding engine
उत्प्रेरक catalyst
उत्सर्जन emission
उदलिक प्रनाड hydraulic main
उद्दीप्ति glow
उपकरण equipment
उपजात by-product
उपनगरीय suburban
उपलब्धि (प्रदाय) supply
उष्णतासह, दे० "उष्मासह"
उष्मा (ऊष्मा) heat
उष्मासह refractory (रघु०)
उष्मीय मान calorific value
उष्मोर्जा heat energy

ऊ

ऊतक tissue
ऊर्जा energy
ऊर्ध्वाधर vertical

ए

एककोशीय single-celled
एकान्तरिक alternator

क

कन्दुक पेषणी ballmill
करण tool
कर्मण्यित activated
कलिल colloid
कवचन casing
कवोष्ण warm
काई algae
काच भ्राष्ट्र glass furnace
कार्बनिक द्रव्य organic matter
किण्वन fermentation
कीलक wedge
कोयलामार्जक coal-cleaner
कोशिका cell
क्रमिक successive
क्षरण seepages
क्षितिजखनन horizon-mining
क्षुद्रइष्टक briquettes
क्षैतिज horizontal

ख

खनन mining
खनिजांगार lignite लिगनाइट
खनित्र picks

ग

गठन composition
गतिज ऊर्जा kinetic energy
गतिवाहक gearing;–box गतिवाहक बक्सा
गर्त अवलंबन pit-props
गर्त खनन winning
गर्तशीर्ष pit-head
गलनबिंदु fusion point
गवेषणा research
गुरुत्वाकर्षण gravitation
गैसदीपावार gas-mantle
ग्रंथि-पिड gland

घ

घटक factor

घूर्णक rotor
घूर्णन rotating

च

चक्रछिद्रण rotary drilling
चूर्णनीय friable (अवचूर्ण्य)
च्याव leakage

छ

छिद्रक drill
छिद्रण drilling

ज

जनित्र generator
जलनिचोल water-jacket
जीवाणु organism
ज्वलनशील गैस inflammable gas
ज्वालक burner

झ

झर्झरी grate

ड

डामर pitch

त

तंतुदीप filament
तत्त्व elements
तत्त्वान्तरण transmutation
तरंग-दैर्घ्य wave-length
तापक heater
तापदीप्त incandescent
तारकोल tarry
तुगता altitude
तुड nozzle
तैल उत्तोलक oil derrick
तैलकारी olefines
तोरण arches, anticline
त्वरण acceleration

द

दाह्य combustible
दीर्घ-प्राचीर पद्धति long wall system
द्रुतविमोचन quick liberation
द्रोणी tub
द्वाण, द्विपरमाणु diatoms

ध

धराणिक अम्ल humic acid
धातुकार्मिक matallurgical
धातुगालन कार्य foundries
धातुविद्या metallurgy
धातुशोधक metallurgist
धात्र armature
धारिता capacity
धावक runner

न

नग्नीकारक stripper
नम्यता flexibility
नलपक्ति, नलपाँत pipe-line
नाभिक nucleus
नाभिकीय nuclear
नि:सरण winning (गर्त्तखनन)
निक्षेप deposit
निमज्जन sinking
नियामक regulator
निरापददीप safety lamp

निर्वात vacuum
निर्वापन कार quenching car
निष्कर्षण extraction
निष्कासक exhauster
नोदन (प्रणोदन) propulsion
न्यास data

प

पंकवायु firedamp
पतनाड penstock
परम शून्य absolute zero
परमाणु atom, दे० अणु
परिकुंचित mummified
परिणामित्र transformer
परिवहन transport
परिवाहक conveyor
परिष्करणी refinery
परीक्षण experiment
पर्णहरित chlorophyll
पल्लल alluvium
पश्चाग्रगतिवाले reciprocating
पादछिद्रगण foraminifer
पायस emulsion
पारगमन transmission
पारनील लोहित ultraviolet
पीट-जलभूमि peat bog
पीत उष्मा yellow heat
पुरावशेषीभूत fossilised
पुरुभाजित polymerized
प्रकाश संश्लेषण photo-synthesis
प्रक्रम process
प्रक्रिया mechanism
प्रक्षिप्त projectile
प्रक्षुब्धता turbulence
प्रभार charge
प्रज्वलित ignited
प्रणाली channel
प्रणोदक propellants (गतिप्रेरक)
प्रणोदन propulsion
प्रताडन percussion
प्रतिक्रिया reaction
प्रतिक्रियाशील reactive
प्रतिदीप्त नलियाँ fluorescent tubes
प्रतिरूप type; model
प्रति विस्फोट antiknock
प्रतिस्थापक substitute
प्रत्यावर्ती धारा alternating current
प्रत्यास्थ संघात elastic collision
प्रदाय supply (रघु०), उपलब्धि
प्रद्रावण smelting
प्रद्रावित smelted
प्रधारा jet
प्रमाप standard
प्ररचना design
प्रविकिरण irradiation
प्रविधि technique
प्रवेषण आघात induction stroke
प्रवेशमार्ग inlet
प्रशीतक refrigerator
प्रस्तम्भ pylons
प्रस्फोटक detonator

प्रस्रवण springs
प्रामाणिक standard
प्रामाणिकीकरण standardize
प्रौद्योगिक technological

फ

फल (फाल) bit

ब

बक यन्त्र retort
बालुशिला sandstone

भ

भंजन cracking
भाप प्रधार steamjet
भाप-वाष्पित्र steam-boiler
भूगर्भीय subterranian
भूतत्त्व वैज्ञानिक geologist
भूपटल earth's crust
भौतिकी physics

म

मंजूषन casing, दे. कवचन
मध्यमान average figure
मशीनी हल caterpillar
मार्जक scrubber
मितव्ययक economizer
मिश्रण mixture
मिश्र धातु alloy
मृत्तिका उद्योग ceramics

य

यौगिक compounds

र

रक्त उष्मा red heat
रज्जु खिचाई rope hauling
रसद्रव्य chemicals
रेचित exhausted

ल

लघु परिपथ short circuiting
लवण जल brine
लिखिज graphite
लोह अयस्क ore of iron

व

वरीवर्त turbine
वरीवर्त घूर्णक turbine rotor
वलयाकार annular
वस्त्र तन्तु textile fibre
वातणनित्र दे० वातिणनित्र
वातभ्राष्ट्र blast furnace
वाति छिद्र vent (रघु०)
वातिजनित्र aero-generator (रघु०)
वातिधारक gas-holder (रघु०)
वायुचलन दे० संवातन
वास्तुकार architect
वाष्पशील volatile
वाष्पित्र boiler
,, नलिका boiler tube
वाष्पण evaporation
विकिरक radiator
विकिरण radiation
विकृति strain
विच्छेदन decomposition
विदारित fissured
विद्युदगामक बल electro-motive force

विद्युदग्र electrode
विलयन solution
विलायक solvent
विश्लेषण analysis
वेधरन्ध्र borehole
वैद्युत सगलक electric fuse

श

शक्तिकेन्द्र power-station
शक्ति सयन्त्र power plant
शिरापथ ; run-of the mine
शिलास्तर (शिलिका) shale
शीकरित sprayed
शीतक cooler
शीतकक्ष cold chamber
श्यानता viscosity
श्वेततप्त white-hot

स

संकीर्ण (विश्लेषण) complex
संक्षारक corrosive
संघनित्र condenser
सचय reserve
सचरण transmission
सचायक accumulator
संधारित्र condenser, संघनित्र
सनिधि (सचित राशि) pool
सपरिवर्तित modified
सपीडक compressor
सपीडित compressed
सयन्त्र plant
संरचना structure, work
संवहन convection
सवातन ventilation
ससाधन resources
ससृष्टि organism
संस्थापन installation
सहित mass (पिण्ड)
समक्रमिक जनित्र synchronous generators
समस्थानक isotopes
सरन्ध्र porous
सांद्रित concentrated
सूर्यवाष्पित्र sunboilor
सौर ऊर्जा solar energy
स्तर seams
स्तूप stack
स्थितिज ऊर्जा potential energy
स्नेहन lubricating
स्फोटन knocking
स्राव secretion; ooze
स्रोत source

ह

हरितकणक chloroplast
हिमाक freezing point
हिमीकरण freezing